भावार्थ—सचित्त [सजीव वस्तु] का संग्रह और अचित्त [अजीव वस्तु] का संग्रह ऐसे जो दो प्रकार के परिग्रह हैं, उनके निमित्त सावद्य आरम्भ वाली—प्रवृत्ति की गई हो, इस गाथा में उसकी समुच्चयरूप से आलोचना है ॥३।

जं बद्धमिदिएहिं, चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहि।
रागेण व दोसेण व, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४॥

अन्वयार्थ—'अप्पसत्थेहिं' अप्रशस्त 'चउहिं' चार 'कसाएहिं' कषायों से 'व' अर्थात् 'रागेण' राग से 'व' या 'दोसेण' दोष से 'इन्दिएहिं' इन्द्रियों के द्वारा 'जं' जो [पाप] 'बद्ध' बाँधा 'त' उसकी 'निंदे' निन्दा करता हूँ, 'च' और 'तं' उसको 'गरिहामि' गर्हा करता हूँ ॥४॥

भावार्थ—क्रोध, मान, माया और लोभ स्वरूप जो चार अप्रशस्त (तीव्र) कषाय हैं, उनके अर्थात् राग और द्वेष के वश होकर अथवा इन्द्रियों के विकारों के वश होकर जो पाप का बन्ध किया जाता है, उसकी इस गाथा में आलोचना की गई है ॥४॥

आगमणे, निग्गम ठाणे चंकमणे [य] अणाभोगे।
अभिओगे अ निओगे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥५॥

अन्वयार्थ—'अणाभोगे' अनुपयोग से 'अभिओगे' दबाव से 'अ' और 'निओगे' नियोग से 'आगमणे' आने में 'निग्गमणे' जाने में 'ठाणे' ठहरने में 'चंकमणे' घूमने में जो 'देसिअं' दैनिक [दूषण लगा] 'सव्वं' उस सबसे 'पडिक्कमे' निवृत्त होता हूँ ॥५॥

भावार्थ—उपयोग न रहने के कारण, या राजा आदि किसी बड़े पुरुष के दबाव के कारण, या नौकरी आदि की परा-

(१) वीतराग के वचन पर निर्मूल शंका करना शङ्कातिचार[1], (२) अहितकारी मत को चाहना कङ्क्षातिचार, (३) धर्म का फल मिलेगा या नहीं—ऐसा सन्देह करना या निस्पृह त्यागी महात्माओं के मलिन वस्त्र पात्र आदि को देख उन पर घृणा करना विचिकित्सातिचार, (४) मिथ्यात्वियों की प्रशंसा करना जिससे कि मिथ्याभाव की पुष्टि हो कुलिङ्गिप्रशंसातिचार, और (५) बनावटी वेस पहन कर धर्म के बहाने लोगों को धोखा देने वाले पाखण्डियों का परिचय करना कुलिङ्गसस्तवातिचार ॥६॥

[आरम्भ जन्य दोषों की आलोचना]

छक्कायसमारंभे, पयणे अ पयावणे अ जे दोसा।
अत्तट्ठा य परट्ठा, उभयट्ठा चेव तं निंदे ॥७॥

अन्वयार्थ—'अत्तट्ठा' अपने लिये 'परट्ठा' पर के लिये 'य' और 'उभयट्ठा' दोनों के लिये 'पयणे' पकाने में 'अ' तथा 'पयावणे' पकवाने में 'छक्कायसमारंभे' छह काय के आरम्भ से 'जं' जो 'दोसा' दोष [लगे] 'तं' उनकी 'चेव' अवश्य 'निंदे' निन्दा करता हूँ ॥७॥

भावार्थ—अपने लिये या पर के लिये या दोनों के लिये कुछ पकाने, पकवाने में छह काय की विराधना होने से जो दोष लगते हैं उनकी इस गाथा में आलोचना है ॥७॥

---

[1] शङ्का आदि से तत्त्व रुचि चलित हो जाती है इसलिये ये [सम्]यक्त्व के अतिचार कहे जाते हैं।

वह बंध छविच्छेए, अइभारे भत्तपाणवुच्छेए।

पढमवयस्सइआरे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१०॥

अन्वयार्थ—'इत्थ' इस 'थूलग' स्थूल 'पाणाइवायविरईओ' प्राणातिपात-विरतिरूप 'पढमे' पहले 'अणुव्वयम्मि' अणुव्रत

जितने काल के लिये ये व्रत लिए जाते हैं उतने काल तक इनका पालन निरन्तर किया जाता है। पिछले चार इत्वरिक हैं अर्थात् जितने काल के लिए ये व्रत लिए जाँय उतने काल तक उनका पालन निरन्तर नहीं किया जाता, सामायिक और देशावकाशिक ये दो प्रतिदिन लिए जाते हैं; और पौषध तथा अतिथि संविभाग ये दो व्रत अष्टमी चतुर्दशी पर्व आदि विशेष दिनों में लिए जाते हैं। [आवश्यक सूत्र पृष्ट ८३८]

* प्रथमेऽणुव्रते, स्थूलकप्राणातिपातविरतितः ।
आचरितमप्रशस्तेऽत्र प्रमादप्रसंगेन ॥ ९ ॥
वधो बन्धश्छविच्छेदः, अतिभारो भक्तपानव्यवच्छेदः ।
प्रथमव्रतस्यातिचारान्, प्रतिक्रामामि दैवसिकं सर्वम् ॥१०॥

+ पहले व्रत में यद्यपि शब्दतः प्राणों के अतिपात—विनाश का ही प्रत्याख्यान किया जाता है, तथापि विनाश के कारणभूत वध आदि क्रियाओं का त्याग भी इस व्रत में गर्भित है। वध, बन्ध आदि करने से प्राणी को केवल कष्ट पहुँचता है, प्राण नाश नहीं होता। इसलिये बाह्य दृष्टि से देखने पर उसमें हिंसा नहीं है, पर कषाय पूर्वक निर्दय व्यवहार किये जाने के कारण अन्तर्दृष्टि से देखने पर उसमें हिंसा का अंश है। इस प्रकार वध, बन्ध आदि से प्रथम व्रत का मात्र देशतः भंग होता है। इस कारण वध, बन्ध आदि ये पहले व्रत के अतिचार हैं [पञ्चाशक १, पृष्ठ १०]

हिंसा लग ही जाती है जो सापेक्ष है; इसलिये वह निरपेक्ष अर्थात् जिसको कोई भी जरूरत नहीं है ऐसी निरर्थक हिंसा का ही पच्चक्खाण करता है। यही स्थूल प्राणातिपात विरमणरूप प्रथम अणुव्रत है।

इस व्रत में जो क्रियाएँ अतिचाररूप होने से त्यागने योग्य हैं उनकी इन दो गाथाओं में आलोचना है। वे अतिचार ये हैं:-

(१) मनुष्य, पशु पक्षी आदि प्राणियों को चाबुक, लकड़ी आदि से पीटना, (२) उनको रस्सी आदि से बाँधना, (३) उन के नाक, कान आदि अङ्गों को छेदना, (४) उन पर परिमाण से अधिक बोझा लादना और (५) उनके खाने पीने में रुकावट पहुँचाना ॥ ६ ॥१ ॥

[दूसरे अणुव्रत के अतिचारों की आलोचना]

बीए अणुव्वयम्मि, परिथूलगअलियवयणविरईओ।
आयरि अमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥११॥
सहसा-रहस्सदारे, मोसुवएसे अ कूडलेहे अ।
बीयवयस्सइआरे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१२॥

अन्वयार्थ—'परिथूलगअलियवयणविरईओ' स्थूल असत्य वचन की विरति रूप 'इत्थ' इस 'बीए' दुसरे 'अणुव्वयम्मि' अणुव्रत के विषय में 'पमायप्पसंगेणं' प्रमाद के वश होकर 'अमप्पसत्थे' अप्रशस्त 'आयरिअं' आचरण किया हो [जैसे]:—

हिंसा लग ही जाती है जो सापेक्ष है; इसलिये वह निरपेक्ष अर्थात् जिसको कोई भी जरूरत नहीं है ऐसी निरर्थक हिंसा का ही पच्चक्खाण करता है। यही स्थूल प्राणातिपात विरमणरूप प्रथम अणुव्रत है।

इस व्रत में जो क्रियाएँ अतिचाररूप होने से त्यागने योग्य हैं उनकी इन दो गाथाओं में आलोचना है। वे अतिचार ये हैं:

(१) मनुष्य, पशु पक्षी आदि प्राणियों को चाबुक, लकड़ी आदि से पीटना, (२) उनको रस्सी आदि से बाँधना, (३) उन के नाक, कान आदि अङ्गों को छेदना, (४) उन पर परिमाण से अधिक बोझा लादना और (५) उनके खाने पीने में रुकावट पहुँचाना ॥ ६ ॥१ ॥

[दूसरे अणुव्रत के अतिचारों की आलोचना]

बीए अणुव्वयम्मि, परिथूलगअलियवयणविरईओ ।
आयरि अमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥११॥
सहसा-रहस्सदारे, मोसुवएसे अ कूडलेहे अ ।
बीयवयस्सइआरे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१२॥

अन्वयार्थ—'परिथूलगअलियवयणविरईओ' स्थूल असत्य वचन की विरति रूप 'इत्थ' इस 'बीए' दुसरे 'अणुव्वयम्मि' अणुव्रत के विषय में 'पमायप्पसंगेणं' प्रमाद के वश होकर 'अमप्पसत्थे' अप्रशस्त 'आयरिअं' आचरण किया हो [जैसे]:-

असत्य उपदेश देना और (५) झूठे लेख (दस्तावेज लिखना ॥ ११ ॥ १२ ॥

[तीसरे अणुव्रत के अतिचारों की आलोचना]

*तइए अणुव्वयम्मि, थूलगपरदव्वहरण-विरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ १३ ॥
तेनाहडप्पओगे, तप्पडिरुवे विरुद्ध गमणे अ।
कूडतुलकूडमाणे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१४॥

अन्वयार्थ—'थूलगपरदव्वहरणविरईओ' स्थूल पर-द्रव्य हरण विरति रूप 'इत्थ' इस 'तइए' तीसरे 'अणुव्वयम्मि' अणुव्रत के विषय में 'पमायप्पसंगेणं' प्रमाद के वश होकर 'अप्पसत्थे' अप्रशस्त 'आयरिअं' आचरण किया ; [जैसे] 'तेनाहडप्पओगे' चोर की लाई हुई वस्तु का प्रयोग करना—उसे खरीदना 'तप्पडिरूवे' असली वस्तु दिखला कर नकली देना 'विरूद्धगमणे' राज्य-विरुद्ध प्रवृत्ति करना, 'कुडतुल' झूठी तराजू रखना, 'अ

---

* तृतीयेऽणुव्रते, स्थलकपर द्रव्यहरणविरतितः।
आचरितमप्रशस्ते, ऽत्र प्रमादप्रसंगेन ॥ १३ ॥
स्तेनाहृतप्रयोगे, तत्प्रतिरूपे विरुद्धगमने च।
कूटतुलाकटमाने प्रतिक्रामामि दैवसिकं सर्वम् ॥ १४ ॥

* थलादत्तादाणवेरमणस्स समणोवासएणं इमे पंच०, तं जहा—तेनाहडे तक्करपओगे विरुद्धरज्जाइक्कमणे कूडतुलकुडमाणे तप्पडिरूवगववहारे [आवश्यक सूत्र पृष्ठ ८२२

(चौथे अणुव्रत के अतिचारों की आलोचना)

*चउत्थे अणुव्वयम्मि, निच्चं परदारगमणविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ १५ ॥
अपरिग्गहिआ इत्तर, अणंगवीवाहतिव्वअणुरागे।
चउत्थ वयस्सइआरे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१६॥‡

अन्वयार्थ—'परदारगमणविरईओ' *पर स्त्री गमन विरति-रूप 'इत्थ' इस 'चउत्थे' चौथे 'अणुव्वयम्मि' अणुव्रत के विषय में 'पमायप्पसंगेणं' प्रमाद-वश होकर 'निच्चं' नित्य 'अप्पसत्थे' अप्रशस्त 'आयरिअं' आचरण किया। जैसे :—'अपरिग्गहिआ' नहीं व्याही हुई स्त्री के साथ सम्बन्ध, 'इत्तर' किसी की थोड़े वक्त तक रक्खी हुई स्त्री के साथ सम्बन्ध, 'अणंग' काम-क्रीडा 'वीवाह' विवाह-सम्बन्ध, 'तिव्वअणुरागे' काम-भोग की प्रबल अभिलाषा, [इन] 'चउत्थवयस्स' चौथे व्रत के 'अइआरे'

* चतुर्थेऽणुव्रते, नित्यं परदारगमनविरतितः
आचरितमप्रशस्तेऽत्र प्रमादप्रसंगेन ॥ १५ ॥
अपरिगृहीतेत्वरानंगविवाहतीव्रानुरागे।
चतुर्थव्रतस्यातिचारान्, प्रतिक्रामामि दैवसिकं सर्वम् ॥ १६ ॥

‡ सदारसंतोसस्स समणोवासएणं इमे पंच०, तं जहा-अपरिग्गहिआ-गमणे, इत्तरियपरिग्गहियागमणे, अणंगकीडा, पर-वीवाहकरणे, कामभोग-तिव्वाभिलासे। [आवश्यक सूत्र पत्र ८२३]

* यह सूत्रार्थ पुरुष को लक्ष्य में रख कर है। स्त्रियों के लिये इससे उलटा समझना चाहिये। जैसे ;—पर पुरुष-गमन विरतिरूप आदि।

साथ रमण करना, (३) सृष्टि के नियम-विरुद्ध काम-क्रीडा करना, (४) अपने पुत्र-पुत्री के सिवाय दूसरों का विवाह करना, कराना और (५) काम भोग की प्रबल अभिलाषा करना ॥ १५ ॥ १६ ॥

[पाँचवें अणुव्रत के अतिचारों की आलोचना]

*इत्तो अणुव्वए पं,-चमम्मि आयरिअमप्पसत्थम्मि।
परिमाणपरिच्छेए, इत्थ पमायपसंगेणं ॥ १७ ॥
धण-धन्न-खित्त वत्थू-रूप्प सुवन्ने अ कुविअ परिमाणे।
दुपए चउप्पयम्मि य, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१८॥*

अन्वयार्थ—'इत्तो' इसके बाद 'इत्थ' इस 'परिमाण परिच्छेए' परिमाण करने रूप 'पञ्चमम्मि' पाँचवें 'अणुव्वए' अणुव्रत के विषय में 'पमायप्पसंगेणं' प्रमाद के वश होकर 'अप्प सत्थम्मि' अप्रशस्त 'आयरिअं' आचरण हुआ, जैसे;—'धण' धन, 'धन्न' धान्य-अनाज 'खित्त' खेत, 'वत्थू' घर-दुकान आदि

---

* इतोऽणुव्रते पञ्चमे, आचरितमप्रशस्ते।
परिमाणपरिच्छेदे,-ऽत्र प्रमादप्रसंगेन ॥ १७ ॥
धन धान्य क्षेत्र वास्तु रूप्य-सुवर्णे च कुप्यपरिमाणे।
द्विपदे चतुष्पदे च, प्रतिक्रामामि देवसिकं सर्वम् ॥ १८ ॥

* इच्छापरिमाणस्स समणोवासएणं इमे पंच० धणधन्नपमाणाइक्कमे खित्तवत्थुपमाणाइक्कमे, हिरन्नसुवन्नपमाणाइक्कमे। दुपयचउप्पयपमाणाइक्कमे कुवियपमाणाइक्कमे। [आवश्यक सूत्र, पत्र ८२५]

मंजूर करने से धन-धान्यपरिमाणातिचार लगता है। जैसे स्वीकृत परिमाण के उपरान्त धन धान्य का लाभ देख कर किसी से यह कहना कि तुम इतना अपने पास रखो। मैं पीछे से-जब कि व्रत की कालावधि पूर्ण हो जायगी-उसे ले लूँगा अथवा उस अधिक धन-धान्य को बाँध कर किसी के पास इस बुद्धि से रख देना कि पास की चीज कम होने पर ले लिया जायगा, अभी लेने में व्रत का भंग होगा; यह धन धान्य परिमाणातिचार है।

मिला देने से क्षेत्र-वास्तुपरिमाणातिचार लगता है। जैसे स्वीकृत संख्या के उपरान्त खेत या घर की प्राप्ति होने पर व्रतभंग न हो इस बुद्धि से पहले के खेत की वाड तोड कर उसमें नया खेत मिला देना और सख्या कायम रखना अथवा पहले के घर की भित्ती गिरा कर उसमें नया घर मिला कर घर की संख्या कायम रखना; यह क्षेत्र-वास्तुपरिमाणातिचार है।

सौंपने से सुवर्ण-रजतपरिमाणातिचार लगता है। जैसे कुछ कालावधि के लिए सोना-चाँदी के परिमाण का अभिग्रह लेने के बाद बीच में अधिक प्राप्ति होने पर किसी को यह कह कर अधिक भाग सौंप देना कि मैं इसे इतने समय के बाद ले लूँगा, अभी मुझे अभिग्रह है; यह सुवर्ण-रजतपरिमाणातिचार है।

नई घड़ाई कराने मे कुप्यपरिमाणातिचार लगता है। जैसे स्वीकृत संख्या के उपरान्त ताँबा, पीतल आदि का बरतन मिलने पर उसे लेने से व्रत-भंग होगा इस भय से दो वरतनों को भँगा कर एक बनवा लेना और संख्या को कायम रखना; यह कुप्यपरिमाणातिचार है।

गर्भ के सम्बन्ध से द्विपद-चतुष्पदपरिमाणातिचार लगता है। जैसे स्वीकृत कालावधि के भीतर प्रसव होने से संख्या बढ़ जायगी और व्रत भंग होगा इस भय से द्विपद या चतुष्पदों को कुछ देर से गर्भ ग्रहण कराना जिससे कि व्रत की कालावधि में प्रसव होकर संख्या बढ़ने न पावे और कालावधि के बाद प्रसव होने से फायदा भी हाथ से न जाने पावे यह द्विपद-चतुष्पद परिमाणातिचार है। [धर्मसंग्रह, श्लोक ४८]

गमन करूँगा, इससे अधिक नहीं। यह दिक्‌परिमाण रूप प्रथम गुण-व्रत अर्थात् छठाँ व्रत है। इसमें लगने वाले अतिचारों की इस गाथा में आलोचना है। वे अतिचार इस प्रकार हैं:—

(१) ऊर्ध्व दिशा में जितनी दूर तक जाने का नियम किया हो उससे आगे जाना, (२) अधो-दिशा में जितनी दूर जाने का नियम हो उससे आगे जाना, (३) तिरछी दिशा में जाने के लिये जितना क्षेत्र निश्चित किया हो उससे दूर जाना, (४) एक तरफ के नियमित क्षेत्रप्रमाण को घटा कर दूसरी तरफ उतना बढ़ा लेना और वहाँ तक चले जाना, जैसे पूर्व और पश्चिम में सौ सौ कोस से दूर न जाने का नियम करके आवश्यकता पड़ने पर पूर्व में नव्वे कोस की मर्यादा रखकर पश्चिम में एक सौ दस कोस तक चले जाना और (५) प्रत्येक दिशा में जाने के लिये जितना परिमाण निश्चित किया हो उसे भुला देना ॥ १६ ॥

[सातवें व्रत के अतिचारों की आलोचना]

*मज्जम्मि अ मंसम्मि अ, पुप्फे अ फले अ गन्ध-मल्ले अ।

---

* मद्ये च मांसे च, पुष्पे च फले च गन्धमाल्ये च।
उपभोगपरिभोगयोर्द्वितीये गुण-व्रते निन्दामि ॥ २० ॥
सचित्ते प्रतिबद्धेऽपक्वं दुष्पक्वं चाहारे।
तुच्छौषधिभक्षणता, प्रतिक्रामामि देवसिकं सर्वम् ॥ २१ ॥

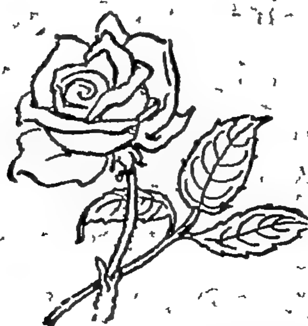
'चेव' तथा 'दन्त' दाँत 'लक्ख' लाख 'रस' रस 'केस' बाल 'य' और 'विसविसयं' जहर के 'वाणिज्जं' व्यापार को [श्रावक] 'सुवज्जए' छोड़ देवे ॥२२॥

'एवं' इस प्रकार 'जंतपिल्लणकम्मं' यन्त्र से पीसने का काम 'निल्लंछणं' अंगों को छेदने का काम 'दवदाणं' आग लगाना, 'सरदह तलायसोसं' सरोवर, झील तथा तालाब को सुखाने का काम 'च' और 'असईपोसं' असती-पोषण (इन सबको सुश्रावक) 'खु' अवश्य 'वज्जिज्जा' त्याग देवे ॥२३॥

भावार्थ—सातवाँ व्रत भोजन और कर्म दो तरह से होता है। भोजन में जो मद्य, मांस आदि बिलकुल त्यागने योग्य हैं, उनका त्याग करके बाकी में से अन्न, जल आदि एक ही बार उपयोग में आने वाली वस्तुओं का तथा वस्त्र, पात्र आदि बार-बार उपयोग में आने वाली वस्तुओं का परिमाण कर लेना। इसी तरह कर्म में अंगार कर्म आदि अतिदोष वाले कर्मों का त्याग करके बाकी के कामों का परिमाण कर लेना, यह उपभोग परि-भोग परिणामस्वरूप दूसरा गुणव्रत अर्थात् सातवाँ व्रत है।

ऊपर की चार गाथाओं में से पहली गाथा में मद्य, मांस आदि वस्तुओं के सेवन मात्र की और पुष्प, फल, सुगन्धित द्रव्य आदि पदार्थों का परिमाण से ज्यादा उपभोग-परिभोग करने की आलोचना की गई है। दूसरी गाथा में सावद्य आहार का त्याग करने वाले को जो अतिचार लगते हैं उनकी आलोचना है। वे अतिचार इस प्रकार हैं :—

(६) केशवाणिज्य—मोर, तोते आदि पक्षिओं का, उनके पंखों का और चमरी गाय आदि के बालों का व्यापार चलाना, (१०) विषवाणिज्य—अफीम, संखिया आदि विषैले पदार्थों का व्यापार करना, (११) यन्त्रपीलन—कर्म चक्की, चरखा, कोल्हू आदि चलाने का धन्धा करना, (१२) निर्लाञ्छनकर्म—ऊँट, बैल आदि की नाक को छेदना या भेड़ बकरी आदि के कान को चीरना, (१३) दवदानकर्म जंगल, गाँव, गृह आदि में आग लगाना, (१४) शोषणकर्म—झील, हौज, तालाब आदि को सुखाना और (१५) असतीपोषण कर्म—बिल्ली, न्योला आदि हिंसक प्राणिओं का पालन तथा दुराचारी मनुष्यों का पोषण करना ॥२०॥२३॥



'न्हाण' स्नान 'उव्वट्टण' उबटन 'वन्नग' गुलाल आदि रंगीन बुकनी 'विलेवणे' केसर, चन्दन आदि विलेपन 'सद्द' शब्द 'रूव' रूप 'रस' रस 'गंधे' गंध 'वत्थ' वस्त्र 'आसन' आसन और 'आभरणे' गहन के [भोग से लगे हुए] 'देसिअं' दैनिक 'सव्वं' सब दूषण से 'पडिक्कमे' निवृत्त होता हूँ ॥२५॥

'अणट्ठाए दण्डम्मि' अनर्थदण्ड—विरमण रूप 'तइयम्मि' तीसरे 'गुणव्वए' गुणव्रत के विषय में [पाँच अतिचार हैं। जैसे :—] 'कंदप्पे' कामविकार पैदा करने वाली बातें करना, 'कुक्कुइए' औरों को हँसाने के लिये भाँड़ की तरह हँसी, दिल्लगी करना या किसी की नकल करना, 'मोहरि' निरर्थक बोलना, 'अहिगरण' सजे हुए हथियार या औजार तैयार रखना, 'भोग अइरित्ते' भोगने की वस्त्र पात्र आदि चीजों को जरूरत से ज्यादा रखना ; (इनकी मैं) 'निन्दे' निन्दा करता हूं ॥२६॥

भावार्थ—अपनी और अपने कुटुम्बियों की जरूरत के सिवा व्यर्थ किसी दोष-जनक प्रवृति के करने को अनर्थ दण्ड कहते है, इससे निवृत्त होना अनर्थ दण्ड विरमण रूप तीसरा गुणव्रत अर्थात् आठवाँ व्रत है। अनर्थ दण्ड चार प्रकार से होता है :—

(१) अपध्यानाचरण, यानी बुरे विचारों के करने से (२) पाप-कर्मोपदेश, यानी पापजनक कर्मों के उपदेश से, (३) हिंसा प्रदान, अर्थात् जिनसे जीवों की हिंसा हो ऐसे साधनों के देने दिलाने से, (४) प्रमादाचरण यानी आलस्य के कारण से। इन गाथाओं में इसी अनर्थदण्ड की आलोचना की गई है।

अन्वयार्थ—'तिविहे' तीन प्रकार का 'दुप्पणिहाणे' दुष्प्रणिधान- मन, वचन, शरीर का अशुभ व्यापार 'अणवट्ठाणे' अस्थिरता 'तहा' तथा 'सइविहूणे' याद न रहना ; [इन अतिचारों से] 'सामाइय' सामायिक रूप 'पढमे सिक्खावए' प्रथम शिक्षाव्रत 'वितहकए' वितथ-मिथ्या किया जाता है, इससे इनकी 'निंदे' मैं निन्दा करता हूं ॥२७॥

भावार्थ—सावद्य प्रवृत्ति तथा दुर्ध्यान का त्याग करके राग-द्वेष वाले प्रसंगों में भी समभाव रखना, यह सामायिक रूप पहला शिक्षाव्रत अर्थात् नववाँ व्रत है। इसके अतिचारों की इस गाथा में आलोचना की गई है। वे अतिचार इस प्रकार है :—

(१) मन को काबू में न रखना, (२) वचन का संयम न करना, (३) काया की चपलता को न रोकना, (४) अस्थिर बनना अर्थात् कालावधि के पूर्ण होने के पहले ही सामायिक पार लेना और (५) ग्रहण किये हुए सामायिक व्रत का प्रमाद वश भुला देना ॥२७॥

[दसवें व्रत के अतिचारों की आलोचना]

* आणवणे पेसवणे, सद्दे रूवे अ पुग्गलक्खेवे।
देसावगासिअम्मि, बीए सिक्खावए निंदे ॥ २८ ॥+

---

* आनयने प्रेषणे, शब्दे रूपे च पुद्गलक्षेपे।
देशावकाशिके, द्वितीये शिक्षाव्रते निन्दामि ॥ २८ ॥

+ देशावगासियस्स समणो० इमे पंच०, तंजहा—आणवणप्पओगे पेसवणप्पओगे सद्दाणुवाए रूवाणुवाए बहियापुग्गलपक्खेवे। [आव० सू०,

[ग्यारहवें व्रत के अतिचारों की आलोचना]

संथारुच्चारविही-पमाय तह चेव भयोणाभोए।
पोसहविहिविवरीए, तइए सिक्खावए निंदे ॥२६॥

अन्वयार्थ—"संथार" संथारे की और "उच्चार" लघुनीति-बड़ीनीति—पेशाब दस्त की "विही" विधि में "पमाय" प्रमाद हो जाने से "तह चेव" तथा भोयणाभोए" भोजन की चिन्ता करने से "पोसहविहिविवरीए" पौषध की विधि विपरीत हुई उसकी "तइए" तीसरे सिक्खावए" शिक्षाव्रत के विषय में "निन्दे" निन्दा करता हूँ ॥ २६ ॥

भावार्थ—आठम, चौदह आदि तिथियों में आहार तथा शरीर की शुश्रुषा का और सावद्य व्यापार का त्याग कर के ब्रह्मचर्य्य-पूर्वक धर्मक्रिया करना, यह पौषधोपवास—नामक तीसरा शिक्षाव्रत अर्थात् ग्यारहवाँ व्रत है। इस व्रत के अतिचारों की इस गाथा में आलोचना की गई है। वे अतिचार ये हैं:—

(१) संथारे की विधि में प्रमाद करना अर्थात् उसका पडिलेहनप्रमार्जन न करना, (२) अच्छी तरह पडिलेहन-प्रमार्जन न करना, (३) दस्त, पेशाब आदि करने की जगह का पडिलेहन प्रमार्जन न करना, (४) पडिलेहन-प्रमार्जन अच्छी तरह न करना और (५) भोजन आदि की चिन्ता करना कि कब सवेरा हो और कब मैं अपने लिए अमुक चीज बनवाऊँ ॥ २६ ॥

अन्वयार्थ—'सुहिएसु' सुखियों पर 'दुहिएसु' दुःखियों पर 'अ' और 'अस्संजएसु' गुरु की निश्रा से विहार करने वाले सुसाधुओं पर तथा असंयतों पर 'रागेण' राग से 'व' अथवा 'दोसेण' द्वेष से 'मे' मैंने 'जा' जो 'अणुकंपा' दया—भक्ति—को 'तं' उसकी 'निंदे' निन्दा करता हूं 'च' तथा 'तं' उसकी 'गरिहामि गर्हा करता हूँ ॥ ३१ ॥

भावार्थ—जो साधु ज्ञानादि गुण में रत हैं या जो वस्त्रपात्र आदि उपधि वाले हैं, वे सुखी कहलाते हैं। जो व्याधि से पीड़ितहैं, तपस्या से खिन्न हैं या वस्त्र पात्र आदि उपधि से विहीन हैं वे दुःखी कहे जाते हैं। जो गुरु की निश्रा से उनकी आज्ञा के अनुसार—वर्तते हैं, वे साधु अस्वयत कहलाते हैं। जो संयमहीन हैं, वे असंयत कहे जाते हैं। ऐसे सुखी, दुःखी, अस्वयत और असंयत साधुओं पर यह व्यक्ति मेरा सम्बन्धी है, यह कुलीन है या यह प्रतिष्ठित है इत्यादि प्रकार के ममत्वभाव से अर्थात् राग वश होकर अनुकम्पा करना तथा यह कंगाल है, यह जाति-हीन है, यह घिनौना है, इसलिये इसे जो कुछ देना हो, दे कर जल्दी निकाल दो, इत्यादि प्रकार के घृणाव्यञ्जक भाव से अर्थात् द्वेष-वश होकर अनुकम्पा करना। इसकी इस गाथा में आलोचना की गई है ॥ ३१ ॥

साहूसु संविभागो, न कओ तवचरणकरणजुत्तेसु।
संते फासुअदाणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ३२ ॥

को देखकर जीने की इच्छा करना [४] दुःख से घबड़ा कर मरण की इच्छा करना और [५] भोग की वाञ्छा करना; इस प्रकार संलेखना व्रत के पाँच अतिचार हैं। ये अतिचार मरण-पर्य्यन्त अपने व्रत में न लगें, ऐसी भावना इस गाथा में की गई है ॥ ३३ ॥

काएण काइअस्स, पडिक्कमे वाइअस्स वायाए।
मणसा माणसिअस्स, सव्वस्स वयाइआरस्स ॥३४॥

अन्वयार्थ—'काइअस्स' शरीर द्वारा लगे हुए 'वाइअस्स' वचन द्वारा लगे हुए और 'माणसिअस्स' मन द्वारा लगे हुए 'सव्वस्स' सब 'वयाइआरस्स' व्रतातिचार का क्रमशः 'काएण' काय-योग से 'वायाए' वचन-योग से और 'मणसा' मनो-योग से 'पडिक्कमे' प्रतिक्रमण करता हूं ॥ ३४ ॥

भावार्थ—अशुभ शरीर योग से लगे हुए * व्रतातिचारों का प्रतिक्रमण शुभ ÷शरीर योग से, अशुभ वचन-योग से लगे हुए +व्रतातिचारों का प्रतिक्रमण ⁑शुभ वचन-योग से और अशुभ मनो-योग से लगे हुए ×व्रतातिचारों का प्रतिक्रमण शुभ=मनो-योग से करने की भावना इस गाथा में की गई है ॥ ३४ ॥

---

* बध, बन्ध आदि। ÷ कायोत्सर्ग आदि रूप। +सहसाभ्याख्यान आदि। ⁑ मिथ्या-दुष्कृत-दान आदि। × शंका, कांक्षा आदि। =अनित्यता आदि भावना रूप।

पाँच समितियां, गुप्ति मनोगुप्ति आदि तीन * गुप्तियां, ‡ गौरव-ऋद्धिगौरव आदि तीन प्रकार के गौरव, + संज्ञा—आहार, भय आदि चार प्रकार की संज्ञाएँ, ÷ कषाय क्रोध, मान इत्यादि चार कषाय और × दण्ड-मनोदण्ड आदि तीन दण्ड; इस प्रकार

सत्प्रवृत्ति रूप गुप्ति के समय समिति पाई जाती है, पर केवल निवृत्ति रूप गुप्तिके समय समिति नहीं पाई जाती। यही बात श्रीहरिभद्रसूरि ने 'प्रविचार अप्रविचार' ऐसे गूढ़ शब्दों से कही है। [आव० टी०, पत्र ४८३]

* मन आदि को असत्प्रवृत्ति से रोकना और सत्प्रवृत्ति में लगाना 'गुप्ति' है। इसके तीन भेद हैं, मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति। [समवायांग टीका, पत्र ६]

‡ अभिमान और लालसा को 'गौरव' कहते हैं। इसके तीन भेद हैं:—[१] धन, पदवी आदि प्राप्त होने पर उसका अभिमान करना और प्राप्त न होने पर उसकी लालसा रखना 'ऋद्धिगौरव', [२] घी, दूध दही आदि रसों की प्राप्ति होने पर उनका अभिमान करना और प्राप्त न होने पर लालसा करना 'रसगौरव' और [३] सुख व आरोग्य मिलने पर उसका अभिमान और न मिलने पर उसकी तृष्णा करना 'सातागौरव' है। [समवाययांग सूत्र टी०, पत्र २]

+ 'संज्ञा' अभिलाषा को कहते हैं। इसके संक्षेप में चार प्रकार हैं:-आहार-संज्ञा, भय-संज्ञा मैथुन-संज्ञा और परिग्रह संज्ञा [समवायांग सूत्र ४]

÷ —संसार में भ्रमण कराने वाले चित्त के विकारों को कषाय कहते हैं। इन के संक्षेप में राग द्वेष ये दो भेद या क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार भेद हैं। [समवायांग सूत्र ४]

× —जिस अशुभ योग से आत्मा दण्डित-धर्मभ्रष्ट-होता है, उसे दण्ड कहते हैं। इसके मनोदण्ड, वचनदण्ड और कायदण्ड ये तीन भेद हैं। [समवा० सूत्र ३]

भी 'खिप्पं' जल्दी 'हु' अवश्य 'उवसामेई' उपशान्त करता है 'व' जैसे 'सुसिक्खिओ' कुशल 'विज्जो' वैद्य 'वाहिं' व्याधि को ॥३७॥

भावार्थ—जिस प्रकार कुशल वैद्य व्याधि को विविध उपायों से नष्ट कर देता है, उसी प्रकार सुश्रावक सांसारिक कामों से बंधे हुए कर्मों को प्रतिक्रमण, पश्चात्ताप और प्रायश्चित्त द्वारा क्षय कर देता है ॥ ३७ ॥

जहा विसं कुट्ठगयं, मंतमूलविसारया ।
विज्जा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निव्विसं ॥३८॥
एवं अट्ठविहं कम्मं, रागदोससमज्जिअं ।
आलोअंतो अ निंदंतो, खिप्पं हणइ सुसावओ ॥३९॥

अन्वयार्थ—'जहा' जैसे 'मंतमूलविसारया' मन्त्र और जड़ी-बूटी के जानकार 'विज्जा' वैद्य 'कुट्ठगयं' पेट में पहुंचे हुए 'विसं' जहर को 'मंतेहिं' मन्त्रों से 'हणंति' उतार देते हैं 'तो' जिससे कि 'तं' वह पेट 'निव्विसं' निर्विष 'हवइ' हो जाता है ॥ ३८ ॥

'एवं' वैसे ही 'आलोअंतो' आलोचना करता हुआ 'अ' तथा 'निंदंतो' निन्दा करता हुआ 'सुसावओ' सुश्रावक 'रागदोस-समज्जिअं' राग और द्वेष से बँधे हुए 'अट्ठविहं' आठ प्रकार के 'कम्मं' कर्म को 'खिप्पं' शीघ्र 'हणइ' नष्ट कर डालता है ॥ ३९ ॥

भावार्थ—जिस प्रकार कुशल वैद्य उदर में पहुँचे हुए विष भी मन्त्र या जड़ी-बूटी के जरिये से उतार देते हैं; इसी प्रकार

आवश्यक क्रिया द्वारा श्रावक थोड़े ही समय में दुःखो का अन्त कर सकता है ॥ ४१ ॥

[याद नहीं आए हुए अतिचारों की आलोचना]

आलोअणा बहुविहा, नय संभरिआ पडिक्कमणकाले
मूलगुणउत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ४२ ॥

अन्वयार्थ—'आलोअणा' आलोचना 'बहुविहा' बहुत प्रकार की है, परन्तु 'पडिक्कमणकाले' प्रतिक्रमण के समय 'न' संभरिआ' याद न आई, 'य' इससे 'मूलगुण' मूलगुण में और 'उत्तरगुणे' उत्तरगुण में दूषण रह गया 'तं' उसकी 'निंदे' निन्दा करता हूँ 'च' तथा 'गरिहामि' गर्हा करता हूं ॥ ४२ ॥

भावार्थ—मूलगुण और उत्तरगुण के विषय में लगे हुए अतिचारों की आलोचना शास्त्र में अनेक प्रकार की वर्णित है। उसमें से प्रतिक्रमण करते समय जो कोई याद न आई हो, उस की इस गाथा में निन्दा की गई है ॥ ४२ ॥

तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स—
अब्भुट्ठिओमि आरा-हणाए विरओमि विराहणाए।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥४३॥

अन्वयार्थ—'केवलि' केवलि के 'पन्नत्तस्स' कहे हुए 'तस्स' उस 'धम्मस्स' धर्म की—श्रावक धर्म की—'आराहणाए' आराधना के लिए 'अब्भुट्ठिओमि' सावधान हुआ हूँ [और उसकी]

भावार्थ—जो चिर-काल-संचित पापों का नाश करनेवाली है, जो लाखों जन्म-जन्मातरों का अन्त करने वाली है और जो सभी तीर्थङ्करों के पवित्र मुख-कमल से निकली हुई है, ऐसी सर्व-हितकारक धर्म-कथा में ही मेरे दिन व्यतीत हों ॥४६॥

मम मंगलमरिहंता, सिद्धा साहू सुअं च धम्मो अ।
सम्मदिट्ठी देवा, दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥४७॥

अन्वयार्थ—'अरिहन्ता' अरिहन्त 'सिद्धा' सिद्ध भगवान् 'साहू' साधु 'सुअं' श्रुत—शास्त्र 'च' और 'धम्मो' धर्म 'मम' मेरे लिये 'मंगलं' मंगलभूत हैं, 'सम्मदिट्ठी' सम्यग्दृष्टि वाले 'देवा' देव [मुझको] 'समाहिं' समाधि 'च' और 'बोहिं' सम्यक्त्व 'दिंतु' देवें ॥ ४७ ॥

भावार्थ—श्रीअरिहन्त, सिद्ध, साधु, श्रुत और चरित्र-धर्म, ये सब मेरे लिये मंगलरूप हैं। मैं सम्यक्त्वी देवों से प्रार्थना करता हूँ कि वे समाधि तथा सम्यक्त्व प्राप्त करने में मेरे सहायक हों ॥ ४७ ॥

पडिसिद्धाणं करणे, किच्चाणमकरणे पडिक्कमणं।
असद्दहणे अ तहा, विवरीयपरूवणाए अ ॥४८॥

अन्वयार्थ—'पडिसिद्धाणं' निषेध किये हुए कार्य को 'करणे' करने पर 'किच्चाणं' करने योग्य कार्य को 'अकरणे' नहीं करने पर 'असद्दहणे' अश्रद्धा होने पर 'तहा' तथा 'विवरीय'

किसी का कुछ अपराध किया हो तो वह मुझे क्षमा करे। मेरी सब जीवों के साथ मित्रता है, किसी के साथ शत्रुता नहीं है ॥ ४६ ॥

एवमहं अलोइअ, निंदिय गरहिअ दुगंछिउ सम्मं।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥५०॥

अन्वयार्थ—'एव' इस प्रकार 'अहं' मैं 'सम्मं' अच्छी तरह 'आलोइअ' आलोचना कर के 'निंदिय' निंदा करके 'गरहिअ' गर्हा कर के और 'दुगंछिउ' जुगुप्सा कर के 'तिविहेण' तीन प्रकार—मन, वचन और शरीर से 'पडिक्कंतो' निवृत्त होकर 'चउव्वीसं' चौवीस 'जिणे' जिनेश्वरों को 'वंदामि' वन्दन करता हूँ ॥ ५० ॥

भावार्थ—मैंने पापों की अच्छी तरह आलोचना, निन्दा गर्हा और जुगुप्सा की; इस तरह त्रिविध प्रतिक्रमण करके अब मैं अन्त में फिर से चौबीस जिनेश्वरों को वन्दन करता हूँ ॥५०॥

हमारे सहयोगी



श्री मोहनलालजी गोलछा
F. C. A, L L. B, A. C. S

'अहयंपि' मैं भी 'सव्वस्स' [उनके] सब अपराधों को 'खमामि' क्षमा करता हूँ ॥ २ ॥

भावार्थ—हाथ जोड़ कर सब पूज्य मुनि-गणों से मैं अपने अपराध की क्षमा चाहता हूँ, और मैं उनके प्रति क्षमा करता हूँ ॥ २ ॥

सव्वस्स जीवरासिस्स भावओ धम्मनिहिअनियचित्तो।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयंपि ॥ ३ ॥

अन्वयार्थ—'सव्वस्स' सम्पूर्ण 'जीवरासिस्स' जीव-राशिसे 'सव्व' [अपने] सब अपराधों को 'खमावइत्ता' क्षमा करा कर 'धम्मनिहिअनियचित्तो' धर्म में निज चित्त को स्थापन किये हुए 'अहयंपि' मैं भी 'सव्वस्स' [उनके] सब अपराधों को 'भावओ' भाव-पूर्वक 'खमामि' क्षमा करता हूँ ॥ ३ ॥

भावार्थ—धर्म में चित्त को स्थिर करके सम्पूर्ण जीवों से मैं अपने अपराध की क्षमा चाहता हूँ, और स्वयं भी उनके अपराधों को हृदय से क्षमा करता हूँ ॥ ३ ॥

३४—सकलतीर्थ नमस्कार

सद्भक्त्या देवलोके रविशशिभवने व्यन्तराणां निकाये, नक्षत्राणां निवासे ग्रहगणपटले तारकाणां विमाने।
पाताले पन्नगेन्द्रे स्फुटमणि किरणैर्ध्वस्तसान्द्रान्धकारे,
श्री मत्तीर्थङ्कराणां प्रतिदिवसमहं तत्र चैत्यानि वन्दे ॥१॥

लिप्त्यां श्रीमत्ती० ॥ ७ ॥ स्वर्गे मर्त्येऽन्तरिक्षे गिरि-शिखर-ह्रदे स्वर्णदीनीरतीरे, शैलाग्रे नागलोके जलनिधि-पुलिने भूरुहाणां निकुञ्जे । ग्रामेऽरण्ये वने वा स्थलजल-विषमे दुर्गमध्ये त्रिसंध्यं, श्रीमत्ती० ॥ ८ ॥ श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रुचकनगवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे चौज्जन्ये चैत्य-नन्दे रतिकररुचके कौण्डले मानुषाङ्के । इक्षूकारे जिनाद्रौ च दधिमुखगिरौ व्यन्तरे स्वर्गलोके, ज्योतिर्लोके भवन्ति त्रिभुवनवलये यानि चैत्यालयानि ॥ ६ ॥ इत्थं श्री जैन-चैत्यस्तवनमनुदिनं ये पठन्ति प्रवीणाः, प्रोत्यकल्याणहेतु कलिमलहरणं भक्तिभाजस्त्रिसन्ध्यम् । तेषां श्रीतीर्थयात्रा-फलमतुलमलं जायते मानवानाम्, कार्याणां सिद्धिरुच्चैः प्रमु-दितमनसां चित्तमानन्दकारी ॥ १० ॥

सार—इन दस श्लोकों में से नौ श्लोकों के द्वारा तो तीर्थों को नमस्कार किया है और दसवें श्लोक में उसका तीर्थ-यात्रा तथा कार्यसिद्धिरूप फल बतलाया है।

पहले श्लोक से दिव्य स्थानों में स्थित चैत्यों को; दूसरे और तीसरे श्लोक से वैताढ्य आदि पर्वतीय प्रदेशों में स्थित चैत्यों को; चौथे, पाँचवें और छठे श्लोक से आघाट आदि देशों में स्थित चैत्यों को; सातवें श्लोक से चन्द्रा आदि नगरियों में स्थित चैत्यों

होने के लिए प्रचण्ड नौका के समान, ऐसे परम-सिद्धि-दायक महावीर सिद्धान्त अर्थात् अनेकान्तवाद को मैं नमन करता हूँ ॥ ३ ॥

परिमलभरलोभालीढलोलालिमाला—वरकमल निवासे हारनीहारहासे । अविरलभवकारागारविच्छित्तिकारं, कुरु कमलकरे मे मंगलं देवि सारम् ॥ ४ ॥

भावार्थ—उत्कट सुगन्ध के लोभ से खिंच कर आये हुए जो चपल भौंरे, उनसे युक्त ऐसे सुन्दर कमल पर निवास करने वाली; हार तथा बरफ के सदृश श्वेत, हास्य-युक्त और हाथों में कमल को धारण करने वाली हे देवि ! तू अनादि काल के संसार रूप कैदखाने को तोड़नेवाले सारभूत मंगल को कर ॥ ४ ॥

३६—संसारदावानल स्तुति

संसार दावानल दाह नीरं, संमोहधुलीहरणे समीरं। मायारसादारणसारसीरं, नमामि वीरं गिरिसारधीरं॥

अन्वयार्थ—'संसारदावानलदाहनीरं" संसार रूप दावानलके दाह के लिये पानी के समान, 'संमोहधूलीहरणे समीरं' मोह रूप धूल को हरने में पवन के समान 'मायारसादारणसारसीरं" माया रूप पृथ्वी को खोदने में पैने हल के समान [और] 'गिरिसारधीरं' पर्वत के तुल्य धीरज वाले 'वीरं' श्री महावीर स्वामी को 'नमामि' [मैं] नमन करता हूँ ॥ १ ॥

भावार्थ—[श्रीमहावीर-स्तुति] में भगवान् महावीर को नमन करता हूँ। दावानल के सन्ताप को जल जिस प्रकार शान्त

प्रभावशाली जिनेश्वर के चरणों को मैं अत्यन्त श्रद्धा-पूर्वक नमन करता हूँ ॥२॥

बोधागाधं सुपद पदवीनीरपूराभिरामं,
जीवाहिंसाऽविरललहरीसंगमागाहदेहं ।
चूलावेलं गुरूगममणीसंकुलं दूरपारं,
सारं वीरागम जलनिधिं सादरं साधु सेवे ॥३॥

अन्वयार्थ—'बोधागाधं' ज्ञान से अगाध—गम्भीर, 'सुपद पदवीनीरपूराभिरामं' सुन्दर पदों की रचनारूप जल-प्रवाह से मनोहर 'जीवाहिंसाऽविरललहरीसङ्गमागाहदेहं' जीवदया-रूप निरन्तर तरंगों के कारण कठिनाई से प्रवेश करने योग्य, 'चूलावेलं' चूलिका रूप तट वाले 'गुरुगममणीसंकुलं' बड़े-बड़े आलावा रूप रत्नों से व्याप्त [और] 'दूरपारं' जिसका पार पाना कठिन है [ऐसे] 'सारं' श्रेष्ठ 'वीरागमजलनिधिं' श्री महावीर के आगम-रूप समुद्र की [मैं] 'सादरं' आदरपूर्वक 'साधु' अच्छी तरह 'सेवे' सेवा करता हूँ ॥३॥

भावार्थ—[आगम-स्तुति] इस श्लोक के द्वारा समुद्र के साथ समानता दिखा कर आगम की स्तुति की गई है।

जैसे समुद्र गहरा होता है वैसे जैनागम भी अपरिमित ज्ञान वाला होने के कारण गहरा है। जल की प्रचुरता के कारण जिस प्रकार समुद्र सुहावना मालूम होता है वैसे ही ललित पदों की रचना के कारण आगम भी सुहावना है। लगातार बड़ी-बड़ी

अन्वयार्थ—'धूलीबहुलपरिमल' रज-पराग से भरी हुई सुगन्धि में 'आलीढ' मग्न [और] 'लोल' चपल [ऐसी] 'अलि-माला' भौंरों की श्रेणियों की 'झङ्कार' गूंज के 'आराव' शब्द से 'सारं' श्रेष्ठ [तथा] 'आमूल' जड़ से लेकर 'आलोल' चंचल [ऐसे] 'अमलदलकमल' स्वच्छ पत्र वाले कमल पर स्थित [ऐसे] 'अगारभूमिनिवासे' गृह की भूमि में निवास करने वाली, 'छायासंभारसारे' कान्ति-पुञ्ज से शोभायमान, 'वरकमलकरे' हाथ में उत्तम कमल को धारण करने वाली, 'तारहाराभिरामे' स्वच्छ हार से मनोहर [और] 'वाणीसंदोहदेहे' बारह अंग रूप वाणी ही जिसका शरीर है ऐसी 'देवि' हे श्रुतदेवि! 'मे' मुझको 'सारं' सर्वोत्तम 'भवविरहवरं' संसार-विरह—मोक्ष का वर 'देहि' दे ॥४॥

अन्वयार्थ—[श्रुतिदेवी की स्तुति] जल के कल्लोल से मूल-पर्यन्त कंपायमान तथा पराग की सुगन्ध से मस्त होकर चारों तरफ गूंजते रहने वाले भौंरों से शोभायमान ऐसे मनोहर कमल-पत्र के ऊपर आये हुए भवन में रहने वाली, कान्ति के समूह से दिव्य रूप को धारण करने वाली, हाथ में सुन्दर कमल को रखने वाली, गले में पहने हुए भव्य हार से दिव्यास्वरूप दिखाई देने वाली, और *द्वादशाङ्गी वाणी की अधिष्ठात्री हे श्रुतदेवि! तू मुझे संसार से पार होने का वरदान दे ॥४॥

शंकाहीन [होते हैं , 'फासुअदाणे' अचित्त दान देने से 'निज्जर' कर्मों की निजरा होती है और [और] 'नाणमाईणं' ज्ञान आदि के आचार संबंधी 'अभिग्गहो' अभिग्रह [का मौका मिलता है] ॥२॥

भावार्थ—साधुओं को प्रणाम करने से पाप नष्ट होता है, परिणाम शंकाहीन अर्थात् निश्चित हो जाते हैं तथा अचित्त-दान द्वारा कर्म की निर्जरा होने का और ज्ञान आदि आचार सम्बन्धी अभिग्रह लेने का अवसर मिलता है ॥२॥

छउमत्थो मूढमणो, कित्तियमित्तंपि संभरई जीवो ।
जं च न संभरामि अहं, मिच्छा मि दुक्कडं तस्स ॥३॥

अन्वयार्थ—'छउमत्थो' छद्मस्थ [या] 'मूढमणो' मूढ मन वाला 'जीवो' जीव 'कित्तियमित्तंपि' कुछ ही बातों को 'संभरइ' याद कर सकता है। 'जंच' जो जो (पाप कर्म) 'अहं' मुझे 'न' नहीं 'संभरामि' याद आता 'तस्स' उसका 'दुक्कडं' दुष्कृत 'मि' मेरे लिये 'मिच्छा' मिथ्या हो ॥३॥

भावार्थ—छद्मस्थ व मूढ जीव कुछ ही बातों को याद कर सकता है, सबको नहीं, इसलिये जो जो पाप-कर्म मुझे याद नहीं आता, उसका भी 'मिच्छा मि दुक्कडं' ॥३॥

जं जं मणेण चिंतिय—मसुहं वायाइ भासियं किंचि ।
असुहं काएण कयं, मिच्छामि दुक्कडं तस्स ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ—(मैंने) 'मणेण' मन से 'जं जं' जो जो 'असुहं' अशुभ 'चिंतियं' चिन्तन किया, 'वायाइ' वाणी से 'किंचि' जो

३८—जयतिहुअण स्तोत्र

जय तिहुअण-वर-कप्परुक्ख, जय जिण धन्नं तरि।
जय तिहुअण-कल्लाण-कोस, दुरिय-क्करि-केसरि ॥
तिहुअणजण-अविलंघिआण, भुवण-त्तय-सामिअ।
कुणसु सुहाइं जिणेस पास, थंभणयपुर-ट्ठिअ ॥ १॥

अन्वयार्थ—'तिहुअणवरकप्परुक्ख' हे तीन जगत् में श्रेष्ठ कल्पवृक्ष के समान (आपकी) 'जय' जय हो। 'धन्वन्तरि' हे धन्वन्तरि वैद्य के समान 'जिण' जिनेन्द्र प्रभु (आपकी) 'जय' जय हो। 'तिहुअणकल्लाणकोस' हे तीन जगत् के कल्याण के भण्डार, 'दुरिअक्करिकेसरि' हे पाप रूप हस्ती को मारने में सिंह के समान, 'तिहुअणजणअविलंघियाण' हे त्रिभुवन में अनुल्लंघित आज्ञा वाले, 'भुवणत्तयसामिअ' हे तीन जगत् के प्रभु (आपकी) 'जय' जय हो। 'थंभणयपुरट्ठिअ' स्तम्भनपुर (खंभात) में स्थित 'जिणेस पास' हे पार्श्वनाथ भगवन् (मुझे) 'सुहाइं' सुख 'कुणसु' कीजिये ॥१॥

भावार्थ—स्वर्ग, मृत्यु और पाताल इन तीनों जगत् के जीवों को वाञ्छित फल देने में कल्पवृक्ष के समान, प्राणियों के बाह्य और अभ्यन्तर रोगों के नाश करने में धन्वन्तरि वैद्य के तुल्य, तीन जगत् के कल्याण का भण्डार, पापरूप हस्ती को मारने के लिये सिंह के समान, एवं जिसकी आज्ञा तीनों लोक में मान्य है

३८—जयतिहुअण स्तोत्र

जय तिहुअण-वर-कप्परुक्ख, जय जिण धन्नं तरि
जय तिहुअण-कल्लाण-कोस, दुरिय-क्करि-केसरि।
तिहुअणजण-अविलंघिआण, भुवण-त्तय-सामिअ।
कुणसु सुहाइं जिणेस पास, थंभणयपुर-ट्ठिअ ॥ १॥

अन्वयार्थ—'तिहुअणवरकप्परुक्ख' हे तीन जगत् में श्रेष्ठ कल्पवृक्ष के समान (आपकी) 'जय' जय हो। 'धन्वन्तरि' हे धन्वन्तरि वैद्य के समान 'जिण' जिनेन्द्र प्रभु (आपकी) 'जय' जय हो। 'तिहुअणकल्लाणकोस' हे तीन जगत् के कल्याण के भण्डार, 'दुरिअक्करिकेसरि' हे पाप रूप हस्ती को मारने में सिंह के समान, 'तिहुअणजणअविलंघियाण' हे त्रिभुवन में अनुल्लंघित आज्ञा वाले, 'भुवणत्तयसामिअ' हे तीन जगत् के प्रभु (आपकी) 'जय' जय हो। 'थंभणयपुरट्ठिअ' स्तम्भनपुर (खंभात) में स्थित 'जिणेस पास' हे पार्श्वनाथ भगवन् (मुझे) 'सुहाइ' सुख 'कुणसु' कीजिये ॥१॥

भावार्थ—स्वर्ग, मृत्यु और पाताल इन तीनों जगत् के जीवों को वाञ्छित फल देने में कल्पवृक्ष के समान, प्राणियों के बाह्य और अभ्यन्तर रोगों के नाश करने में धन्वन्तरि वैद्य के तुल्य, तीन जगत् के कल्याण का भण्डार, पापरूप हस्ती को मारने लिये सिंह के समान, एवं जिसकी आज्ञा तीनों लोक में मान्य है

जर-जज्जर परिजुण्ण-कण्ण, नट्ठुट्ठ सुकुट्ठिण।
चक्खु-क्खीण खएण खुण्ण, नर सल्लिय सूलिण।
तुह जिण सरण-रसायणेण, लहु हुंति पुणण्णव।
जय-धन्नंतरि पास महवि, तुह रोग-हरो भव॥ ३॥

अन्वयार्थ—'जर' ज्वर से 'ज्जर' अशक्त 'सुकुट्ठिण' गलित कोष्ठ से 'परिजुण्णकण्ण' सड़े हुए कान वाले [और] 'नट्ठुट्ठ' नष्ट होठ वाले, [और] 'चक्खुक्खीण' क्षीण चक्षु वाले, 'खएण' क्षय रोग से 'खुण्णं' दुर्बल [तथा] 'सूलिण' शूलरोग के 'सल्लिय' शल्य वाले 'नर' मनुष्य 'जिण' हे जिनदेव 'तुह' आपके 'सरणरसायणेण' स्मरण रूप रसायन से 'लहु' शीघ्र 'पुणण्णव' तंदुरस्त 'हुँति' होते हैं। [इससे] 'जयधन्नंतरि' जगत में धन्वन्तरि वैद्य के तुल्य 'पास' हे पार्श्वप्रभो 'तुह' आप 'महवि रोगहरो' मेरे भी रोग को नाश करने वाले 'भव' होइए॥ ३॥

भावार्थ—हे पार्श्वनाथ भगवन्! आपके स्मरण रूपी रसायन से ज्वर, कोष्ठ, क्षय, शूल इत्यादि विषम रोग वाले जीव भी शीघ्र ही आरोग्य को प्राप्त करते हैं, इससे हे धन्वन्तरी के तुल्य प्रभो! मेरे रोग का भी निवारण कीजिए॥ ३॥

विज्जा-जोइस मंत तंत-सिद्धीउ अपयत्तिण।
भुवणऽब्भुअ अट्ठविह सिद्धि, सिज्झहि तुह नामिण॥
तुह नामिण अपवित्तओ वि, जण होइ पवित्तउ।
तिहुअण-क्लाण-कोस, तुह पास निरुत्तउ॥ ४॥

एसो पंच-णमुक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—'एसो' यह 'पंच-णमुक्कारो' पाँचों को किया हुआ नमस्कार 'सव्व पाव प्पणासणो' सब पापों का नाश करने वाला 'च' और 'सव्वेसिं' सब 'मंगलाणं' मङ्गलों में 'पढमं' पहला—मुख्य 'मंगलं' मंगल 'हवइ' है ॥ १ ॥

भावार्थ—श्री अरिहंत भगवान्, श्री सिद्ध भगवान्, श्रीआचार्य महाराज, श्रीउपाध्यायजी और ढाई द्वीप में वर्तमान सामान्य सब साधु मुनिराज - इन पाँच परमेष्ठिओं को मेरा नमस्कार हो। उक्त पाँच परमेष्ठिओं को जो नमस्कार किया जाता है, वह सम्पूर्ण पापों को नाश करने वाला और सब प्रकार के लौकिक लोकोत्तर-मङ्गलों में प्रधान मङ्गल है।

२—स्थापनाचार्यजी की तेरह पडिलेहणा

शुद्ध स्वरूप धारूँ (१), ज्ञान (२) दर्शन (३) चारित्र (४) सहित सद्दहणा-शुद्धि (५) प्ररूपणा-शुद्धि (६) दर्शन-शुद्धि (७) सहित पाँच आचार पालूँ (८) पलावूँ (९) अनुमोदूँ (१०) मनो-गुप्ति (११) वचन-गुप्ति (१२) काय-गुप्ति (१३)।

न हुई होगी और इससे आप संयम-यात्रा का अच्छी तरह निर्वाह करते होंगे। हे स्वामिन्! कुशल है? अब मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप आहार पानी लेकर मुझको धर्मलाभ देवें।

—:०:—

५—अब्भुट्ठिओ (गुरु-क्षामणा) सूत्र

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! अब्भुट्ठिओ हं अब्भिंतर-देवसिअं खामेउं।

अन्वयार्थ—'अहं' मैं 'अब्भितर देवसिअं' दिन के अन्दर किये हुए अपराध को 'खामेउं' खमाने के लिये 'अब्भुट्ठिओ' तत्पर हुआ हूँ। इस लिये 'भगवन्' हे गुरु! 'आप इच्छाकारेण' इच्छापूर्वक 'संदिसह' आज्ञा दीजिये।

इच्छं, खामेमि देवसिअं

अन्वयार्थ—'इच्छं' आप की आज्ञा प्रमाण है। 'खामेमिदेवसिअं' अब मैं दैनिक अपराध को खमाता हूँ।

जं किंचि अपत्तिअं, पर-पत्तिअं, भत्ते, पाणे, विणए, वेआवच्चे, आलावे, संलावे, उच्चासणे, समासणे, अन्तर-भासाए, उवरि-भासाए, जं किंचि मज्झ विणय-परिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह, अहं न जाणामि, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

६—मुहपत्ती के पचीस बोल ।

● १ सूत्र-अर्थ सच्चा सद्दहूं, २ सम्यक्त्व-मोहनीय, ३ मिथ्यात्व-मोहनीय, ४ मिश्र-मोहनीय परिहरूँ । ५ काम-राग, ६ स्नेह-राग, ७ दृष्टि-राग परिहरूँ । * १ ज्ञान-विराधना, २ दर्शन-विराधना, ३ चारित्र-विराधना परिहरूँ । ४ मनो-गुप्ति, ५ वचन-गुप्ति, ६ कायगुप्ति आदरूँ । ७ मनो-दण्ड, ८ वचन-दण्ड, ९ काय-दण्ड परिहरूँ † । १ सुगुरु, २ सुदेव, ३ सुधर्म आदरूँ ; ४ कुगुरु, ५ कुदेव, ६ कुधर्म परिहरूँ । ७ ज्ञान, ८ दर्शन, ९ चारित्र आदरूँ ।

७—अंगकी पडिलेहण के २५ बोल ❋

कृष्ण लेश्या १, नील लेश्या २, कापोत लेश्या ३ परिहरूँ (मस्तके)। ऋद्धि-गारव १, रस-गारव २, माता-गारव ३-परिहरूँ (मुखे)। माया-शल्य,

● ये सात बोल मुहपत्ती खोलते समय कहने चाहिएँ ।

* ये नव बोल दाहिने हाथके पडिलेहण के समय कहने चाहिये ।

† ये नव बोलों का चिन्तन बाँयें हाथ के पडिलेहण के स

मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि। तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि॥

अन्वयार्थ—'भंते' हे भगवन्! [मैं] 'सामाइय' सामायिक व्रत 'करेमि' ग्रहण करता हूँ [और] 'सावज्जं' पाप-सहित 'जोगं' व्यापार का 'पच्चक्खामि' प्रत्याख्यान—त्याग करता हूँ। 'जाव' जब तक [मैं] 'नियम' इस नियम का 'पज्जुवासामि' पर्युपासन—सेवन करता रहूँ [तब तक]। 'तिविहेणं' तीन प्रकार के [योगों से] अर्थात् 'मणेणं वायाए काएणं' मन, वचन, काया से 'दुविहं' दो प्रकार का (त्याग करता हूं) अर्थात् 'न करेमि' (सावद्य योग को) न करूँगा (और) 'न कारवेमि' न कराऊँगा! 'भंते' हे स्वामिन्! 'तस्स' उससे—प्रथम के पाप से (मैं) 'पडिक्कमामि' निवृत्त होता हूँ, 'निन्दामि' (उसकी) निन्दा करता हूँ, (और) 'गरिहामि, गर्हा—विशेष निन्दा करता हूं 'अप्पाणं' आत्मा को (उस पाप व्यापार से) 'वोसिरामि' हटाता हूं।

भावार्थ—मैं सामायिक व्रत ग्रहण करता हूं। रागद्वेष का अभाव या ज्ञान दर्शन चरित्र का लाभ ही सामायिक है। इसलिये पाप वाले व्यापारों का मैं त्याग करता हूँ।

जब तक मैं इस नियम का पालन करता हूँ तब तक मन, वचन और शरीर इन तीनों साधनों से व्यापार को न स्वयं करूँगा और न दूसरे से कराऊँगा।

क्कमिउं' निवृत्त होना-हटना व बचना 'इच्छामि' चाहता हूँ (तथा) 'में' मैंने 'गमणागमणे' जाने आने में 'पाणमक्कणे' किसी प्राणी को दबाकर 'बीयक्कमणे' बीज को दबाकर 'हरियक्कमणे' वनस्पति को दबाकर, (या) 'ओसा' ओस 'उत्तिंग' चींटी के बिल 'पणग' पाँच रंगकी काई, 'दग' पानी, 'मट्टी' मिट्टी और 'मक्कडासंताणा' मकड़ी के जालोंका 'संकमणे' खूंद व कुचल कर 'जे' जिस किसी प्रकार के-'एगिंदिया' एक इन्द्रियवाले 'बेइं-दिया' दो इन्द्रिय वाले, 'तेइंदिया' तीन इन्द्रिय वाले, 'चउरिं-दिया' चार इन्द्रिय वाले (या) 'पंचिंदिया' पाँच इन्द्रिय वाले 'जीवा' जीवों को 'विराहिया' पीड़ित किया हो, 'अभिहया' चोट पहुँचाई हो, 'वत्तिया' धूल आदि से ढाँका हो, 'लेसिया' आपस में अथवा जमीन पर मसला हो, 'संघाइया' इकट्ठा किया हो, 'संघट्टिया' छुआ हो, 'परियाविया' परिताप-कष्ट पहुँचाया हो, 'किलामिया' थकाया हो, 'उद्दविया' हैरान किया हो, 'ठाणाओ' एक जगह से 'ठाणं' दूसरी जगह 'संकामिया' रक्खा हो, विशेष क्या, किसी तरह से उनको, 'जीवियाओ' जीवन से 'ववरोविया' छुड़ाया हो, 'तस्स' उसका 'दुक्कडं' पाप 'मि' मेरे लिये 'मिच्छा' निष्फल हो।

भावार्थ—रास्ते पर चलने-फिरने आदि से जो विराधना होती है उससे या उससे लगने वाले अतिचार से मैं निवृत्त होना चाहता हूँ अर्थात् आयंदा ऐसी विराधना न हो इस विषय में सावधानी रखकर उससे बचना चाहता हूँ।

करने के लिये 'विसोही करणेणं' विशेष शुद्ध करने के लिये 'विसल्लीकरणेणं' * शल्य का त्याग करने के लिये 'पावाणं' पाप 'कम्माणं' कर्मों का 'निग्घायणट्ठाए' नाश करने के लिये 'काउस्सग्गं' कायोत्सर्ग 'ठामि' करता हूं।

भावार्थ—ईर्यापथिकी क्रिया से पाप मल लगने के कारण आत्मा मलिन हुआ इसकी शुद्धि मैंने 'मिच्छा मि दुक्कडं' द्वारा की है। तथा परिणाम पूर्ण शुद्ध न होने से वह अधिक निर्मल न हुआ हो तो उसको अधिक निर्मल बनाने के निमित्त उस पर बार बार अच्छे संस्कार डालने चाहिये। इसके लिये प्रायश्चित्त करना आवश्यक है। प्रायश्चित्त भी परिणाम की विशुद्धि के सिवाय नहीं हो सकता, इसलिये परिणाम-विशुद्धि आवश्यक है। परिणाम की विशुद्धता के लिये शल्यों का त्याग करना जरूरी है। शल्यों का त्याग और अन्य सब पाप कर्मों का नाश काउस्सग्ग से ही हो सकता है। इसलिये मैं काउसग्ग करता हूं।

११—अन्नत्थ ऊससिएणं सूत्र

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वाय-निसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंग-संचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसं-

* शल्य तीन हैं—(१) माया (कपट), (२) निदान (फल-कामना) (३) मिथ्यात्व (कदाग्रह); (समवायांग सू० ३)।—

खाँसना, छींकना, जँभाई लेना, डकारना, अपान वायु का सरना, सिर आदि घुमना, पित्त बिगड़ने से मूर्च्छा का होना, अङ्ग का सूक्ष्म हिलन चलन, कफ थूक आदि का सूक्ष्म झरना, दृष्टि का सूक्ष्म संचालन-ये तथा इसके सदृश अन्य क्रियाएँ जो स्वयमेव हुआ करती हैं और जिनके रोकने से अशान्ति सम्भव है उनके होते रहने पर भी काउस्सग्ग अभङ्ग ही है। परन्तु इनके सिवाय अन्य क्रियाएँ जो आप ही आप नहीं होतीं—जिनका करना-रोकना इच्छा के अधीन है—उन क्रियाओं से मेरा कायोत्सर्ग अखण्डित रहे अर्थात् अपवादभूत क्रियाओं के सिवाय अन्य कोई भी क्रिया मुझसे न हो और इससे मेरा काउस्सग्ग सर्वथा अभंग रहे यही मेरी अभिलाषा है।

---

* 'आदि' शब्द से नीचे लिखे हुए चार आगार और समझने चाहिएँ। (१) आग व उपद्रव से दूसरी जगह जाना। (२) बिल्ली चूहे आदि का ऐसा उपद्रव जिससे कि स्थापनाचार्य के वीच बार-बार आड पड़ती हो इस कारण या किसी पंचेन्द्रिय जीव के छेदन-भेदन होने के कारण अन्य स्थान में जाना। (३) एकाएक डकैती पड़ने या राजा आदि के सताने से स्थान वदलना। (४) शेर आदि के भय से, साँप आदि विषैले जन्तु के डंक से या दिवाल आदि गिर पड़ने की शंका से दूसरे स्थान को जाना।

कायोत्सर्ग करने के समय ये आगार इसलिये रखे जाते हैं कि सबकी शक्ति एक सी नहीं होती। जो कम ताकत व डरपोक हैं वे ऐसे मौके पर इतने घबड़ा जाते हैं कि धर्म-ध्यान के वदले आर्त्त-ध्यान करने लगते हैं, इसलिये उन अधिकारियों के निमित्त ऐसे आगारों का रखा जाना आवश्यक है। आगार रखने में अधिकार भेद ही मुख्य कारण है।

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअलसिज्जंसवासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ३ ॥
कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ—'उसभं' श्रीऋषभदेव स्वामी को 'च' और 'अजिअं' श्रीअजितनाथ को 'वंदे' वन्दन करता हूं। 'संभव' श्रीसम्भवनाथ स्वामी को, 'अभिणंदणं' श्री अभिनन्दन स्वामी को, 'सुमइं' श्रीसुमतिनाथ प्रभु को, 'पउमप्पहं' श्रीपद्मप्रभु स्वामी को, 'सुपासं' श्रीसुपार्श्वनाथ भगवान् को 'च' और 'चंदप्पहं' श्रीचन्द्रप्रभु 'जिण' जिन को 'वन्दे' वन्दन करता हूँ। 'सुविहिं' श्रीसुविधिनाथ—[दूसरा नाम] 'पुप्फदंतं' श्रीपुष्पदन्त भगवान् को, 'सीअल' श्रीशीतलनाथ को, 'सिज्जंस' श्रीश्रेयांसनाथ को 'वासुपुज्जं' श्रीवासुपूज्य को, 'विमल' श्री विमलनाथ को, 'अणंतं' श्रीअनन्तनाथ को, 'धम्मं' श्रीधर्म्मनाथ को 'च' और 'संतिं' श्रीशान्तिनाथ 'जिणं' जिनेश्वर को, 'वंदामि' वन्दन करता हूँ। 'कुंथुं' श्रीकुन्थुनाथ को, 'अरं' श्रीअरनाथ को, 'मल्लिं' श्रीमल्लिनाथ को 'मुणिसुव्वयं' श्रीमुनिसुव्रत को, 'च' और 'निमिजिणं' श्रीनमिनाथ जिनेश्वरको 'वन्दे' वन्दन करता हूँ। 'रिट्ठनेमिं' श्रीअरिष्टनेमि—श्रीनेमिनाथ को 'पासं' श्रीपार्श्वनाथको 'तह' तथा 'वद्धमाणं' श्रीवर्द्धमान—श्रीमहावीर भगवान् को 'वंदामि' वन्दन करता हूं ॥ २-४ ॥

अन्वयार्थ—'सरणागयवच्छल' शरण में आये हुए की रक्षा करने वाले 'पास' हे पार्श्वनाथ भगवन् ! 'पई' आपने 'किवि' कई 'लोय' लोगों को 'निरोय' रोग-रहित 'कय' किये, 'किवि' कइओंको 'सुहसय' सैकड़ो सुख, 'पाविय' प्राप्त करवाये ; 'किवि' कइओंको 'मइमंत' बुद्धिमान् [किये], 'केवि' कइओं को 'महंत' बड़े [किये], 'कइ' कई लोगों को 'साहियसिवपय' मोक्ष-पद की साधना करवाई, 'किवि' कई लोगों को 'जसधवलियभूयल' यशस्वी बनाये; फिर 'मइ' मेरी 'केण' किस कारण से 'अवहीरहि' अवहेलना करते हो ? ॥ २१ ॥

भावार्थ—हे पार्श्वप्रभो ! आप शरण में आये हुए जीवों की रक्षा करनेवाले हो, क्योंकि आपने कई रोगियों को निरोग किये हैं, कई सुखार्थियों को सैकड़ों सुख दिये हैं, अनेक बुद्धि-रहित जीवों को बुद्धि दी है, कई छोटे जीवों को बड़े बनाये हैं, कई लोगों को मुक्ति दी है, अनेकों के शत्रुओं को पराभूत किये हैं और अनेक लोगों को यशस्वी बनाये हैं, फिर मेरी ही अवहेलना क्यों की जाती है ? ॥ २१ ॥

पच्चुवयार-निरीह नाह, निप्फन्न-पओयण ।
तुह जिण पास पयोवयार-करणिक्क-परायण ॥
सत्तु-मित्त-सम-चित्त वित्ति, नय-निंदय-सम-मण ।
मा अवहीरय अजुग्गउवि, मइं पास निरंजण ॥२२॥

एकमात्र पात्र हूँ [और] 'तुहु' आप 'निरु' केवल करुणाकर दया करने वाले हैं ; 'हउ' मैं 'असामिसालु' नाथ-रहित—अनाथ हूँ [और] 'तुहु' आप 'तिहुअणसामिय' तीनों जगत् के नाथ हो; [ऐसा होने पर भी] 'पास' हे पार्श्वप्रभो ! 'झखंत' विलाप करते हुए 'मह' मेरी 'जं' जो 'अवहीरहि' अवहेलना की जाती है 'इय' यह 'सोहिय' शोभाप्रद 'न' नहीं है ॥ २३ ॥

भावार्थ—हे पार्श्वजिन ! मैं अनेक प्रकार के दुःखों से पीड़ित हूँ और आप दुःख नाश में तत्पर हैं। मैं उत्तम पुरुषों की कृपा का पात्र हूँ और आप करुणा-निधान हैं, मैं अनाथ हूं और आप तीन जगत के नाथ हैं, ऐसा होने पर भी हे प्रभो ! जो मेरी अवहेलना की जाती है वह आपके लिये शोभाप्रद नहीं है ॥२३॥

जुग्गाऽजुग्ग-विभाग नाह, न हु जोयहि तुह-सम ।
भुवणुवयार-सहाव भाव-करुणा रस-सत्तम ॥
सम-विसमइं किं घणु नियइ, भुवि दाह समंतउ ।
इय दुहि-बंधव पास-नाह, मइ पाल थुणंतउ ॥ २४ ॥

अन्वयार्थ—'भुवणुवयारसहाव' संसार पर उपकार करने की प्रकृति वाले, 'भावकरुणारससत्तम' वास्तविक दया-रस से श्रेष्ठ [ऐसे] 'नाह' हे नाथ ! 'तुह' आप के 'सम' समान [श्रेष्ठलोक] जुग्गाजुग्गविभाग' योग्य और अयोग्य का भेद कभी 'न' नहीं 'जोयहि' देखते हैं। 'भुवि' जगत् में 'दाह' ताप 'समंतउ' समाता हुआ 'घणु' मेघ 'किं' क्या 'समविसमइं'

'नय' नहीं है, 'जं' जिसको 'जोइवि' देखकर 'उवयार' उपकार 'करहि' करें 'दीणह' दीन जनों में 'दीण' दीन, 'नहीणु' निःसत्त्व [और] 'जेण' जिसकारण से तइ ना 'हण' आप जैसे स्वामी ने 'चत्तउ' त्यक्त किया है 'तो' इससे 'अहमेव' मैं ही 'जुग्गउ' योग्य हूं, 'पास' हे पार्श्वप्रभो ! 'मह' मेरा 'चंगउ' अच्छी तरह 'पालहि' पालन कीजिए ॥ २५ ॥

भावार्थ— दीनता को छोड़कर दूसरी कोई भी योग्यता दीन लोगों को नहीं होती, जिसको देखकर उपकारी लोग उपकार करें हे प्रभो ! जब आपने मुझे छोड़ दिया है तो मैं ही अत्यन्त दीन और निःसत्त्व होने के कारण सर्वथा योग्य हूँ। हे पार्श्वदेव! मेरा पालन अच्छी तरह कीजिये ॥ २५ ॥

अह अन्नुवि जुग्गय-विसेसु किवि मन्नहि दीणह ।
जं पासवि उवयारुकरइ, तुह नाह समग्गह ॥
सुच्चिय किल कल्लाणु जेण, जिण तुम्ह पसीयह ।
किं अन्निण तं चेव देव, मा मइ अवहीरह ॥ २६ ॥

अन्वयार्थ—'नाह' हे प्रभो ! 'अह' यदि 'दीणह' दीन जनों की 'अन्नुवि' दीनता के सिवाय और 'जुग्गयविसेसु किवि' कोई योग्यता 'मन्नहि' आप मानते हों 'जं' जिसे 'पासिवी' देखकर 'तुह' आप 'समग्गह' सब लोगों पर 'उवयारु' उपकार 'करह' करते हों, [तो] 'जिण' हे जिनदेव ! 'सुच्चिय' वही 'किल' निश्चय से 'कल्लाणु' अच्छा है 'जेण' जिससे 'तुम्ह' आप 'पसीयह' प्रसन्न

'भुक्खियवसेण' बुभुक्षित होने के कारण 'उंबरु' कठरे का फल 'पच्चइ' पक जाता है ? ॥ २७ ॥

भावार्थ—हे भगवन् ! मैं यह जानता हूं कि आपको की हुई प्रार्थना निष्फल नहीं जाती, समय पर जरूर फल देती है, किन्तु मैं अत्यन्त दुखी और दुर्बल होने के कारण फल के लिये अत्यन्त उत्कण्ठित—व्यग्र हूँ ; और इसी व्यग्रता के कारण ही यह मान लेता हूँ कि इसी क्षण में प्रार्थना का चारित्र-शुद्धि और अपवर्ग आदि फल मिल जाँय । यद्यपि यह मानी हुई बात है कि आप से मेरे ईप्सित फल की प्राप्ति समय पर ही होगी, बुभुक्षित होने के कारण ही उदुम्बर शीघ्र नहीं पकता, वह उसके समय पर ही पकता है, किन्तु पकता अवश्य है, इसी तरह आप से भी मुझे फल की प्राप्ति समय पर जरूर होगी ; किन्तु व्यग्रता के कारण ही मैं इसी समय उसकी प्रार्थना करता हूँ ॥ २७ ॥

तिहुअण-सामिय पासनाह, मइ अप्पु पयासिउ ।
किज्जउ जं निय-रूव-सरिसु, न मुणउ बहु जंपिउ ॥
अन्नु न जिण जग्गि तुह समोवि, दक्खिन्न-दयासउ ।
जइ अवगन्नसि तुह जि अहह, कह, होसु हयासउ ॥२८॥

अन्वयार्थ—'तिहुअणसामिय' हे तीन जगत के स्वामी 'पासनाह' पार्श्वनाथ भगवान् ! 'मइ' मैंने 'अप्पु' मेरी आत्मा 'पयासिउ' प्रकाशित की 'ज' जो नियरूवसरिसु' आपके स्वभाव के उचित हो सो, 'किज्जउ' कीजिए, 'बहु' बहुत 'जंपिय' कहने को

होइ' (सिद्ध) नहीं होता 'सा' वह 'तुह' आपका 'ओहावणु' लघुता है, 'नियकित्ति' अपनी कीर्त्ति' की 'रक्खंतह' रक्षा करते हुए (आपको) 'अवहीरणु' (मेरी) अवहेलना 'णेय जुज्ज' योग्य नहीं है ॥ २६ ॥

भावार्थ—हे पार्श्वप्रभो ! यद्यपि पार्श्वयक्ष आदि किसी व्यन्तर देवने आपका रूप दिखला कर मुझे ठगा है; तो भी यह मैं मानता हूँ कि आपने मुझे स्वीकार किया है। अब यदि मेरा ईप्सित सिद्ध न हो वह आपकी ही न्यूनता है ; यदि 'आप आश्रितों के वत्सल हैं, ऐसी अपनी कीर्ति बचानी हो तो मेरी अवहेलना करना योग्य नहीं है ॥ २६ ॥

एह महारिय जत्त देव, इहु न्हवण-महूसउ ।
जं अणलिय-गुण-गहण तुम्ह, मुणि-जण-अणिसिद्धउ ॥
एम पसीअसु पास-नाह, थंभणयपुर-ट्ठिय ।
इय मुणिवरु सिरि-अभयदेउ, विन्नवइ अणिंदिय ॥३०॥

अन्वयार्थ—'देव' हे भगवन् ! 'तुम्ह' आपका 'जं' जो 'मुणिजणअणिसिद्धउ' मुनि-लोगों से अनिषिद्ध अनुमोदित 'अणलियगुणगहण' सत्य गुणों का ग्रहण-स्तवन (जो मैंने किया है) 'एह' यही 'महारिय' मेरी 'जत्त' यात्रा है [और] 'इहु' यही 'न्हवणमहूसउ' स्नपन-महोत्सव है। 'एम' ऐसा होने पर 'थंभणयपुरट्ठिय' हे स्तम्भनपुर में स्थित 'पासनाह' पार्श्वनाथ 'पसीअसु' प्रसन्न होइये। 'इय' इस तरह 'अणिंदिय' अनिंदि

होइ' (सिद्ध) नहीं होता 'सा' वह तुह आपका लघुता है, 'नियकित्ति' अपनी कीर्त्ति' की 'रक्खंत' रक्षा हुए (आपको) 'अवहीरणु' (मेरी) अवहेलना 'णेय जु' योग्य नहीं है ॥ २६ ॥

भावार्थ—हे पार्श्वप्रभो ! यद्यपि पार्श्वयक्ष आदि व्यन्तर देवने-आपका रूप दिखला कर मुझे ठगा है; तो भी मैं मानता हूँ कि आपने मुझे स्वीकार किया है। अब यदि ईप्सित सिद्ध न हो वह आपकी ही न्यूनता है; यदि आश्रितों के वत्सल हैं, ऐसी अपनी कीर्ति बचानी हो तो अवहेलना करना योग्य नहीं है ॥ २६ ॥

एह महारिय जत्त देव, इहु न्हवण-महूसउ ।
जं अणलिय-गुण-गहण तुम्ह, मुणि-जण-अणिसिद्धउ ॥
एम पसीअसु पास-नाह, थंभणयपुर-ट्ठिय ।
इय मुणिवरु सिरि-अभयदेउ, विन्नवइ अणिंदिय ॥३०

अन्वयार्थ—'देव' हे भगवन् ! 'तुम्ह' आपका 'जं' 'मुणिजणअणिसिद्धउ' मुनि-लोगों से अनिषिद्ध अनुमोदि 'अणलियगुणगहण' सत्य गुणों का ग्रहण-स्तवन (जो मैं किया है) 'एह' यही 'महारिय' मेरी 'जत्त' यात्रा है [और 'इहु' यही 'न्हवणमहूसउ' स्नपन-महोत्सव है। 'एम' ऐसा पर 'थंभणयपुरट्ठिय' हे स्तम्भनपुर में स्थित 'पासनाह' 'पसीअसु' प्रसन्न होइये। 'इय' इस तरह 'अणिंदिय'

३६—जय महायस।

जय महायस जय महायस जय महाभाग जय चिं-तिय-सुह-फलय, जयसमत्थ-परमत्थ-जाणय जय जय गुरु-गरिम गुरु ! जय दुहत-सत्ताण ताणय थंभणय-ट्ठिय पास जिण, भवियह भीम-भवुत्थु भय अवणि-ताणंतगुण, तुज्झ ति-संझ नमोत्थु ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—'जय महायस जय महायस' हे महायशस्विन् ! तेरी जय हो जय हो। 'महाभाग' हे महाभाग्यशालिन् ! 'जय' तेरी जय हो। 'चिंतियसुहफलय' हे चिन्तित शुभ-फल के दायक ! 'जय' तेरी जय हो। 'समत्थपरमत्थजाणय' हे समस्त तत्त्वों के जानकार ! 'जय' तेरी जय हो, 'गुरुगरिम गुरु' हे श्रेष्ठ गौरव वाले गुरो ! 'जय' जय तेरी जय हो, 'दुहत्त-सत्ताण ताणय' हे दुःखित जीवों के रक्षक जय हो ! 'जय' तेरी जय हो 'भवियह' भविक जीवों के 'भीम भवुत्थु भय' भयंकर संसार में उत्पन्न भय को 'अवणित' दूर करने वाले, 'अणंतगुण' अनन्त गुण वाले [ऐसे] 'थंभणयट्ठिय पासजिण' स्तम्भनपुर में स्थित हे पार्श्वजिन ! 'तुज्झ' तुझको 'तिसंझ' तीनों संध्याओं के वक्त 'नमोत्थु' नमस्कार हो ॥ १ ॥

भावार्थ—हे महायशस्विन् ! हे महाभाग ! हे चिन्तित के दायक ! हे समस्त तत्वों के जानकार ! हे श्रेष्ठ

'जिनाज्ञां' जिन भगवान् की आज्ञा का 'साधयन्तः सन्ति' पालन करते हैं; 'ताः' वे 'क्षेत्रदेवता' क्षेत्रदेवताएँ 'रक्षन्तु' रक्षा करें ॥ १ ॥

भावार्थ—जिनके क्षेत्र में रह कर साधु तथा श्रावक आदि जिन-भगवान् की आज्ञा पालते हैं, वे क्षेत्रदेवताएँ हमारी रक्षा करें ॥ १ ॥

४२—नमोऽस्तु वर्धमानाय।

इच्छामो अणुसट्ठिं, णमो खमासमणाणं।

अर्थ—हम 'अणुसट्ठिं' गुरु आज्ञा 'इच्छामो' चाहते हैं। 'खमासमणाणं' क्षमाश्रमणों को 'णमो' नमस्कार हो।

नमोऽस्तु वर्धमानाय, स्पर्धमानाय कर्मणा।
तज्जयावाप्तमोक्षाय, परोक्षाय कुतीर्थिनाम् ॥१॥

अन्वयार्थ—'कर्मणा' कर्म से 'स्पर्धमानाय' मुकाबिला करने वाले, और अन्त में 'तज्जयावाप्तमोक्षाय' उस पर विजय पाकर मोक्ष पाने वाले, तथा 'कुतीर्थिनाम्' मिथ्यात्वियों के लिये 'परोक्षाय' अगम्य ऐसे 'वर्धमानाय' श्री महावीर को 'नमोऽस्तु' नमस्कार हो ॥ १ ॥

भावार्थ—जो कर्म-वैरियों के साथ लड़ते-लड़ते अन्त में उनको जीत कर मोक्ष को प्राप्त हुए हैं, तथा जिनका स्वरूप

अन्वयार्थ—'यः' जो 'गिराम्' वाणी का 'विस्तरः' विस्ता 'जैन मुखाम्बुदोद्गत' जिनेश्वर के मुखरूप मेघ से प्रगट होक 'कषायतापार्दितजन्तु' कषाय के ताप से पीड़ित जन्तुओं 'निर्वृतिं' शान्ति 'करोति' करता है [और इसी से जो] 'शु मासोद्भववृष्टिसन्निभः' ज्येष्ठ मास में होने वाली वृष्टि के समा है, 'सः' वह 'मयि' मुझ पर 'तुष्टिं, तुष्टि 'दधातु' धार करे ॥ ३ ॥

भावार्थ—भगवान् की वाणी ज्येष्ठ मास की मेघ वर्षा समान अति शीतल है, अर्थात् जैसे ज्येष्ठ मास की वृष्टि ताप पीड़ित लोगों को शीतलता पहुंचाती है वैसे ही भगवान् वाणी कषाय-पीड़ित प्राणियों को शान्ति लाभ कराती है; ऐस शान्त वाणी का मुझ पर अनुग्रह हो ॥ ३ ॥

श्वसित-सुरभिगन्धा-ऽऽलीढ-भृङ्गी कुरङ्ग
मुखशशिनमजस्रं, विभ्रति या बिभर्ति।
विकच-कमलमुच्चैः साऽस्त्वचिन्त्य-प्रभावा,
सकलसुख-विधात्री, प्राणभाजां श्रुताङ्गी ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ—'श्वसित' श्वास की 'सुरभिगन्ध' सुगन्ध 'आलीढ' मग्न 'भृङ्गीकुरङ्ग' भमरी-रूप हरिण वाले 'मुखशशिनम् मुखचन्द को 'विभ्रति' धारण करती हुई 'या' जो 'उच्चैः' सुन्द रीति से 'विकचकमलम्' विकसित कमल को 'बिभर्ति' धार करती है; 'सा' वह 'अचिन्त्यप्रभावा' अचिन्त्य माहात्म वा

देवसूरिजी ने सेढी नदी के किनारे पर स्थित स्तम्भनपुर में प्रतिष्ठित किया है। जैसे कल्पवृक्ष जल से सिंचा जाता है वैसे श्री पार्श्वप्रभु स्तुतियोंसे अभिषिक्त किये गये हैं। कल्पवृक्ष को पल्लव होते हैं यहाँ भगवान् पर जो नाग-फणाएँ हैं वे ही पल्लव हैं इस तरह कल्पवृक्ष के समान वाञ्छित फल को देने वाले श्री पार्श्वप्रभु मेरा ईप्सित पूर्ण करे ॥ १ ॥

आधिव्याधि-हरो देवो, जीरावल्ली-शिरोमणिः।
पार्श्वनाथो जगन्नाथो, नत--नाथो नृणां श्रिये ॥२॥

अन्वयार्थ—'आधिव्याधिहरो' आधि तथा व्याधि को हरने वाला, जीरावल्लीशिरोमणि' जीरावल्ली—नामक तीर्थ में मुकुट-मणि समान 'नतनाथो' देव आदि के अधिपतिओं से पूजित, 'जगन्नाथो' जगत् का नाथ 'पार्श्वनाथो' श्री पार्श्वनाथ भगवान् 'नृणां' मनुष्यों को 'श्रिये' संपत्ति के लिए हो ॥ २ ॥

भावार्थ—मानसिक और शारीरिक पीड़ा का नाश करने वाला, जीरावल्ली-तीर्थ का नायक, अनेक महा-पुरुषों से पूजित, जगत् के नाथ ऐसे श्रीपार्श्वनाथ स्वामी, मनुष्यों को संपत्ति का का कारण-हो ॥ २ ॥

४४—सिरि-थंभणय-ठिय-पास-सामिणो।

सिरि-थंभणय-ठिय-पास-सामिणो सेस-तित्थ सामीणं।
तित्थ-समुन्नइ-कारण-सुरासुराणं च सव्वेसिं ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—'चउक्कसाय' चार कषाय रूप 'पडिमल्ल' वैरी के 'उल्लूरणु' नाश-कर्त्ता, 'दुज्जय' कठिनाई से जीते जाने वाले, 'मयणबाण' काम-बाणों को 'मुसुमूरणु' तोड़ देने वाले 'सरसपिअंगुवण्णु' नवीन प्रियङ्गु वृक्ष के समान वर्ण वाले 'गयगामिउ' हाथी की सी चाल वाले और 'भुवणत्तयसामिउ' तीनों भुवन के स्वामी [ऐसे] 'पासु' श्रीपार्श्वनाथ 'जयउ' जयवान् हो ॥ १ ॥

भावार्थ—तीन भुवन के स्वामी श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की जय हो। वे कषायरूप वैरियों का नाश करने वाले हैं, काम के दुर्जय बाणों को खण्डित करने वाले हैं—जितेन्द्रिय हैं, नये प्रियङ्गु वृक्ष के समान नील वर्ण वाले हैं और हाथी की सी गम्भीर गति वाले हैं ॥ १ ॥

जसु तणु-कंति-कडप्प-सिणिद्धउ,
सोहइ फणिमणिकिरणालिद्धउ।
नं नव-जलहर-तडिल्लय-लंछिउ,
सो जिणु पासु पयच्छउ वंछिउ ॥ २ ॥

अन्वयार्थ—'जसु' जिसका 'तणु कंति-कडप्प' शरीर का कान्ति-मण्डल 'सिणिद्धउ' स्निग्ध और 'फणिमणिकिरणालिद्धउ' साँप की मणियों की किरणों से व्याप्त है, [इस लिए ऐसा] 'सोहइ' शोभायमान हो रहा है कि 'नं' मानो 'तडिल्लयलंछिउ'

करने वाले 'मुनिवराः' मुनि-महाराज 'एते' ये 'पंच' पाँच 'परमेष्ठिनः' परमेष्ठी 'प्रतिदिनं' हमेशा 'वो' आपका 'मङ्गलं' कल्याण 'कुर्वन्तु' करें ॥ १ ॥

भावार्थ—इन्द्रों से पूजित अर्हन् देव, मुक्ति स्थित सिद्ध भगवान्, जिन-शासन की उन्निति करने वाले आचार्य महाराज, शास्त्र सिद्धान्त पढ़ाने वाले पूजनीय उपाध्याय और ज्ञान, दर्शन तथा चारित्र इन तीन रत्नों के आराधक मुनि-महाराज ये पाँच परमेष्ठी प्रतिदिन आपका कल्याण करें ॥ १ ॥

४७—लघु शान्ति स्तव

शान्ति-शान्ति-निशान्तं, शान्तं शान्ताऽशिवं नमस्कृत्य-
स्तोतुः शान्ति-निमित्तं, मन्त्र-पदैः शान्तये स्तौमि ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—'शान्तिनिशान्तं' शान्ति के मन्दिर, 'शान्तं' राग-द्वेष रहित, 'शान्ताऽशिवं' उपद्रवों को शान्त करने वाले और 'स्तोतुः शान्तिनिमित्तं' स्तुति करने वाले की शान्ति के कारणभूत, 'शान्ति' श्री शान्तिनाथ को 'नमस्कृत्य' नमस्कार करके 'शान्तये' शान्ति के लिये 'मन्त्रपदैः' मन्त्र-पदों से 'स्तौमि' स्तुति करता हूँ ॥ १ ॥

भावार्थ—श्री शान्तिनाथ भगवान् शान्ति के आधार, राग-द्वेष-रहित हैं, उपद्रवों के मिटाने वाले हैं और

भावार्थ—श्रीशान्तिनाथ भगवान् को बार-बार नमस्कार हो। वे अन्य सब सम्पत्ति को प्राप्त करने वाली चौतीस अतिशय रूप महा-सम्पत्ति से युक्त हैं और इसी से वे प्रशंसा-योग्य तथा त्रिभुवन-पूजित हैं ॥ ३ ॥

सर्वामर-सुसमूह—स्वामिक-संपूजिताय निजिताय।
भुवन-जन-पालनोद्यत—तमाय सततं नमस्तस्मै ॥ ४ ॥
सर्व-दुरितौघ-नाशन—कराय सर्वा-ऽशिव-प्रशमनाय।
दुष्ट-ग्रह-भूत-पिशाच—शाकिनीनां प्रमथनाय ॥ ५ ॥

अन्वयार्थ—'सर्वाऽमरसुसमूहस्वामिकसंपूजिताय' देवों के सब समूह और उनके स्वामियों के द्वारा पूजित, 'निजिताय' अजित, 'भुवन जनपालनोद्यततमाय' जगत् के लोगों का पालन करने में अधिक तत्पर, 'सर्वदुरितौघनाशनकराय' सब पाप-समूह का नाश करने वाले, 'सर्वाशिवप्रशमनाय' सब अनिष्टों को शान्त करने वाले, 'दुष्टग्रहभूतपिशाचशाकिनीनां प्रमथनाय' दुष्ट ग्रह, दुष्ट भूत, दुष्ट पिशाच और दुष्ट शाकनियों को दबाने वाले; 'तस्मै' उस [श्रीशान्तिनाथ] को 'सततंनमः' निरन्तर नमस्कार हो ॥ ४ ॥ ५ ॥

भावार्थ—जो सब प्रकार के देव-गण और उनके नायकों के द्वारा पूजे गये हैं, जो सबसे अजित हैं, जो सब लोगों का पालन करने में विशेष सावधान हैं, जो सब तरह के पाप-समूह नाश करने वाले हैं, जो अनिष्टों को शान्त करने वाले हैं

पराजय को अप्राप्त, 'सुजये !' सुन्दर जय वाली, 'भवति !' हे श्रीमति 'विजये !' विजया 'भगवति' देवि ! 'ते' तुमको 'नमः' नमस्कार 'भवतु' हो ॥ ७ ॥

भावार्थ—हे श्रीमति विजया देवि ! तुमको नमस्कार हो। तू श्रेष्ठ जय वाली है; तू छोटे बड़े सबसे अजित है; तूने कभी भी पराजय नहीं पाई है; जगत् में तेरी जय हो रही है; इसीसे तू दूसरों को भी जय दिलाने वाली है ॥ ७ ॥

सर्वस्यापि च संघस्य, भद्र-कल्याण-मंगल-प्रददे।
साधूनां च सदा शिव-सुतुष्टि-पुष्टि-प्रदे जीयाः ॥८॥

अन्वयार्थ—'सर्वस्यापि च संघस्य' सकल संघ को 'भद्रकल्याणमंगलप्रददे' सुख शान्ति और मंगल देने वाली 'च' तथा 'सदा' हमेशा 'साधुनां' साधुओं के 'शिवसुतुष्टिपुष्टिप्रदे' कल्याण और सन्तोष को पुष्टि करने वाली देवि ! 'जीयाः' तेरी जय हो ॥ ८ ॥

भावार्थ—हे देवि ! तेरी जय हो, क्योंकि तू चतुर्विध संघ को सुख देने वाली, उसकी बाधाओं को हरने वाली, और उसका मंगल करने वाली है तथा तू सदैव मुनियों के कल्याण, संतोष और धर्मवृद्धि को करने वाली है ॥ ८ ॥

भव्यानां कृत-सिद्धे !, निर्वृति-निर्वाण-जननि !
सत्त्वानाम् । अभय-प्रदान-निरते !, नमोऽस्तु-स्वस्ति-
प्रदे ! तुभ्यम् ॥ ९ ॥

'जगति' जगत में 'जय' तेरी जय हो तथा 'विजयस्व' विजय हो ॥ १० ॥११॥

भावार्थ—हे देवि जगत् में तेरी जय हो। तू भक्तों का का कल्याण करने वाली है; तू सम्यक्त्वियों को धीरज, प्रीति, मति तथा बुद्धि देने के लिये निरन्तर तत्पर रहती है और जो लोग जैनशासन के अनुरागी तथा श्रीशांतिनाथ भगवान् को नमन करने वाले हैं उनकी लक्ष्मी, सम्पत्ति और यश-कीर्ति को बढ़ाने वाली है ॥ १० ॥ ११ ॥

सलिलानल-विष-विषधर,-दुष्ट-ग्रह-राज-रोग-रण-भयतः
राक्षस-रिपु-गण-मारि—चौरेति श्वापदादिभ्यः ॥ १२ ॥
अथ रक्ष रक्ष सुशिवं, कुरु कुरु शांतिं च कुरु कुरु सदेति ।
तुष्टिं कुरु कुरु पुष्टिं, कुरु कुरु स्वस्ति च कुरुकुरु त्वम् ॥१३॥

अन्वयार्थ—'अथ' अब 'सलिल' पानी, 'अनल' अग्नि, 'विष' जहर, 'विषधर' साँप, दुष्टग्रह' बुरे ग्रह, 'राज' राजा, 'रोग' बीमारी और 'रण' युद्ध के 'भयतः' भय से, तथा 'राक्षस' 'रिपुगण' वैरि-समूह, 'मारि' प्लेग, हैजा आदि रोग, 'चौर' 'चोर, ईति' अतिवृष्टि आदि सात ईतियों और श्वापदादिभ्यः हिंसक प्राणी आदि से 'त्वम्' तू 'रक्ष रक्ष' बार बार रक्षा कर, 'सुशिवं' कल्याण 'कुरु कुरु' बार बार कर, सदा हमेशा शान्तिं' शान्ति 'कुरु कुरु' बार बार कर, 'इति' इस प्रकार परितोष 'कुरु कुरु' बार बार कर, 'पुष्टिं' पोषण कर

'जगति' जगत में 'जय' तेरी जय हो तथा 'विजयस्व' विजय हो ॥ १० ॥११॥

भावार्थ—हे देवि जगत् में तेरी जय हो। तू भक्तों का का कल्याण करने वाली है; तू सम्यक्त्वियों को धीरज, प्रीति, मति तथा बुद्धि देने के लिये निरन्तर तत्पर रहती है, और जो लोग जैनशासन के अनुरागी तथा श्रीशांतिनाथ भगवान् को नमन करने वाले हैं उनकी लक्ष्मी, सम्पत्ति और यश-कीर्ति को बढ़ाने वाली है ॥ १० ॥ ११ ॥

सलिलानल-विष-विषधर,-दुष्ट-ग्रह-राज-रोग-रण-भयतः
राक्षस-रिपु-गण-मारि—चौरेति श्वापदादिभ्यः ॥ १२ ॥
अथ रक्ष रक्ष सुशिवं, कुरु कुरु शांति च कुरु कुरु सदेति।
तुष्टिं कुरु कुरु पुष्टिं, कुरु कुरु स्वस्ति च कुरुकुरु त्वम् ॥१३॥

अन्वयार्थ—'अथ' अब 'सलिल' पानी, 'अनल' अग्नि, 'बिष' जहर, 'विषधर' साँप, दुष्टग्रह' बुरे ग्रह, 'राज' राजा, 'रोग' बीमारी और 'रण' युद्ध के 'भयतः' भय से, तथा 'रिपुगण' वैरि-समूह, 'मारि' प्लेग, हैजा आदि रोग, 'चोर, ईति' अतिवृष्टि आदि सात ईतियों और श्वापदादिभ्यः हिंसक प्राणी आदि से 'त्वम्' तू 'रक्ष रक्ष' बार बार रक्षा कर, 'सुशिवं' कल्याण 'कुरु कुरु' बार बार कर, 'सदा शान्तिं' शान्ति 'कुरु कुरु' बार बार कर, 'इति' इस ... परितोष 'कुरु कुरु' बार बार कर, 'पुष्टिं'

एवं यन्नामाक्षर-पुरस्सरं संस्तुता जया देवी।
कुरुते शान्तिं नमतां, नमो नमः शान्तये तस्मै॥ १५॥

अन्वयार्थ--'एवं' इस प्रकार 'यन्नामाक्षरपुरस्सर' जिसके नामाक्षर-पूर्वक 'संस्तुता' स्तवन की गई 'जयादेवी' 'नमतां' नमन करने वालों को 'शान्तिं' शान्ति 'कुरुते' पहुँचाती है; 'तस्मै' उस 'शान्तये' शांतिनाथ को 'नमो नमः' पुनः पुनः नमस्कार हो॥ १५॥

भावार्थ--जिनके नाम का जप करके संस्तुत अर्थात् आह्वान की हुई जयादेवी भक्तों को शांति पहुँचाती है, उस प्रभावशाली शांतिनाथ भगवान को बार २ नमस्कार हो॥ १५॥

इति पूर्व-सूरि-दर्शित—मन्त्र-पद-विदर्भितः स्तवःशान्तेः।
सलिलादि - भय - विनाशी, शान्त्यादिकरश्च भक्तिमताम्॥ १६॥

अन्वयार्थ--'इति' इस प्रकार 'पूर्वसूरिदर्शित' पूर्वाचार्यों के बतलाये हुए 'मन्त्रपदविदर्भितः' मंत्र-पदों से रचा हुआ 'शान्तेः' श्रीशांतिनाथ का 'स्तवः' स्तोत्र 'भक्तिमताम्' भक्तों के 'सलिलादिभयविनाशी' पानी आदि के भय का विनाश करने वाला 'च' और 'शांत्यादिकरः' शांति आदि करने वाला है॥ १६॥

भावार्थ--पूर्वाचार्यों के कहे हुए मंत्र-पदोंको लेकर यह रचा गया है इस लिये यह भक्तों के सब प्रकार के

ष्टों को मिटाता है और सुख, शांति आदि करता है ॥ १६ ॥

यश्चैनं पठति सदा, शृणोति भावयति वा यथायोगम् ।
स हि शान्ति-पदं यायात्, सूरिः श्रीमानदेवश्च ॥ १७ ॥

सर्व-मङ्गल-माङ्गल्यं, सर्व-कल्याण-कारणम् ।
प्रधानं सर्व-धर्माणां, जैनं जयति शासनम् ॥ १६ ॥

अर्थ—समस्त मंगलों में मंगलकारी, समस्त कल्याणों का कारक, सभी धर्मों में प्रधान जैन शासन जयवंत हो ॥ १६ ॥

४८—भुवन देवता की स्तुति।

चतुर्वर्णाय संघाय, देवी भुवन-वासिनी ।
निहत्य दुरितान्येषा, करोतु सुखमक्षयम् ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—'एषा भुवनवासिनी देवी' यह भुवनदेवता 'दुरितानि' पापों को 'निहत्य' नष्ट करके 'चतुर्वर्णाय संघाय' चतुर्विध श्रीसंघ के लिए 'अक्षयं' क्षय-रहित—अखूट 'सुखं' सुख 'करोतु' करे ॥ १ ॥

भावार्थ—भुवनवासिनी देवी, पापों को नष्ट करके चतुर्विध श्रीसंघ के लिए अक्षय सुख दे ॥ १ ॥

४६—वर-कनक सूत्र।

ॐ वर-कणय-संख-विद्दुम-मरगय-घण-संनिहं विगयमोहं ।
सत्तरि-सयं जिणाणं, सव्वामर-पूइयं वन्दे ॥१॥ स्वाहा ॥

अन्वयार्थ—'वर' श्रेष्ठ 'कणय' सुवर्ण, 'संख' ... प्रवाल-मूँगे, 'मरगय' नीलम और 'घण'

घमान वर्ण वाले 'विगयमोहं' [मोह-रहित और 'सव्वामरपूइयं'
सब देवों से पूजित 'सत्तरिसयं' एक सौ सत्तर [१७०]
'जिणाणं' जिनवरों को 'वन्दे' वन्दन करता हूँ। 'ॐ' मंगल-वाचक

५० बृहत् शान्ति

भो भो भव्याः शृणुत वचनं प्रस्तुतं सर्वमेतद्,
ये यात्रायां त्रिभुवनगुरोरार्हता भक्ति भाजः।
तेषां शान्तिर्भवतु भवतामर्हदादिप्रभावा-,
दारोग्यश्रीधृतिमतिकरी क्लेशविध्वंसहेतुः ॥१॥

अर्थ—हे भव्य जनो, आप यह सब समयोपयोगी कथन सुनिये। जो आर्हत् (जैन) तीन जगत के गुरु श्रीतीर्थंकर की जन्माभिषेक-यात्रा के विषय में भक्ति रखते हैं, उन सब महानुभावों को अरिहन्त, सिद्ध आदि के प्रभाव से शान्ति मिले, जिससे कि आरोग्य, संपत्ति, धीरज और बुद्धि प्राप्त हो तथा क्लेशों का नाश हो ॥१॥

भो भो भव्यलोकाः ! इह हि भरतैरावतविदेहसंभवानां समस्ततीर्थकृतां जन्मन्यासनप्रकम्पानन्तरमवधिना विज्ञाय सौधर्माधिपतिःसुघोषाघण्टाचालनानन्तरंसकलसुरासुरेन्द्रैः सह समागत्य सविनयमर्हद्भट्टारकं गृहीत्वा गत्वा कनकाद्रिशृंगे विहितजन्माभिषेकः शान्तिमुद्घोषयति, ततोऽहं कृतानुकारमिति कृत्वा महाजनो येन गतः स पन्थाः इति भव्यजनैः सह समागत्य स्नात्रपीठे स्नात्रं विधाय शान्तिमुद्घोषयामि तत्पूजायात्रास्नात्रादि महोत्सवानन्तरमिति कृत्वा कर्णं दत्त्वा निशम्यतां निशम्यतां स्वाहा।

अर्थ—हे भव्य लोगों! इस लोक के अन्दर भरत, ऐरवत और महाविदेह क्षेत्र में पैदा होने वाले सभी तीर्थङ्करों के जन्म के समय सौधर्म नामक प्रथम देवलोक के इन्द्र का आसन कम्पित

तीनों लोक का ऐश्वर्य धारण करने वाले और तीनों लोक में ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाले, ऐसे जो अरिहन्त भगवान हैं, वे बार-बार प्रसन्न हों।

ॐ श्रीकेवलज्ञानि-निर्वाणि-सागर-महायश-विमल-सर्वानुभूति-श्रीधर-दत्त-दामोदर-सुतेज-स्वामि-मुनिसुव्रत-सुमति-शिवगति-अस्ताग-नमीश्वर-अनिल-यशोधर-कृतार्घ-जिनेश्वर-शुद्धमति-शिवकर-स्यन्दन-संप्रति इति एते अतीत-चतुर्विंशति-तीर्थकराः॥

अर्थ—ॐ श्री केवलज्ञानि, निर्वाणि, सागर, महायश, विमल, सर्वानुभूति, श्रीधर, दत्त, दामोदर, सुतेज, स्वामि, मुनिसुव्रत, सुमति, शिवगति, अस्ताग, नमीश्वर, अनिल, यशोधर, कृतार्घ, जिनेश्वर, शुद्धमति, शिवकर, स्यन्दन, संप्रति—ये अतीत चौवीसी के तीर्थङ्कर हैं।

ॐ श्री ऋषभ-अजित-संभव-अभिनन्दन-सुमति पद्मप्रभ-सुपार्श्व-चन्द्रप्रभ-सुविधि-शीतल-श्रेयांस-वासुपूज्य-विमल-अनन्त-धर्म-शान्ति-कुन्थु-अर-मल्लि-मुनिसुव्रत-नमि-नेमि-पार्श्व-वर्द्धमान इति एते वर्तमान जिनाः॥

अर्थ—ॐ, श्री ऋषभदेव, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनन्दन, सुमतिनाथ, पद्मप्रभ, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ, सुविधिनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्य, विमलनाथ, [illegible]

शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, और वर्धमान (महावीर स्वामी) पर्यन्त ये चौबीस वर्तमान जिनेश्वर हैं।

ॐ श्रीपद्मनाभ-सूरदेव-सुपार्श्व-स्वयंप्रभ- ति-देव-

मार्गों में हम सब लोगों की निरन्तर रक्षा करें।

ॐ, श्री नाभि, जितशत्रु, जितारि, संवर, मेघ, घर, प्रतिष्ठ, महसेन, सुग्रीव, दृढ़रथ, विष्णु, वासुपूज्य, कृतवर्म, सिंहसेन, भानु, विश्वसेन, सूर, सुदर्शन, कुम्भ, सुमित्र, विजय, समुद्रविजय, अश्वसेन, सिद्धार्थ ये वर्त्तमान चौवीस तीर्थङ्करों के पिता हैं।

ॐ श्री मरुदेवा-विजया-सेना-सिद्धार्था-सुमंगला-सुसीमा पृथिवीमाता-लक्ष्मणा-रामा-नन्दा- विष्णु - जया - श्यामा- सुव्रता- अचिरा-श्री-देवी-प्रभावती-पद्मा-वप्रा-शिवा-वामा- त्रिशला इति एते वर्त्तमान-जिन-जनन्यः॥

अर्थ—ॐ श्री मरुदेवी, विजया, सेना, सिद्धार्था, सुमंगला, सुसीमा, पृथिवीमाता, लक्ष्मणा, रामा, नन्दा, विष्णु, जया, श्यामा, सुयशा, सुव्रता, अचिरा, श्री, देवी, प्रभावती, पद्मा, वप्रा, शिवा, वामा, त्रिशला-ये वर्त्तमान जिनेश्वर देवों की मातायें हैं।

ॐ श्रीगोमुख-महायक्ष- त्रिमुख-यक्षनायक-तुम्बुरु-कुसुम- मातंग-विजय-अजित-ब्रह्मा-यक्षराज-कुमार-षण्मुख-पाताल- किन्नर - गरुड- गन्धर्व-यक्षराज-कुबेर-वरुण-भृकुटि-गोमेघ- पार्श्व-ब्रह्मशान्ति इति एते वर्त्तमान जिनः॥

अर्थ—ॐ श्रीगोमुख, महायक्ष, त्रिमुख, यक्षनायक, तुम्बुरु, कुसुम, मातंग, विजय, अजित, ब्रह्मा, यक्षराज, कुमार, षण्मुख,

पाताल, किन्नर, गरुड़, गन्धर्व, यक्षराज, कुबेर, वरुण, भृकुटि, गोमेध, पार्श्व, ब्रह्मशान्ति ये वर्तमान तीर्थङ्करों के यक्ष हैं।

॥ ॐ चक्रेश्वरी-अजितबला-दुरितारि-काली-महाकाली-

ॐ रोहिणी-प्रज्ञप्ति-वज्रशृङ्खला-वज्रांकुशा-चक्रेश्वरी-पुरुषदत्ता-काली-महाकाली-गौरी-गान्धारी-सर्वास्त्र-महाज्वाला-मानवी-वैरोट्या-अच्छुप्ता-मानसी-महामानसी एता षोडशविद्यादेव्यो: रक्षन्तु मे स्वाहा।

अर्थ—ॐ, रोहिणी, प्रज्ञप्ति, वज्रशृंखला, वज्रांकुशा, चक्रेश्वरी, पुरुषदत्ता, काली, महाकाली, गौरी, गान्धारी, सर्वास्त्र-महाज्वाला, मानवी, वैरोट्या, अच्छुप्ता, मानसी और महामानसी नामक, जो सोलह विद्याधिष्ठायिका देवियाँ हैं, वे हमारी रक्षा करें।

ॐ आचार्योपाध्यायप्रभृतिचातुर्वर्णस्य श्रीश्रमणसंघस्य शान्तिर्भवतु, ओं तुष्टिर्भवतु पुष्टिर्भवतु।

अर्थ—ॐ, आचार्य, उपाध्याय आदि जो चतुर्वर्ण साधु-संघ है, उसे शान्ति, तुष्टि और पुष्टि प्राप्त हो।

ॐग्रहाश्चन्द्र-सूर्याङ्गारक-बुध-बृहस्पति-शुक्र-शनैश्चर-राहू-केतुसहिता: सलोकपाला: सोम-यम-वरुण-कुबेर-वासवादित्य-स्कन्द विनायक ये चान्येऽपि ग्रामनगरक्षेत्रदेवतादयस्ते सर्वे प्रीयन्तां प्रीयन्तां अक्षीणकोशकोष्ठागारा नरपतयश्च भवन्तु स्वाहा।

अर्थ—ॐ, चन्द्र, सूर्य, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु, ये नौ महाग्रह तथा अन्य सामान्य ग्रह, लोकपाल

सोम, यम, वरुण, कुबेर, वासव (इन्द्र), आदित्य, स्कन्द, और
विनायक तथा जो दूसरे गांव, शहर और क्षेत्र के देव आदि हैं,
वे सब आनन्द प्रसन्न हों और राजा लोग अटूट खजाने तथा,

शान्त हो जायँ और जो शत्रु हैं, वे पराङ्मुख हो जायँ अर्थात् हार मानकर अपना मुख फेर लेवें, स्वाहा।

श्रीमते शान्तिनाथाय, नमः शान्तिविधायिने।
त्रैलोक्यस्यामराधीश, मुकुटाभ्यर्चिताङ्घ्रये ॥ १ ॥
शांतिः शांतिकरः श्रीमान्, शांतिं दिशतु मे गुरुः।
शांतिरेव सदा तेषां, येषां शान्तिर्गृहे गृहे ॥ २ ॥
ॐ उन्मृष्टरिष्टदुष्ट-गृहगतिदुस्स्वप्नदुर्निमित्तादि।
संपादितहितसंपन्नामग्रहणं जयति शान्तेः ॥ ३ ॥
श्रीसंघपौरजनपद, राजाधिपराजसन्निवेशानाम्।
गोष्ठिकपुरमुख्याणां, व्याहरणैर्व्याहरेच्छान्तिम् ॥ ४ ॥

श्रीश्रमणसंघस्य शान्तिर्भवतु, श्रीपौरलोकस्य शान्तिर्भवतु, श्रीजनपदानां शान्तिर्भवतु, श्रीराजाधिपानां शान्तिर्भवतु, श्रीराजसन्निवेशानां शान्तिर्भवतु, श्रीगोष्ठिकानां शांतिर्भवतु, ॐ स्वाहा ॐ स्वाहा ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथाय स्वाहा।

अर्थ—ॐ, इन्द्रों के मुकुटों से जिसके चरण पूजित हैं, अर्थात् जिसके चरणों में इन्द्रों ने सिर झुकाया है और जो तीनों लोक में शान्ति करने वाला है, उस श्रीमान् शान्तिनाथ भगवान् को नमस्कार हो ॥१॥

शान्तिकारक और महान् ऐसे श्रीशान्तिनाथ प्रभु मुझको शान्ति देवें, जिनके घर में शान्तिनाथ विराजमान हों, अर्थात् जो शान्तिनाथ की पूजा-प्रतिष्ठा करते हैं, उनको सदा शान्ति [illegible] ॥११॥

चन्दना-भरणाऽलंकृतः पुष्पमालां कण्ठे कृत्वा शान्तिमुद
घोषयित्वा शान्तिपानीयं मस्तके दातव्यमिति ।

अर्थ—प्रतिष्ठा, यात्रा और स्नात्र आदि उत्सवों के अन्त यह शान्ति पढ़नी चाहिए। [इसकी विधि इस प्रकार है:— शान्ति पढ़ने वाला शान्ति-कलश को ग्रहण करके कुं चन्दन, कपूर और अगर के धूप के सुवास से युक्त होकर त अञ्जलि में फूल लेकर स्नात्र-भूमि में श्री संघ के साथ रह शरीर को अतिशुद्ध बनाकर पुष्प, वस्त्र, चन्दन और आभूष से सज कर और गले में फूल की माला पहिन कर शान्ति घोषणा करे। घोषणा करने के बाद संघ के सिर पर शान्ति-ज छिड़का जाय।

नृत्यन्ति नृत्यं मणिपुष्पवर्षं,
सृजन्ति गायन्ति च मंगलानि ।
स्तोत्राणि गोत्राणि पठन्ति मंत्रान्,
कल्याणभाजोहि जिनाऽभिषेके ॥

अर्थ—जो पुण्यशाली हैं, वे तीर्थङ्करों के अभिषेक के सम नाच करते हैं, रत्न और फूलों की वर्षा करते हैं, मंगल गी गाते हैं और भगवान् के स्तोत्र, नाम तथा मन्त्रों को हमे

मई वित्त परमाया, सिवादेवी तुम्हनयरनिवासिनी ।
अम्ह सिवं तुम्ह सिवं, असिवोवसमं सिवं भवतु स्वाहा ॥१॥

५१—श्रुतदेवता स्तुति

सुय देवयाए करेमि काउस्सग्गं। अन्नत्थ०

अर्थ—श्रुत देवता के लिए मैं कायोत्सर्ग करता हूँ।

कमल-दल विपुल-नयना,
कमल-मुखी कमल-गर्भ सम गौरी।
कमले स्थिता भगवती,
ददातु श्रुत-देवता सौख्यम् ॥ १ ॥

भावार्थ—जिसकी आँखें कमल के पत्र के समान विशाल हैं, जिसका मुख कमल के तुल्य सुन्दर है, जिसका वर्ण कमल के गर्भ के सदृश गौर है और जो कमल के आसन पर स्थित है ऐसी भगवती श्रुतदेवी हमें सुख दे ॥ १ ॥

५२—भुवनदेवता-स्तुति

भुवणदेवयाए करेमि काउस्सग्गं। अन्नत्थ०।

अर्थ—भुवनदेवता के लिये मैं कायोत्सर्ग करता हूँ।

ज्ञानादिगुणयुतानां, स्वाध्यायध्यानसंयमरतानाम्।
विदधातु भुवनदेवी, शिवं सदा सर्वसाधूनाम् ॥ १ ॥

भावार्थ—भुवनदेवता ऐसे सभी साधुओं का सदा कल्याण करती रहे, जो ज्ञान, दर्शन आदि गुणों से युक्त हैं और जो स्वाध्याय, ध्यान तथा संयम आदि में तत्पर बने हैं ॥ १ ॥

५१—क्षेत्रदेवता स्तुति

खित्तदेवयाए करेमि काउस्सग्गं । अन्नत्थ० ।

के लिये कायोत्सर्ग करता

समाहि-वत्तिआगारेणं; विगईओ + पच्चक्खाइ, अण्ण-त्थणाभोगेणं सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहत्थसंसिट्ठेणं, उक्खित्त-विवेगेणं, पडुच्च-मक्खिएणं पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं देसावगासियं भोग-परिभोगं + पच्चक्खाइ, अण्णत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, महत्तरागारेणं सव्व समाहि-वत्तिआगारेणं × वोसिरइ ॥

भावार्थ—सूर्य के उदय होने के समय से लेकर दो घड़ी दिन निकल आने पर्यन्त चारों आहारों का 'नमुक्कार सहियं मुट्ठिसहियं' पच्चक्खाण किया जाता है अर्थात् नवकार गिन कर मुट्ठी खोलने का संकेत कर के चार प्रकार के आहारों का त्याग किया जाता है। वे चार आहार ये हैं;—(१) अशन— रोटी आदि भोजन, (२) पान—पानी आदि पीने योग्य चीजें, (३) खादिम—फल, मेवा आदि और (४) स्वादिम—सुपारी, लवंग आदि मुखवास। इन चारों आहारों का त्याग चार आगारों (छूटों) को रख कर किया जाता है। वे चार आगार ये हैं,—(१) अनाभोग—बिलकुल याद न आना। (२) सहसाकार—मेघ बरसते या दही मथने आदि के समय, रोकने पर भी जल, छाँछ आदि त्याग की हुई वस्तुओं का मुख में चला जाना। (३) महत्तरागार विशेष निर्जरा आदि खास कारण से गुरु की आज्ञा पाकर निश्चय किये हुए समय के पहले ही पच्चक्खाण पार लेना। (४) सर्वसमाधिप्रत्ययाकार— तीव्र रोग

के लिये औषधि आदि ग्रहण करने के निमित्त निर्धारित समय के पहले ही पच्चक्खाण पार लेना। एक या एक से अधिक विकृतियों का त्याग किया जाता है। इस विकृति-त्याग में ये आठ आगार

आगार का मतलब यह है कि यदि उस समय त्याग की हुई वस्तु का सेवन किया जाय तो भी पच्चक्खाण का भंग नहीं होता।

[२)

* उग्गए सूरे नमुक्कारसहियं पच्चक्खाइ चउव्विहंपि आहारं—असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अण्णत्थणाभोगणं, सहसागारेणं वोसिरइ ॥ १ ॥

भावार्थ—सूर्योदय से ले कर दो घड़ी दिन निकलने पर्यन्त अशन पान, खादिम और स्वादिम इन चारों आहारों का नवकार गिन कर पाने का संकेत करके, त्याग किया जाता है, यह पच्चक्खाण इन दो आगारों को रख कर किया जाता है—अनाभोग और सहसाकार ॥ १ ॥

[२—पोरिसी साड्ढपोरिसी-पच्चक्खाण ।]

पोरिसिं ‡ साड्ढपोरिसिं, मुट्ठिसहिअं, पच्चक्खाइ। उग्गए सूरे, चउव्विहंपि---आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं; अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छण्ण-

* जो चौदह नियम धारता हो उसके लिए ये नवकारसी आदि के पच्चक्खाण हैं।

‡ पोरसी के पच्चक्खाण में 'साढ्पोरिसी' पद और साड्ढपोरिसी के पच्चक्खाण में 'पोरिसिं' पद नहीं बोलना चाहिए।

कालेणं, दिसामोहेणं, साहु-वयणेणं, सव्व-समाहि-वत्ति-यागारेणं, विगईओ पच्चक्खाइ इत्यादि +।

भावार्थ—सूर्योदय से लेकर एक प्रहर या डेढ़ प्रहर तक

मोहेणं, साहु-वयणेणं; महत्तरागारेणं, सव्व-समाहि-वत्तिय
गारेणं; विगईओ पच्च० ।

भावार्थ—सूर्योदय से लेकर पूर्वार्ध—दो प्रहर तक पच्च
क्खाण करना पुरिमड्ढ है और तीन प्रहर तक पच्चक्खाण करन
अवड्ढ है। इसके सात आगार हैं जिसमें छः पोरिसी के प
क्खाण के समान और 'महत्तराकार' नमुक्कार के तुल्य है।

[४—एकासण-बिआसण-पच्चक्खाण ।]

+पोरिसिं साड्ढपोरिसिं वा पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे
चउव्विहंपि आहारं—असणं, पाणं, खाइमं, साइम
अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छण्णकालेणं, दिसा
मोहेणं; साहु-वयणेणं, सव्व-समाहिवत्तियागारेणं; एकास
बिआसणं वा पच्चक्खाइ दुविहं तिविहंपि आहारं असण
खाइमं, साइमं अण्ण० सह० सागारिआगारेणं, आउंटण
पसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं, पारि० मह० सव्व०
देसावगासिय० इत्यादि ॥ ४ ॥

+एकाशनं, द्व्यशनं वा। द्विविधं त्रिविधमपि। सागारिकाकार
आकुञ्चनप्रसारणात्, गुर्वभ्युत्थानात् ।

* साधु के लिए एकासण, आंबिल, नीवी तथा तिविहाहार उपवा
के पच्चक्खाण में, यहाँ-ये छः आगार और होते हैं—"पाणस्स लेवा
वा, अलेवाडेण वा अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा,

भावार्थ—इस पच्चक्खाण में पोरिसी आदि का पच्च-क्खाण किया जाता है, इसलिए छः आगार पोरिसी के ही हैं। आसन-विभासन के ये आठ आगार हैं,—(१) अनाभोग

सह० पच्छण्ण० दिसा० साहु० सव्व० एकासणं एगट्ठाणं पच्चक्खाइ, दुविहं, तिविहं, चउव्विहंपि आहारं—असणं, खाइमं, साइमं, अण्ण० सह० सागा० गुरु० पारि० मह० सव्व० देसाव० इत्यादि पूर्ववत् ॥ ५ ॥

भावार्थ—एकासण के पच्चक्खाण की तरह इसका अर्थ जानना। फर्क केवल इतना ही है, कि एकासण के पच्चक्खाण में आठ आगार हैं और यहाँ 'आउंटणपसारेणं' आकार को छोड़कर बाकी सात आगार रखे जाते हैं ॥ ५ ॥

[६—आयंबिल-पच्चक्खाण।]

पोरिसिं साड्ढपोरिसिं वा पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे, चउव्विहंपि आहारं—असणं, पाणं, खाइमं, साइमं अण्णत्थ० सह० पच्छ० दिसा० साहु० सव्व० आयंबिलं पच्चक्खाइ, अण्णत्थ० सह० लेवालेवेणं, गिहत्थ-संसिट्ठेणं, उक्खित्त-विवेगेणं, पारिट्ठा० मह०, सव्व० एकासणं पच्चक्खाइ, तिविहंपि आहारं—असणं, खाइमं, साइमं; अण्ण० सह० सागा० आउंटण० गुरु० पारि० मह० सव्व० वोसिरइ ॥ ६ ॥

भावार्थ—आयंबिल में पोरिसी या साढपोरिसी तक … आगार-पूर्वक चारों आहारों का त्याग किया जाता है। इस कि…

इसके पूर्व में पोरिसी या साढपोरिसी का पच्चक्खाण है, पीछे
आयंबिल करने का पच्चक्खाण आठ आगार सहित है। आयं-
बिल में एक दफा जीमने के बाद पानी के सिवाय तीनों आहारों

के पच्चक्खाण की तरह ही सब अर्थ समझना चाहिए, केवल आगार में इतना विशेष है कि वहाँ आठ हैं और यहाँ 'प्रतीत्य-म्रक्षित' को मिलाकर नव आगार रखे जाते हैं॥ ७॥

[८—चउव्विहाहार-उपवास-पच्चक्खाण।]

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ। चउव्विहंपि आहारं—असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अण्णत्थ० सह० मह० सव्व० वोसिरइ॥ ८॥

भावार्थ—इस पच्चक्खाण में सूर्योदय से लेकर दूसरे रोज के सूर्योदय तक चार आगार रख कर चारों आहारों का त्याग किया जाता है॥ ८॥

[९—तिविहाहार-उपवास-पच्चक्खाण।]

सूरे उग्गए, अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ। तिविहंपि आहारं असणं, खाइमं, साइमं, अण्णत्थ० सह० पाणहार पोरिसिं, साड्ढपोरिसिं, पुरिमड्ढं, अवड्ढं वा पच्चक्खाइ अण्णत्थ० सह० पच्छण्ण० दिसा० साहु० सव्व० देसावगासियं इत्यादि पूर्ववत्॥ ९॥

भावार्थ—सूर्योदय से लेकर दूसरे रोज के सूर्योदय तक तिविहार अभक्तार्थ-उपवास का पच्चक्खाण किया जाता है। इसमें पाँच आगार रख कर पानी के सिवाय तीन आहारों का [त्याग] किया जाता है। पानी भी पोरिसी, साड्ढपोरिसी आदि

न पा: आगार रख पर जोर दिया जाता है; इसी लिए 'पाप-दुए पोरिसी' इत्यादि पाठ है।

[१०—दृष्टि-पच्चक्खाण।]

गारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व-समाहि-वत्तियागारेणं वोसिरइ ॥ ११ ॥

भावार्थ—इस पच्चक्खाण से दिन के शेष भाग से संपूर्ण रात्रि पर्यन्त चारों आहारों का त्याग किया जाता है ॥११॥

[१२—दिवसचरिम-दुविहाहार-पच्चक्खाण ।]

दिवसचरिमं पच्चक्खाइ, दुविहंपि आहारं-असणं, खाइमं; अणत्थ० सह० मह० सव्व० वोसिरइ ॥ १२ ॥

भावार्थ—इस पच्चक्खाण से दिन के शेष भाग से लेकर संपूर्ण रात्रि पर्यन्त पानी और मुखवास को छोड़कर शेष दो आहारों का त्याग किया जाता है ॥ १२ ॥

[१३—पाणहार पच्चक्खाण]

पाणहार दिवसचरिमं पच्चक्खाइ, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व-समाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ ॥ १३ ॥

भावार्थ—यह पच्चक्खाण दिन के शेष भाग से लेकर संपूर्ण रात्रि-पर्यन्त पानी का त्याग करने के लिये है ॥ १३ ॥

[१४—भवचरिम-पच्चक्खाण]

भवचरिमं पच्चक्खाइ, तिविहं चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अणत्थ० सह० मह० ० वोसिरइ ॥ १४ ॥

भावार्थ—अन्त समय में यह पच्चक्खाण किया जाता है। इस पच्चक्खाण में चार के स्थान में दो आगार भी रखे जा सकते हैं ॥१४॥

५५—पच्चक्खाण-आगार-संख्या

दो चेव नमुक्कारे, आगारा छच्च हुंति पोरिसिए।
सत्तेव य पुरिमड्ढे, एगासणयम्मि अट्ठेव ॥ १ ॥
सत्तेगट्ठाणस्स उ, अट्ठे य अंबिलम्मि आगारा।
पंचेव अब्भत्तट्ठे छप्पाणे चरिम चत्तारि ॥ २ ॥
पंच चउरो अभिग्गहे, निव्वीए अट्ठ नव य आगारा।
अप्पावरणे पंचउ, हवंति सेसेसु चत्तारि ॥ ३ ॥

भावार्थ—नवकारसी के पच्चक्खाण में दो, पोरिसी छह पुरिमड्ढ में सात, एकासण में आठ, एकठाणे में सात, आं बिल में आठ, उपवास में पाँच, पाणहार में छह, चरि पच्चक्खाण में चार, अभिग्रह-पच्चक्खाण में चार या पाँ निर्विकृति में आठ या नव अप्रावरण में पाँच और शेष प्रत्य ख्यानों में चार आगार होते हैं। इनका विस्तार से विव पूर्वोक्त पच्चक्खाण-सूत्र में यथास्थान किया गया है ॥१-३॥

अथ सप्त स्मरणानि

५६—अजित शांति स्तवन

और महान् है और जिन्होंने यथार्थ तत्वों को पूर्णतया जाना है, उन श्रीअजितनाथ तथा शान्तिनाथ का मैं स्तवन करूँगा ॥२॥

सव्व-दुक्ख- प्पसंतीणं, सव्व—पाव - प्पसंतीणं।
सया अजिय—संतीणं, नमो अजिअ संतिणं ॥ ३ ॥
(सिलोगो)

भावार्थ—इस श्लोक-नामक छन्द में दोनों तीर्थंकरों को नमस्कार किया है।

जिनको न तो किसी तरह का दुःख बाकी है और न किसी तरह का पाप और जो हमेशा अजेय—नहीं जीते जा सकने वाले—तथा शान्ति धारण करने वाले हैं, ऐसे श्री अजितनाथ तथा श्री शान्तिनाथ दोनों को नमस्कार हो ॥ ३ ॥

अजिअ-जिण ! सुह-पवत्तणं,
तव पुरिसुत्तम ! नाम-कित्तणं।
तह य धिइ-मइ प्पवत्तणं,
तव य जिणुत्तम संति ! कित्तणं ॥४॥
(मागहिआ)

भावार्थ—इस छन्द का नाम मागधिका है। इसमें दोनों तीर्थंकरों के स्तवन की महिमा का वर्णन है।

हे पुरुषों में उत्तम श्रीअजितनाथ ! तथा जिनों में उत्तम श्रीशान्तिनाथ ! आप दोनों के नाम का स्तवन सुख देने वाला तथा धैर्य और बुद्धि प्रकटाने वाला है ॥ ४ ॥

चिरिया-विरि-संचिअ-कम्म-किलेस-विमुक्खयरं,
अजिअं निचिअं च गुणेहिं महा-मुणि-सिद्धि-गयं ।
अजिअस्स य संति-महा-मुणिणो वि अ संतिकरं,

और महान् है और जिन्होंने यथार्थ तत्वों को पूर्णतया है, उन श्रीअजितनाथ तथा शान्तिनाथ का मैं स्तवन करूँ

सव्व-दुक्ख- प्पसंतीणं, सव्व—पाव - प्पसंतीणं ।
सया अजिय—संतीणं, नमो अजिअ संतिणं ॥ ३

(सिलोगो)

भावार्थ—इस श्लोक-नामक छन्द में दोनों तीर्थंकरों नमस्कार किया है।

जिनको न तो किसी तरह का दुःख बाकी है और न किसी तरह का पाप और जो हमेशा अजेय—नहीं जीते जा सकने वाले—तथा शान्ति धारण करने वाले हैं, ऐसे श्री अजित तथा श्री शान्तिनाथ दोनों को नमस्कार हो ॥ ३ ॥

अजिअ-जिण ! सुह-पवत्तणं,
तव पुरिसुत्तम ! नाम-कित्तणं ।
तह य धिइ-मइ प्पवत्तणं,
तव य जिणुत्तम संति ! कित्तणं ॥४॥

(मागहिआ)

भावार्थ—इस छन्द का नाम मागधिका है। इसमें दोनों तीर्थंकरों के स्तवन की महिमा का वर्णन है।

हे पुरुषों में उत्तम श्रीअजितनाथ ! तथा जिनों में उत्तम श्रीशान्तिनाथ ! आप दोनों के नाम का स्तवन सुख देने वाला तथा धैर्य और बुद्धि प्रकटाने वाला है ॥ ४ ॥

किरिआ-विहि-संचिअ-कम्म-किलेस-विमुक्खयरं,
अजिअं निचिअं च गुणेहिं महा-मुणि-सिद्धि-गयं ।
अजिअस्स य संति-महा-मुणिणो वि अ संतिकरं,

अरइ-रइ-तिमिर-विरहिअमुवरय-जर-मरणं,
सुर-असुर-गरुल-भुयग-वइ-पयय-पणिवइयं ।
अजिअमहमवि अ सुनय-नय-निउणमभयकरं,
सरणमुवसरिअ भुवि-दिविज-महिअं सययमुवणमे
॥ ७ ॥ [संगययं]

भावार्थ—यह संगतक नाम का छन्द है। इसमें केवल श्रीअजितनाथ का गुण-कीर्तन है।

जो हर्ष, खेद तथा अज्ञान से परे हैं, जो जरा-मरण से मुक्त हैं, जिनको देवों के, असुरकुमारों के, सुवर्णकुमारों के, और नागकुमारों के स्वामियों ने आदर-पूर्वक प्रणाम किया है, जो सुनीति और न्याय में कुशल है, जो अभय-दाता है और मनुष्य-लोक तथा स्वर्ग-लोक के प्राणियों ने जिनकी पूजा की है, उन श्री अजितनाथ की शरण पाकर मैं उनको सदा नमन करता हूँ ॥ ८ ॥

तं च जिणुत्तममुत्तम-नित्तम-सत्तधरं,
अज्जव-मद्दव-खंति-विमुत्ति-समाहि-निहिं ।
संतिकरं पणमामि दमुत्तम-तित्थयरं,
संति-मुणी मम संति-समाहि-वरं दिसउ ॥ ८ ॥
[सोवाणयं]

भावार्थ—इस छन्द का नाम सोपानक है। इसमें केवल न्तिनाथ की स्तुति

जो स्वयं क्रोध, अज्ञान, हिंसा आदि तमोगुण के दोषों से रहित होते हुए ज्ञान-चक्र को धारण करने वाला है, जो सरलता, निरपेक्षता, क्षमा, निर्लोभता और समाधि का भण्डार है, जो

अरइ-रइ-तिमिर-विरहिअमुवरय-जर-मरणं,
सुर-असुर-गरुल-भुयग-वइ-पयय-पणिवइयं ।
अजिअमहमवि अ सुनय-नय-निउणमभयकरं,
सरणमुवसरिअ भुवि-दिविज-महिअं सययमुवणमे
॥ ७ ॥ [संगययं]

भावार्थ—यह संगतक नाम का छन्द है। इसमें केवल श्रीअजितनाथ का गुण-कीर्तन है।

जो हर्ष, खेद तथा अज्ञान से परे हैं, जो जरा-मरण से मुक्त हैं, जिनको देवों के, असुरकुमारों के, सुवर्णकुमारों के, और नागकुमारों के स्वामियों ने आदर-पूर्वक प्रणाम किया है, जो सुनीति और न्याय में कुशल है, जो अभय-दाता है और मनुष्य-लोक तथा स्वर्ग-लोक के प्राणियों ने जिनकी पूजा की है, उन श्री अजितनाथ की शरण पाकर मैं उनको सदा नमन करता हूँ ॥ ८ ॥

तं च जिणुत्तममुत्तम-नित्तम-सत्तधरं,
अज्जव-मद्दव-खंति-विमुत्ति-समाहि-निहिं ।
संतिकरं पणमामि दमुत्तम-तित्थयरं,
संति-मुणी मम संति-समाहि-वरं दिसउ ॥ ८ ॥
[सोवाणयं]

भावार्थ—इस छन्द का नाम सोपानक है। इसमें केवल श्रीशान्तिनाथ की स्तुति है।

जो स्वप्न तथा अज्ञान, हिंसा आदि तमोगुण के दोषों से रहित है, हुए काम-बाण को धारण करने वाला है, जो सरलता, कोमलता, , निर्लोभता और समाधि का भण्डार है, जो

से जिनकी देह नमी हुई है, मणि और सुवर्ण की बनी हुई कुछ ढीली मेखला से जिनकी कमर सुशोभित है, जिन्होंने अच्छे-अच्छे घुँघरू वाले झाँझर, सुन्दर तिलक और कंकण से सिंगार किया है, जिनका सुन्दर रूप प्रीति-कारक होने से चतुर लोगों के मन को खींचने वाला है, जिनके शरीर से तेज प्रकट होता है, जिन्होंने नेत्रों में काजल, ललाट में तिलक और गाल पर चित्रलेखा (कस्तूरी आदि सुगन्धित पदार्थों की चित्र-रचना) इत्यादि प्रकार के सुन्दर शृङ्गारों की विधि—रचना करके शरीर को अलंकृत किया है, ऐसी देवाङ्गनाओं ने भक्ति से सिर झुका कर जिन भगवान् के चरणों को सामान्य तथा विशेष-रूप से बार-बार वन्दन किया, उस मोह-विजयी और सब क्लेशों को दूर करने वाले अजितनाथ जिनेन्द्र को मैं बहुमान-पूर्वक प्रणाम करता हूँ ॥ २६—२६ ॥

थुअ वंदिअस्सा रिसि-गण-देव-गणेहिं,
तो देव-वहूहिं पयओ पणमिअस्सा ।
जस्स जगुत्तम-सासणअस्सा,
भत्ति-वसागय-पिंडिअयाहिं ।
देव-वरच्छरसा-बहुआहिं,
सुर-वर-रइ-गुण-पंडिअयाहिं ॥ ३० ॥

[भासुरयं] ।

वंस-सद्द-तंति-ताल-मेलिए तिउक्खराभिराम-सद्द-मीसए

कए अ, सुइ-समाणणे अ सुद्ध-सज्ज-गीयपायजाल-

ऋषियों, देवों और देवाङ्गनाओं के द्वारा सादर स्तुत्य, वन्दित तथा प्रणत और सर्वोत्तम शासन के प्रवर्तक, ऐसे जिन भगवान् के चरणों को वन्दन किया, उस तीन लोक के शान्तिकारक तथा सकल पाप-दोष-रहित श्री शान्तिनाथ जिनेश्वर को मैं भी नमन करता हूँ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

छत्त-चामर-पडाग-जूअ-जव-मंडिआ,
झय वर-मगर-तुरय-सिरिवच्छ-सुलंछणा ।
दीव-समुद्द-मंदर-दिसागय-सोहिआ,
सत्थिअ-वसह-सीह, रह-चक्क-वरंकिया ॥ ३२ ॥
(ललिअयं) ।

सहाव-लट्ठा सम-प्पइट्ठा,
अदोस-दुट्ठा गुणेहिं जिट्ठा ।
पसाय-सिट्ठा तवेण पुट्ठा,
सिरीहिं इट्ठा रिसीहिं जुट्ठा ॥ ३३ ॥
(वाणवासिआ)

ते तवेण धूअ-सव्व-पावया,
सव्व-लोअ-हिअ-मूल-पावया ।
संथुआ अजिअ-संति-पायया,
हुंतु मे सिव-सुहाण दायया ॥ ३४ ॥
(अपरांतिका) ।

भावार्थ—इन ऊष्णिक, वानवासिका तथा अपरान्तिका नामक तीन छन्दों में श्रीअजितनाथ तथा शान्तिनाथ दोनों की

ववगय-कम्म-रय-मलं,
गइं गयं सासयं वउलं ॥ ३५ ॥
(गाहा) ।

भावार्थ—इस गाथा-नामक छन्द में स्तवन का उपसंहार है। जिनका तपोबल अपरिमित है, जिनके सब कर्म नष्ट हुए हैं और जो शाश्वती तथा विशाल मोक्ष-गति को पाये हुए हैं, ऐसे श्रीअजितनाथ तथा शान्तिनाथ जिनेश्वर का मैंने इस प्रकार स्तवन किया ॥ ३५ ॥

तं बहु-गुण-प्पसायं
मुक्ख-सुहेण परमेण अविसायं ।
नासेउ मे विसायं,
कुणउ अपरिसावि अ पसायं ॥ ३६ ॥
(गाहा)

भावार्थ—इस छन्द का और आगे के छन्दों का नाम गाथा है, दोनों छन्दो में प्रार्थना है।

जिनमें ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि अनेक गुण परिपूर्ण विकसित हैं, जिन्हें सर्वोत्तम मोक्ष-सुख प्राप्त होने के कारण शोक नहीं है, वे श्रीअजितनाथ तथा शान्तिनाथ दोनों मेरे विषाद को हरें और कर्म के आश्रव को दूर करने का अनुग्रह करें ॥ ३६ ॥

तं मोएउ अ नंदिं, पावेउ अ नंदिसेणमभिनंदिं ।
परिसा वि अ सुह-नंदिं, मम य दिसउ संजमे नंदिं ॥३७॥

भावार्थ—जो मनुष्य इस अजित-शान्ति-स्तवन को सुबह शाम दोनों वक्त पढ़ता या सुनता है; उसको नये रोग नहीं होते हैं और पहले के भी नष्ट हो जाते हैं ॥ ३९ ॥

जइ इच्छह परम-पयं,
अहवा कित्ति सुवित्थडं भुवणे ।
ता तेलुक्कुद्धरणे,
जिण-वयणे आयरं कुणह ॥ ४० ॥

भावार्थ—अगर तुम लोग मोक्ष की या तीन जगत् में यश फैलाने की चाह रखते हो तो समस्त विश्व का उद्धार करने वाले जिन-वचन का बहुमान करो ॥ ४० ॥

इति श्रीबृहद्-अजित-शान्ति-स्मरणं समाप्तम् ॥



भक्तामर स्तोत्र २११

भक्तामर स्तोत्र

श्री । मैं

भावार्थ—जो मनुष्य इस अजित-शान्ति-स्तवन को सुब
शाम दोनों वक्त पढ़ता या सुनता है; उसको नये रोग नह
होते हैं और पहले के भी नष्ट हो जाते हैं ॥ ३९ ॥

जइ इच्छह परम-पयं,
अहवा किर्त्ति सुवित्थडं भुवणे ।
ता तेलुक्कुद्धरणे,
जिण-वयणे आयरं कुणह ॥ ४० ॥

भावार्थ—अगर तुम लोग मोक्ष की या तीन जगत्
यश फैलाने की चाह रखते हो तो समस्त विश्व का उद्धा
करने वाले जिन-वचन का बहुमान करो ॥ ४० ॥

इति श्रीबृहद्-अजित-शान्ति-स्मरणं समाप्तम् ॥



भक्तामर-स्तोत्र

भी स्तोत्र क स्तोत्र । में

श्रीमन्मानतुङ्गसूरिविरचित

आदिनाथस्तोत्र

भाषाटीका तथा पद्यानुवादसहित।

वसन्ततिलका वृत्तम्।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा-
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्।
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥ १

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥ २

(युग्मम्)

जो सुरनके नत-मुकुटमनिकी, प्रभाको परकासते।
पुनि पापरूपी प्रबल अतिशय, तिमिरपुँज विनासते॥
अरु जो परे भवजल, दियो, अवलम्ब तिनहिं युगादिमें।

जिनदेव के तिन चरनयुगको, नमन करके आदिमें ॥१॥

मैं शक्तिबिन हू करहुं थुति, जगत्रय पद्यो सुखकारिनी ।

तिन प्रथम जिनकी परमपावन, अरु भवोदधितारिनी ॥

श्रीमन्मानतुङ्गसूरिविरचित

आदिनाथस्तोत्र

भाषाटीका तथा पद्यानुबादसहित।

वसन्ततिलका वृत्तम्।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा-
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्।
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥
यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥ २

(युग्मम्

ो सुरनके नत-मुकुटमनिकी, प्रभाको परकासते।
नि पापरूपी प्रबल अतिशय, तिमिरपुँज विनासते॥
रु जो परे भवजल, दियो, अवलम्ब तिनहिं युगादिमें।

जिनदेव के तिन चरनयुगको, नमन करके आदिमें —॥१॥
मैं शक्तिबिन हू करहु थुति, अपरज बड़ो, सुखकारिनी।
तिन प्रथम जिनकी परमपावन, अरु, भवोदधितारिनी॥

श्रीमन्मानतुङ्गसूरिविरचित

आदिनाथस्तोत्र

भाषाटीका तथा पद्यानुवादसहित

वसन्ततिलका वृत्तम् ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा-
 मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
 वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥ १

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
 दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः
 स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥ २

(युग्मम्

जो सुरनके नत-मुकुटमनिकी, प्रभाको परकासते ।
पुनि पापरूपी प्रबल अतिशय, तिमिरपुंज विनासते ॥
अरु जो परे भवजल, दियो, अवलम्ब तिनहिं युगादिमें ।

जिनदेव के तिन चरनयुगको, नमन करके आदिमें —॥१॥
मैं शक्तिबिन हू करहुं थुति, भवरुज हरो सुखकारिनी।
तिन प्रथम जिनकी परमपावन, अरु भवोदधितारिनी॥२॥

श्रीमन्मानतुङ्गसूरिविरचि

आदिनाथस्तोत्र

भाषाटीका तथा पद्यानुवादसहित।

वसन्ततिलका वृत्तम्।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा-
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्।
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥ १

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥ २।

(युग्मम्)

जो सुरनके नत-मुकुटमनिकी, प्रभाको परकासते।
पुनि पापरूपी प्रबल अतिशय, तिमिरपुंज विनासते॥
अरु जो परे भवजल, दियो, अवलम्ब तिनहिं युगादिमें।

जिनदेव के तिन चरनयुगको, नमन करके आदिमें —॥१॥
मैं शक्तिबिन हू करहुं थुति, अचरज बडो सुखकारिनी।
तिन प्रथम जिनकी परमपावन, अरु भवोदधितारिनी ॥

कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रं
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥ ४ ॥

हे गुणनिधे, शशिसम समुज्ज्वल, कहन तुव गुनगनकथा।
सुरगुरुनके सम हू गुनीजन, हैं न समरथ सर्वथा॥
जामें प्रलयके पवनसों, उछरत प्रबल जलजंतु हैं।
तिस जलधिकहँ जिस भुजनसों, तिर सकैं को बलवंतु हैं ॥४॥

भावार्थ—जैसे प्रलयकालके भयानक दुस्तर समुद्र को कोई भुजाओं से नहीं तैर सकता है, उसी प्रकार मैं भी आपके गुणों का वर्णन करने में असमर्थ हूँ ॥ ४ ॥

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश
कर्त्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः।
प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं
नाऽभ्येति किं निजशिशोःपरिपालनार्थम् ॥५॥

मुनिनाथ, मैं उद्यत भयउ जो, विरद पावन गानकों।
सो एक तुव पदभक्ति के वश, भूलि निजबलज्ञानकों॥
ज्यों प्रीतिवश, निजबल विचारे विन, स्ववत्स बचाइवे।
अतिदीन हरिनी सिंहके, डरपै न सनमुख जाइवे ॥ ५ ॥

भावार्थ—जैसे हरिण अपने बच्चेको सिंहके पंजेमें फँसा देखकर उसकी प्रीतिके वशसे यद्यपि सिंहको जीत नहीं सकता है तो भी सामने लड़नेको दौड़ता है, उसी प्रकार मुझमें शक्ति नहीं

प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य
नाऽभ्येति किं f

मुनिनाथ, मैं उद्यत भयउ जो, विरद
सो एक तुव पदभक्ति के वश, भूलि निजब
ज्यों प्रीतिवश, निजबल विचारे विन, स्ववत्स
अतिदीन हरिनी सिंहके, डरपै न सनमुख जाइबे

भावार्थ—जैसे हरिण अपने बच्चेको सिंहके देखकर उसकी प्रीतिके वशसे यद्यपि सिंहको जीत नहीं तो भी सामने लड़नेको दौड़ता है. इसी प्रकार प्रभो

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥ ९

सब दोषरहित जिनेश तेरो, विरद तो दूरहि रहै।
तुव कथा ही इस जगतके सब, पापपुञ्जनको दहै।
सूरज रहत है दूर ही, पै तासुकी किरनावली।
सरवरनमें परि करत है, प्रमुदित सकल कुमुदावली ॥ ९ ॥

भावार्थ—सूर्यके उदयसे पहले जो उसकी प्रभा फैलती उससे ही जब कमल खिल उठते हैं, तब सूर्यके स्तोत्रसे क खिलेंगे इसमें तो कहना ही क्या है! इसी प्रकार आपकी क मात्रसे ही जब पाप नष्ट हो जाते हैं, तब आपके स्तोत्रसे होवेंगे ही। इसमें कुछ सन्देह नहीं है। सारांश यह कि आ यह स्तोत्र पापोंका नाश करनेवाला होगा ॥ ९ ॥

नात्यद्भुतं भुवनभूषणभूत नाथ
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥ १०

हे भुवनभूषनरूप प्रभु, इसमें न कछु अचरज रहा।
जो सत्यगुनगायक तिहारे, होंहि तव सम तव महा॥

बिन्दुः ॥ ८ ॥

जिनराज अस जिय जानिकै, यह आपकी विरदावली।
थोरी समझ मेरी तऊ, प्रारम्भ करत उतावली ॥
हरिहै सुमन सो सज्जननके, प्रभु-प्रभूत-प्रभावसों ।
जलबिन्दु जैसे जलज़दल परि, दिपत मुकताभावसों ॥ ८ ॥

भावार्थ—जैसे कमलिनीके पत्तों पर साधारण जलके बिन्दु भी उन पत्तोंके प्रभावसे मोती सरीखे जान पड़ते हैं, उसी प्रकार यह स्तोत्र यद्यपि अच्छा नहीं है, परन्तु आपके प्रभावसे नोंके चित्तको अवश्य हरेगा, अर्थात् उत्कृष्ट काव्योंकी श्रेणीमें जावेगा ॥ ८ ॥

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥ ९

सब दोषरहित जिनेश तेरो, विरद तो दूरहि रहै।
तुव कथा ही इस जगतके सब, पापपुञ्जनको दहै।
सूरज रहत है दूर ही, पै तासुकी किरनावली।
सरवरनमें परि करत है, प्रमुदित सकल कुमुदावली ॥ ९ ॥

भावार्थ—सूर्यके उदयसे पहले जो उसकी प्रभा फैलती
उससे ही जब कमल खिल उठते हैं, तब सूर्यके स्तोत्रसे क
खिलेंगे इसमें तो कहना ही क्या है! इसी प्रकार आपकी
मात्रसे ही जब पाप नष्ट हो जाते हैं, तब आपके स्तोत्रसे
होवेंगे ही। इसमें कुछ सन्देह नहीं है। सारांश यह कि आ
यह स्तोत्र पापोंका नाश करनेवाला होगा ॥ ९ ॥

नात्यद्भुतं भुवनभूषणभूत नाथ
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥ १०

हे भुवनभूषनरूप प्रभु, इसमें न कछु अचरज रहा।
जो सत्यगुनगायक तिहारे, होहिं तव सम नर महा॥

न्दुः ॥ ८ ॥

जिनराज अस जिय जानिकै, यह आपकी विरदावली।
थोरी समझ मेरी तऊ, प्रारम्भ करत उतावली ॥
हरिहै सुमन सो सज्जननके, प्रभु-प्रभूत-प्रभावसों।
जलबिन्दु जैसे जलजदल परि, दिपत मुक्ताभावसों ॥ ८ ॥

भावार्थ—जैसे कमलिनीके पत्तों पर साधारण जलके बिन्दु भी उन पत्तोंके प्रभावसे मोती सरीखे जान पड़ते हैं, उसी प्रकार यह स्तोत्र यद्यपि अच्छा नहीं है, परन्तु आपके प्रभावसे नोंके चित्तको अवश्य हरेगा, अर्थात् उत्कृष्ट काव्योंकी श्रेणीमें जावेगा ॥ ८ ॥

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥ ९

सब दोषरहित जिनेश तेरो, विरद तो दूरहि रहै।
तुव कथा ही इस जगतके सब, पापपुञ्जनको दहै।
सूरज रहत है दूर ही, पै तासुकी किरनावली।
सरवरनमें परि करत है, प्रमुदित सकल कुमुदावली ॥ ९ ॥

भावार्थ—सूर्यके उदयसे पहले जो उसकी प्रभा फैलती उससे ही जब कमल खिल उठते हैं, तब सूर्यके स्तोत्रसे क खिलेंगे इसमें तो कहना ही क्या है! इसी प्रकार आपकी च मात्रसे ही जब पाप नष्ट हो जाते हैं, तब आपके स्तोत्रसे होवेंगे ही। इसमें कुछ सन्देह नहीं है। सारांश यह कि आप यह स्तोत्र पापोंका नाश करनेवाला होगा ॥ ९ ॥

नात्यद्भुतं भुवनभूषणभूत नाथ
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥

हे भुवनभूषनरूप प्रभु, इसमें न कछु अचरज रहा।
जो सत्यगुनगायक तिहारे होहिं तव सम ...

ल य, जिनेश तुमहिं विलोकके।
पुनि और ठौर न तोष पावहिं, जननयन इस लोकके॥
शशिप्रभाके सम नीर पीकर, छीरनिधिको पावनो।
को पियन चाहत सरितपतिको, खारजल असुहावनो॥ ११॥

भावार्थ—जैसे क्षीरसमुद्रके जलको पीनेवाला फिर खारा पानी पीनेकी इच्छा नहीं करता है, उसी प्रकार जो आपका दर्शन कर लेता है, उसे फिर दूसरे देवोंके देखनेसे संतोष नहीं होता॥ ११॥

यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत।

तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥ १२

त्रिभुवनशिरोभूषण, अनूपम, शान्तभावनसों भरे।
जिन रुचिर शुचि परमानुवनसों, आप बनिके अवतरे॥
ते अनु हते जगमें तिते ही, जानि मुहि ऐसी परै।
तातैं अपूरव आप जैसो, रूप नहिं कहुँ लखि परै॥ १२॥

भावार्थ—हे भगवन्, आपके शरीरकी रचना पुद्गलपरमाणुओं हुई है, वे परमाणु संसारमें उतने ही थे। कि यदि वे परमाणु अधिक होते, तो आप जैसा रूप औरोंका दिखलाई देता। परन्तु यथार्थमें आपके समान रूपवान् पृथ कोई दूसरा नहीं है॥ १२॥

वक्त्रंक्वते सुरनरोरगनेत्रहारि
निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम्।
बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥ १३

कहँ सुरउरगनरनयन आनन्द,—करन तुव मुखचंद है।
तिहुँलोक उपमावृन्द जिहिके, होत सनमुख मंद है॥
अरु कहाँ शशिको मलिन बिम्ब, कलंकवारो दाससौ॥
जो होय दिनके होत ही, छबिहीन स्वेत पलाससौ॥ १३॥

भावार्थ—जिन उत्तम गुणोंने आपका आश्रय लिया है, गुण जहाँ तहाँ इच्छापूर्वक गमन करते हैं, उन्हें कोई रोक नहीं सकता है। क्योंकि वे आप जैसे तीन लोकके आश्रित हैं और इसी कारण अर्थात् उन गुणोंके सर्वत्र विचरनेसे-तीन लोक उन्हीं से व्याप्त हो रहा है ॥ १४ ॥

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि-
नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् ।
कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥ १५ ॥

अचरज कहो इसमें कहा, तुव अचल मनको मदछकी।
जो सुघर सुरवनिता न तनिक हु, सुपथसों च्युत कर सकी ॥
जिहिने चलाये अचल ऐसो, प्रलयको मारुत महा।
गिरिराज मंदरके शिखरकहँ, सो चलाय सके कहा? ॥ १५ ॥

भावार्थ—प्रलयकालकी हवासे सब पर्वत चलायमान जाते हैं; परन्तु सुमेरुपर्वत किंचित् भी चलायमान नहीं हो इसी प्रकार यद्यपि देवांगनाओंने सम्पूर्ण ही ब्रह्मादिक देवोंके चलायमान कर दिये, परन्तु आपका चित्त रंचमात्र भी वि युक्त नहीं हुआ ॥१५॥

निर्धूमवर्तिरपवर्जिततैलपूरः
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥ १६

हि मेल बाती तेलको, नहि नेकु जामें धूम हु।
रु करत है परगट निरंतर, जो जगत ये तीन हु ॥
ापे पवनबल चलब नहि, चल करत जो गिरवर अहो!
नाथ, तुम ऐसे अपूरब, जगप्रकाशक दीप हो ॥ १६ ॥

भावार्थ—संसारमें जो दीपक दिखाई देते हैं, उनमें ौर बत्ती होती हैं, परन्तु आपमें वे (द्वेषरूपी धुआं और का राम्यस्वरूप बत्ती) नहीं हैं। दीपकोंमें तेल होता है अ ि अर्थात स्नेह (राग) नहीं है। दीपक जरा सी हवाके झो

, म हार, भानुहुत महत ॥ १७ ॥

भावार्थ—सूर्य सन्ध्याको अस्त हो जाता है, आप सदाकाल प्रकाशित रहते हैं। सूर्य एक जम्बूद्वीपको ही प्रकाशित करता है, आप तीन जगतके सम्पूर्ण पदार्थोंको प्रकाशित करते हैं। सूर्यको राहु ग्रहण लगता है, आपको किसी प्रकारके दुष्कृत प्राप्त नहीं होते। सूर्यका प्रताप मेघ ढक लेते हैं, आपका प्रताप मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलादि ज्ञानावरणीय कर्मोंके आवरणसे रहित है। इस प्रकार हे मुनिनाथ, आप सूर्यसे भी बड़े सूर्य हैं ॥१७॥

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं
गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम्

विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति

विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥ १८

जो उदयरूप रहे सदा, पुनि मोहको तम हनत है।
मुख राहुके न परे कबहुँ, जिहिको न वारिद ढकत है॥
हे नाथ, सो मुखकमल तुम, धारत प्रकाश अमंद है।
सोहत जगत-उद्योतकारी, अति अपूरब चंद है॥ १८॥

भावार्थ—आपका मुखकमल एक विलक्षण चन्द्रमा क्योंकि चन्द्रमा तो केवल रात्रिमें ही उदित होता है, परन्तु आप मुख सदा ही उदयरूप रहता है, चन्द्रमा साधारण अन्धकार नाश करता है, परन्तु आपका मुख अज्ञान अथवा मोहनीयकर्म महाअन्धकारको नष्ट करता है। चन्द्रमाको राहु ग्रसता है, बा छुपा लेते हैं, परन्तु आपके मुखको ढकनेवाला कोई नहीं, चन्द्रमा पृथ्वीके कुछ भागको प्रकाशित करता है, परन्तु आप मुख तीन जगतको प्रकाशित करता है। चन्द्रमा थोड़ी कान्तिवा है, परन्तु आपके मुखकी कान्ति अनन्त है॥ १८॥

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा

युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमःसु नाथ।

निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके।

कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः॥ १९॥

हे नाथ, यदि तुम तमहरन वर, मुखमयंक अमंद है।
तौ व्यर्थ ही सूरज दिवसकौं और निशिमें चंद है॥

जो स्वपरभावप्रकाशकारी, लसत तुममें ज्ञान है।
सो हरिहरादिक नायकोमें, नाहिं होवत मान है॥
जैसो प्रकाश महान मनिमें, महत्तताको लहत है।
तैसो न कबहुँ कांतिजुत हू, काचमें लख परत है॥ २०॥

भावार्थ—जो प्रकाश मणियोंमें शोभाको पाता है, वह कांचके टुकड़ों में नही पा सकता। इसी प्रकार जैसा स्वपरप्रकाशक ज्ञान आपमें है, वैसा अन्य विष्णु महादेव आदि देवोंमें नहीं पाया जाता॥ २०॥

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति

किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः

कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥ २

नरेन्द्रछन्द या जोगीरासा।

हरिहर आदिक देवनको ही, अवलोकन मोहि भावै।
जिनहिं निरखकर जिनवर, तुममें, हृदय तोष अति पावै।
पै कहा तुम दरसनसों भगवन्? जो इस जगके माहीं।
परभव में हू अन्य देव मन, हरिवे समरथ नाहीं ॥

भावार्थ—हरिहरादिक देवोंको देखना अच्छा है। कि जब हम उन्हें देखते हैं, और रागद्वेषादि दोषों से भरे पाते हैं, तब आप में हमको अति संतोष होता है। क आप वीतराग सर्व दोषों से रहित हैं। किन्तु आपके देखन क्या लाभ? कुछ नहीं। क्योंकि आपको देख लेने से संसार का कोई भी देव मन को हरण नहीं कर सकता। स दूसरों को देखने से तो आपमें संतोष होता है, यह लाभ है आपके देखने से फिर किसी भी देव की ओर चित्त नहीं अ यह हानि है। (व्याजनिंदा और व्याजस्तुति अलंकार)॥

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रा-

न्नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।

सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं

नान्यः वः वपदस्य मु न्द्रपन्थाः ॥ २३ ॥

हे मुनीश, मुनिजन तुमकहँ नित परमपुरुष परमानैं।
अंधकार नाशन के कारन, दिनकर अमल सु जानैं ॥
तुम पाये तै भलीभांतिसों, नीच मीच जय होई।
यासों तुमहिं छांडि शिवप्रदपथ, विघनरहित नहिं कोई ॥२३॥

भावार्थ—साधु मुनियों के समूह आपको परमपुरुष मानते हैं। रागद्वेषरूपी मल से आप रहित हैं, इस कारण निर्मल मानते हैं। मोह अंधकार को आप नाश करते हैं, इस कारण सूर्य के समान मानते हैं। आपके प्राप्त होनेसे मृत्यु नहीं आती, इस कारण मृत्युंजय मानते हैं और आप के अतिरिक्त कोई निरुपद्रव

पुरुष

के योग्य हैं ॥ २५ ॥

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ॥ २६

तीनभुवन के विपदविदारक, तारनतरन नमस्ते ।
वसुधातल के निरमल भूषन, दूषनदरन नमस्ते ॥
तीनलोक के परमेश्वर जिन, विगतविकार नमस्ते ।
अति गम्भीर जगतजलनिधि के शोषनहार नमस्ते ॥२६॥

बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्त्ररश्मेः ॥ २९ ॥

मनिकिरननसों चित्रित दुतियुत, सिंहासन मन भावे।
तापै जिन, तुव कनकवरन तन, ऐसी उपमा पावे॥
तान वितान गगन में अपनी, किरननको सुखदाई।
ऊँचे उदयाचल के ऊपर, दिनकरबिम्ब दिखाई॥ २९॥

भावार्थ—उदयाचल पर्वत के शिखरपर जैसे सूर्यबिम्ब शोभा देता है, उसी प्रकार मणिजटित सिंहासन पर आपका शरीर शोभित होता है। (यह भगवान् के दूसरे प्रातिहार्यका वर्णन है।) ॥ २९ ॥

बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्त्ररश्मः ॥ २९

मनिकिरननसों चित्रित दुतियुत, सिंहासन मन भावै।
तापै जिन, तुव कनकवरन तन, ऐसी उपमा पावै॥
तान वितान गगन में अपनी, किरननको सुखदाई।
ऊँचे उदयाचल के ऊपर, दिनकरबिम्ब दिखाई॥ २९

भावार्थ—उदयाचल पर्वत के शिखरपर जैसे सूर्य शोभा देता है, उसी प्रकार मणिजटित सिंहासन पर शरीर शोभित होता है। (यह भगवान् के दूसरे प्रा वर्णन है।) ॥ २९ ॥

गन्धोदक बिन्दुनसौं पावन, मन्दपवन की प्रेरी।
पारिजात मन्दार आदि के, नवकुसुमन की ढेरी॥
ऊरधमुखि ह्वै नभसौं बरसत, दिव्य अनूप सुहाई।
मानो तुव वचनन की पंकति, रूपराशि धरि छाई॥ २३॥

भावार्थ—भगवान् के समवसरण में जो फूलों की व[र्षा]
होती है, वह ऐसी जान पड़ती है, मानो भगवान् के दिव्य वच[न]
ही फैल गये हों। (यह छठा प्रातिहार्य है।)॥ २३॥

शुम्भत्प्रभावलयभूरिविभा विभोस्ते
लोकत्रयद्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती।
प्रोद्यद्दिवाकरनिरन्तर भूरिसंख्या-
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्या।

जाकी अमित सुद्युतिके आगे, सब द्युतिवंत लजावैं।
अगनित उदित दिवाकर हू जिहि, समता नाहिं कर पावैं॥
है विभु, ऐसो तेजपुंज तुव, भामंडल अति नीको।
शशिसम सौम्य तऊ जीतत है, दीपतियों रजनीको॥ २४॥

भावार्थ—यह विरोधाभास अलंकार है। इसमें विरो[ध]
तो यह है कि 'सोमसौम्या' अर्थात् जो प्रभा चन्द्रमा की होग[ी]
वह रात्रि को सुशोभित करेगी। परन्तु यहाँ कहा है कि, जीतती
[अथवा] आच्छादित करती है। और विरोध का परिहार इस प्रकार होत[ा]
है कि 'दीप्त्या' अर्थात् दीप्ति से रात्रि को जीतती है, अर्थात् रात्रि
का अभाव करती है। तात्पर्य यह है कि, भामंडल की प्रभा

, त र ॥

गगनमाहिं पुनि तुव जसकी जो, महिमा गावत छाजै।
सो दुन्दुभि जिनराजविजयकी, करत घोषणा बाजै॥ ३२॥

भावार्थ—समवसरण में जो दुन्दुभि बजते हैं, वे यथार्थ में आपके यश का गायन करते हुए आपकी विजयघोषणा करते हैं। (यह पाँचवाँ प्रातिहार्य है।) ॥ ३२ ॥

मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजात-
सन्तानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा।
गन्धोदबिन्दुशुभमन्दमरुत्प्रपाता
दिव्या दिवःपतति ते वचसां ततिर्वा ॥ ३३

सुबरन-बरन खिले कमलन की, ललित कांति जो धारैं।
त्यों ही नख किरनन की बहुधा, छटा अनूप पसारैं॥
अस तुव चरनन को पग जहँ जहँ, परत अहो जिनराई।
तहँ तहँ पंकजपुंज अनूपम, रचत देवगन आई॥ २६॥

भावार्थ—जहाँ जहाँ भगवान् चरण रखते हैं वहाँ वहाँ पर देवता कमलों की रचना करते जाते हैं॥ २६॥

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र
धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा
तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि॥ २७॥

इहि विधि धर्मउपदेशावसर तुव, समवसरन के माहीं।
भई विभूति अपूरव है जिन, सो, औरन के नाहीं॥
जैसी प्रभा देखयतु रवि में, तेजवन्त तमहारी।
तैसी उडुगनमाहिं कहाँ है, यद्यपि करत उजारी॥ २७॥

भावार्थ—यद्यपि तारागण थोड़े बहुत चमकनेवाले होते हैं, तो भी वे सूर्य के समान प्रकाशित नहीं हो सकते। इसी प्रकार यद्यपि हरिहरादिक देव हैं, तो भी आपकी समवसरण जैसी विभूतिको वे धारण नहीं कर सकते॥ २७॥

श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल-
मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम्।

, , पुष वा। ॥ ३५॥

भावार्थ—भगवान् की वाणी में यह अतिशय है कि सुनने वालों की सम्पूर्ण भाषाओं में निर्मल रूप से उसका परिणमन हो जाता है। अर्थात् भगवान् की वाणी जो सुनता है वही अपनी भाषा में उसे सरलता से समझ लेता है। (आठवाँ प्रातिहार्य।)

॥ ३५ ॥

उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती
पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥

भावार्थ
भावों की सम्पूर्ण
भाता है। अर्थात्
भावा में भरे सर

पन्निग्रहेमनव
पर्युष्ठ
पाको पदानि
पमानि

विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥ ४० ॥

प्रलय-पवन-प्रेरित-पावकसी, विस्तृत अधिक उतंगा।
प्रजुलित उज्जल नभमें जिहिके, अगनित उड़त फुलिंगा ॥
ऐसी प्रबल दवानल जो सब, जगत भस्म करि डारे।
सोहू तुव गुनगाननीरसों, शीतलता विसतारे ॥ ४० ॥

भावार्थ—आपके गुणों का गान करने से बड़ी भा
[व]ाग्नि भी भक्तजनों का कुछ बिगाड़ नहीं सकती ॥ ४० ॥

रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनील
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तं।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्क-
स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१ ॥

कारो समद पिक-कंठसम, चख जासु अरुन भयावने।
कँपो करै फन फुंकरत, आवै चलो जो सामने ॥
तिहिं साँप के सिर पाँव देकरि, चले सो अति निडर हो।
तुव नामरूपी नागदमनी, धरत जो हियमें अहो ॥ ४१ ॥

भावार्थ—आपका नाम स्मरण करनेवाले भक्तजनों
भयङ्कर साँपों का भी कुछ भय नहीं होता है ॥ ४१ ॥

वल्गत्तुरङ्गगजगर्जितभीमनाद-
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्

क्रमगत ह ऽपि

नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥ ३९ ॥

जो मदमत्त गजन के उन्नत, कुंभ विदारिनखनसों।
सिंगारत भुवि रुधिरसुरञ्जित सुन्दर सित मोतिनसों॥
भरी छलाँग हतनकहँ जिहिने, ऐसे खल मृगपति के।
पंजनि परे बचैं तव-पद-गिरि,-आश्रित जन शुभमति के॥ ३९॥

भावार्थ—आपके चरणों का आश्रय लेनेवाले भक्तजनों पर भयानक सिंह भी आक्रमण नहीं कर सकता है ॥ ३९ ॥

कल्पान्तकालपवनोद्धत वह्निकल्पं
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगम् ।

विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥ ४० ॥

प्रलय-पवन-प्रेरित-पावकसी, विस्तृत अधिक उतंगा।
प्रज्वलित उज्ज्वल नभमें जिहिके, अगनित उड़त फुलिंगा ॥
ऐसी प्रबल दवानल जो सब, जगत भस्म करि डारे।
सोहू तुम गुनगानतीरसों, शीतलता विसतारे ॥ ४० ॥

भावार्थ—आपके गुणों का गान करने से बड़ी भ[illegible] ...ग्नि भी भक्तजनों का कुछ बिगाड़ नहीं सकती ॥ ४० ॥

रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तं ।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्क-
स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१

कारो समद पिक-कंठसम, लाल आंखु करुन भयावने
कोप करें फन फुंकरत, आवे चलो जो सामने।
तिहि सांप के सिर पांव देकरि, चले जो अति निडर हो
तुम नामरूपी नागदमनी, परम जो हियमें अहो ॥ ४१ ॥

भावार्थ—आपका नाम स्मरण करनेवाले भक्तजनों [illegible] जहर सांपों का भी कुछ भय नहीं होता है ॥ ४१ ॥

वल्गत्तुरङ्गगजगर्जितभीमनाद-

क्रमगत ह् ऽपि

नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रित ते ॥ ३९ ॥

जो मदमत्त गजन के उन्नत, कुंभ विदारिनखनसों।
सिंगारत भुवि रुधिरसुरञ्जित सुन्दर सित मोतिनसों॥
भरी छलाँग हतनकहँ जिहिने, ऐसे खल मृगपति के।
पंजनि परे बचैं तव-पद-गिरि,-आश्रित जन शुभमति के॥ ३९।

भावार्थ—आपके चरणों का आश्रय लेनेवाले भक्तजनों पर भयानक सिंह भी आक्रमण नहीं कर सकता है ॥ ३९ ॥

कल्पान्तकालपवनोद्धत वह्निकल्पं
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगम् ।

युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षा-
स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥ ४२ ॥

बरछीनसौं छिदि गजन के सिर, जहँ रुधिरधारा बहै।
परि बेगमें तिनके तरनको, वीर बहु आतुर रहै॥
ऐसी बिकट रनभूमिमें, दुर्जय, अरिनपै जय लहै।
तुव चरणपङ्कजवन मनोहर, जो सदा सेवत रहै॥ ४२॥

भावार्थ—आपके चरणकमलों की सेवा करने वाले भव्य न बड़े भारी युद्ध में शत्रु को जीतकर विजयी होते हैं॥ ४२॥

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र-
पाठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ

संग्रामवारिधिमहोदरबंधनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४७ ॥

मदमत्त गज मृगराज दावानल समुद्र अपार को।
संग्राम सांप तथा जलोदर, कठिन कारागार को ॥
भय-, स्वयं भयकरि तुरत ताको, भागि जावै नेमसों।
यह आपकी विरदावली, बांचै सुधी जो प्रेम सों ॥४७ ॥

भावार्थ—ऊपर कहे हुए आठ तथा इनके सदृश और भी
य उस पुरुष से डरकर शीघ्र नष्ट हो जाते है, जो पुरुष इस
स्तोत्र का निरन्तर पाठ किया करता है ॥ ४७ ॥

श्रीजिनेश्वरदेव के चरणकमलों को भलीभाँति प्रणाम करके—

यस्य स्वयं सुरगुरुर् गरिमाम्बुराशेः
स्तोत्रं सुविस्तृत-मतिर् न विभुर्विधातुम् ।
तीर्थेश्वरस्य कमठ—स्मय-धूमकेतोस्—
तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥ २

जो कमठ दैत्य के अभिमान को भस्म करने के लिए धूमकेतु के समान थे, जो गुण-गरिमा के अपार सागर थे, जिनकी स्तुति करने के लिए अतिशय बुद्धिशाली देवताओं का गुरु स्वयं बृहस्पति भी समर्थ नहीं हो सका, आश्चर्य है—उन तीर्थपति श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की मैं स्तुति करूँगा !

श्रीजिनेश्वरदेव के चरणकमलों को भलीभाँति प्रणाम करके—

यस्य स्वयं सुरगुरुर् गरिमाम्बुराशेः
स्तोत्रं सुविस्तृत-मतिर् न विभुर्विधातुम् ।
तीर्थेश्वरस्य कमठ—स्मय-धूमकेतोस्—
तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥ २

जो कमठ दैत्य के अभिमान को भस्म करने के लिए धूमकेतु के समान थे, जो गुण-गरिमा के अपार सागर थे, जिनकी स्तुति करने के लिए अतिशय बुद्धिशाली देवताओं का गुरु स्वयं वृहस्पति भी समर्थ नहीं हो सका, आश्चर्य है—उन तीर्थपति श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की मैं स्तुति करूँगा !

यह क क समुद्र वशाल है अ र बालक के हाथ बहुत छोटे हैं। फिर भी क्या बालक अपने नन्हे-नन्हे हाथों को फैला कर, अपनी कल्पना के अनुसार समुद्र के विस्तार का वर्णन नहीं करता ? अवश्य करता है।

ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश !
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः !
जाता तदेवमसमीक्षित—कारितेयं,
जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥६॥

हे जगत् के स्वामी ! जबकि आपके गुणों का यथार्थ रूप से वर्णन करने में बड़े-बड़े प्रसिद्ध योगी भी समर्थ नहीं हो सकते

हैं, तब मुझ-मेरी तो शक्ति ही क्या है ? यह स्तुति का मैंने बिना विचारे ही शुरू कर दिया है। वस्तुतः यह मेरी पहुँच के बाहर है।

अरे, मैं हताश क्यों होता हूँ ? शक्ति नहीं तो क्या हु यथाशक्य प्रयत्न तो करूँगा। पक्षियों को मनुष्य की भा बोलना नहीं आता है, तो क्या हुआ ? क्या वे अपनी अ भाषा में बोल कर काम नहीं चला लेते।

आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन ! संस्तवस्ते,
नामाऽपि पाति भवतो जगन्ति।
तीव्रातपोपहत—पान्थ—जनान् निदाघे,
प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि ॥

हे राग-द्वेष के विजेता जिन ! आपके अचिन्त्य महिमा स्तवन के महत्त्व का तो कहना ही क्या है, यहाँ तो आपका नाम भी त्रिभुवन के प्राणियों को दुःख से सकता है।

गर्मी के दिनों में भयंकर धूप से व्याकुल हुए मुसाफि आनन्द प्रदान करने वाले कमल-सरोवर का तो कहना ही उसकी केवल ठंडी हवा ही उन्हें तृप्त कर देती है।

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो ! शिथिलीभवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निविडा अपि कर्म-बन्धाः

रौद्रैरुपद्रव-शतैस् त्वयि वीक्षितेऽपि

गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे,

चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः ॥ ६

हे जिनेन्द्र ! आपके दर्शन-मात्र से भक्त-जन सैकड़ों भयंकर उपद्रवों से शीघ्र ही मुक्त हो जाते हैं। आपके [illegible] संकट ! मेल ही नहीं बैठता।

गाँव के पशुओं को चोर रात्रि में चुरा ले जाते हैं, परन्तु ज्यों ही बलवान् तेजस्वी ग्वाला दिखाई देता है, त्यों ही वे पशुओं को छोड़कर झट-पट भाग खड़े होते हैं। मालिक के सामने चोर कहीं ठहर सकते हैं ?

त्वं तारको जिन ! कथं भविनां त एव
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः ।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून—
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ॥ १

हे जिनेश्वरदेव ! आप भव्यजीवों को संसार-सागर से तारने वाले तारक कैसे बन सकते हैं ? क्योंकि भव्यजीव संसार-सागर से पार उतरते हैं, तब वे ही आपको अपने हृद धारण करते हैं, आप उनको कहाँ धारण करते हैं ?

हाँ, ठीक है—समझ में आ गया। अन्दर में पवन से हुई मशक जब जल में तैरती है, तब वह अन्दर में स्थित पव प्रभाव से ही तो तैरती है, स्वयं कहाँ तैरती है ?

यस्मिन् हर-प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः
सोऽपि त्वया रति-पतिः क्षपितः क्षणेन ।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाऽथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन ॥ १

हे देव ! जिस कामदेव को जीतने में सुप्रसिद्ध हरि-हर देव भी हत-प्रभ बाने पराजित हो गए, उसी त्रिभुवन-वि कामदेव को आपने क्षणभर में नष्ट कर दिया। यह म आश्चर्य है !

८ अ र संसार समुद्र क झटपट पार कर जाते हैं। इतना भार उठा कर भी इतना हल्कापन! महान् आश्चर्य!

अथवा इसमें आश्चर्य की क्या बात है? महापुरुषों का प्रभाव अचिन्त्य होता है। वे जो कुछ भी करके दिखा दें, महान पुरुषों का प्रभाव ही अचिन्त्य है।

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वत कथं किल कर्म-चौराः?
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिराऽपि लोके,
नीलद्रु माणि विपिनानि न किं हिमानी? ॥१३॥

हे प्रभो! आपने क्रोध को तो पहले ही नष्ट कर दिया तब फिर कर्मशत्रुओं को कैसे जीता? क्योंकि बिना रोष के कोई किसी को कैसे जीत सकता है?

अहो, मैं भूल रहा हूँ। क्रोध की अपेक्षा क्षमा की शक्ति तो बहुत बड़ी है। हम देखते हैं कि जब शीत-काल में अत्य शीत होने के कारण बिल्कुल ठंडा हिम—पाला पड़ता है, हरेभरे वृक्षों वाले सघन वन को भी क्या जलाकर नष्ट कर डालता?

त्वां योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोश-देशे ।
पूतस्य निर्मलरुचेर् यदि वा किमन्य—
दक्षस्य संभवि पदं ननु कर्णिकायाः ॥

हे जिन! आप परमात्मस्वरूप हैं, कर्म-मल से रहि शुद्ध—आत्मस्वरूप हैं। अतएव बड़े बड़े योगी लोग अपने कमल की कर्णिका में आपको खोजते हैं, आपका ध्यान कर

जिस प्रकार कमल के अक्ष—बीज का स्थान कम कर्णिका है, उसी प्रकार आप भी जब कर्म-मल से रहित, पवित्र निर्मल कान्ति वाले शुद्ध परमात्मा बन गए तो स्थान भी हृदय-कमल की कर्णिका को छोड़कर अन्यत्र क सकता है? आपको कमल की कर्णिका में ही मिलेगा, न १

अ र संसार समुद्र झटपट पार कर जाते हैं। इतना भार उठा कर भी इतना हल्कापन! महान् आश्चर्य!

अथवा इसमें आश्चर्य की क्या बात है? महापुरुषों का प्रभाव अचिन्त्य होता है। वे जो कुछ भी करके दिखा दें; महान पुरुषों का प्रभाव ही अचिन्त्य है।

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वत कथं किल कर्म-चौराः?
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिराऽपि लोके,
नीलद्रु माणि विपिनानि न किं हिमानी?॥१३॥

हे प्रभो! आपने क्रोध को तो पहले ही नष्ट कर दिया, तब फिर कर्मशत्रुओं को कैसे जीता? क्योंकि बिना रोष के कोई किसी को कैसे जीत सकता है?

अहो, मैं भूल रहा हूँ। क्रोध की अपेक्षा क्षमा की शक्ति तो बहुत बड़ी है। हम देखते हैं कि जब शीत-काल में, अत्यंत शीत होने के कारण बिल्कुल ठंडा हिम—पाला पड़ता है, तो हरेभरे वृक्षों वाले सघन वन को भी क्या जलाकर नष्ट नहीं कर डालता?

त्वां योगिनो जिन! सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोश-देशे।
पूतस्य निर्मलरुचेर् यदि वा किमन्य-
दक्षस्य संभवि पदं ननु कर्णिकायाः॥ १

हे जिन! आप परमात्मस्वरूप हैं, कर्म-मल से रहित शुद्ध—आत्मस्वरूप हैं। अतएव बड़े बड़े योगी लोग अपने हृदय-कमल की कर्णिका में आपको खोजते हैं, आपका ध्यान करते हैं।

जिस प्रकार कमल के पद्म—बीज का स्थान कमल की कर्णिका है, उसी प्रकार आप भी जब कर्म-मल से रहित होकर पवित्र निर्मल कान्ति वाले शुद्ध परमात्मा बन गए तो आपका स्थान भी हृदय-कमल की कर्णिका को छोड़कर अन्यत्र कहाँ हो सकता है? आप तो कमल की कर्णिका में ही मिलेंगे न?

भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम् ?
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि,
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥ १९

हे जिनेन्द्र ! जिस शरीर के मध्यभाग=हृदय में भव्य प्राणी आपका निरन्तर ध्यान करते हैं, आश्चर्य है, आप उसी शरीर को नष्ट कर देते हैं ! यह कैसी उलटी गति है, कुछ समझ में नहीं आता।

अथवा आपका यह कार्य सर्वथा उचित ही है। जब महा-पुरुष मध्यस्थ हो जाते हैं, बीच में पड़ जाते हैं, तो विग्रह (शरीर और कलह) को पूर्णतया समाप्त कर देते हैं।

जाता है ?

चित्रं विभो ! कथमवाङ् मुखवृन्तमेव
विष्वक् पतत्यविरला सुर-पुष्प-वृष्टिः ।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश !
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥ २०

हे भगवन् ! महान् आश्चर्य है कि आपके समवसरण में देवताओं द्वारा सब ओर की जाने वाली अविरल पुष्पवर्षा के पुष्प सबके सब अपने डंठल नीचे की ओर किए हुए ऊर्ध्वमुख हो पड़ते हैं। एक भी ऐसा पुष्प नहीं, जो ऊपर की ओर डंठल किए अधोमुख पड़ता हो।

हे प्रभो ! जब आप रत्नों से जड़े हुए उज्ज्वल स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान होते हैं और गम्भीर वाणी के द्वारा धर्म-देशना करते हैं, तब भव्य प्राणी-रूप मयूर, श्याम वर्ण वाले आपको बहुत ही उत्सुक हो कर इस प्रकार देखते हैं, मानो सुवर्णमय सुमेरुपर्वत के शिखर पर वर्षा-कालीन श्याम मेघ घुमड़ रहा हो, जोर से गरज रहा हो !

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन
लुप्तच्छदच्छविरशोक-तरुर् बभूव।
सांनिध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग।
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि॥

आपका प्रताप अ आपका यश ह त न जगत् सर्वत्र फैलने के बाद आगे स्थान न मिलने के कारण आपके चारों ओर तीन कोट के रूप में पिण्डीभूत हो गया है, इकट्ठा हो गया है।

दिव्य-स्रजो जिन! नमत्-त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान्
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ २८

हे नाथ! जब स्वर्ग के इन्द्र आपको नमस्कार करते हैं, तो नको दिव्य पुष्प-मालाएं रत्न-जटित मुकुटों का भी परित्याग कर झटपट आपके श्रीचरणों का आश्रय ले लेती हैं।

पुष्प-मालाओं का यह कार्य बिल्कुल उचित ही है; क्योंकि श्रीचरणों का आश्रय मिल जाने के बाद सुमनों (अच्छे मन वाले ज्ञानी पुरुषों) को अन्यत्र कहीं पर सन्तोष ही नहीं मिलता।

त्वं नाथ ! जन्मजलधे विपराङ्‌मुखोऽपि
यत्तारयस्यसुमतो निज-पृष्ठलग्नान् ।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव
चित्रं विभो ! यदसि कर्मविपाक-शून्यः ॥ २

हे नाथ ! संसार-समुद्र से सर्वथा पराङ्‌मुख प्रतिकूल होते हुए भी आप अपने पृष्ठाश्रित—अनुयायी भक्तों को पार उतार देते हैं, यह युक्त ही है, क्योंकि आप पार्थिवनिप विश्व के ज्ञानी हैं। वस्तु, पार्थिवनिप (मिट्टी के घड़े) का स्वभाव ही ऐसा है कि वह जल की ओर अधोमुख रह कर भी अपनी पीठ पर ठहरे हुओं को पार उतार देता है।

परन्तु इसमें एक महान आश्चर्य है ! वह यह कि पार्थिव निप (घड़ा) तो विपाकसहित होता है और आप कर्मविपाक से रहित हैं।

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक !

दुष्ट कमठ क्रुद्ध हो कर आप पर पहले भीषण धूल की वर्षा की थी, ऐसी वर्षा कि जिसके समूह से समग्र आकाश भर गया था। परन्तु उससे आपका कुछ भी न बिगड़ा। और तो क्या, आपकी छाया भी मलिन न हुई, प्रत्युत उस धूल से वह हताश दुरात्मा स्वयं ही ग्रस्त हो गया, मलिन हो गया।

यद्गर्जदूर्जित - घनौघमदभ्र - भीमं
भ्रश्यत्तडिन्मुसल- मांसल - घोर - धारम्।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर - वारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन ! दुस्तर-वारि कृत्यम्॥ ३२

हे जिनेश्वर देव ! कमठ दैत्य ने आप पर बड़ी भयंकर ज
वर्षा की, ऐसी वर्षा कि जिसमें बड़े-बड़े विशाल मेघ-समूह ग
कर रहे थे, बिजलियां गिर रही थीं, मूसल के समान बड़ी मो
मोटी जलधाराएं बरस रही थीं, जो अत्यन्त डरावनी मा
होती थीं और जिनका अथाह जल तैर कर भी पार क
कठिन था।

परन्तु उस वर्षा से भी आपको कुछ भी हानि न
प्रत्युत वह उस कमठ के लिए दुष्ट तलवार का काम कर गई,
घायल कर गई।

ध्वस्तोर्ध्व —केश-विकृताकृति-मर्त्यमुण्ड-
प्रालम्बभृद्-भयद वक्त्र-विनिर्यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः
सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भव-दुःख-हेतुः ॥

हे भगवन् ! दुष्ट कमठासुर ने आपको पथ-भ्रष्ट करने के
अत्यन्त निर्दय पिशाचों के दल भी भेजे। कैसे थे वे पिशा
जिनके गले में बिखरे केशों और भद्दी आकृति वाले नर-मु
की मालाएं पड़ी हुई थीं और जो अपने भयानक मुख से
उगल रहे थे।

परन्तु हे प्रभो ! वे भयंकर पिशाच भी आप पर कुछ
प्रभाव न डाल सके, प्रत्युत वे सभी कमठ के लिए
भयंकर दुःखों के कारण बने।

मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्र - पवित्र - मंत्रे
किं वा विपद्-विष-धरी सविधं समेति ॥ ३५

हे मुनीन्द्र ! इस अपार संसार-सागर में परिभ्रमण करते हुए अनन्तकाल हो गया, परन्तु मालूम होता है, आपका पवित्र नाम कभी भी श्रुतिगोचर नहीं हुआ।

क्योंकि यदि कभी आपके नाम का पवित्र मंत्र सुनने में आया होता, तो फिर क्या यह विपत्तिरूपी काली नागिन मेरे पास आती ? कभी नहीं।

त्वं नाथ ! दुःखिजन-वत्सल ! हे शरण्य !
कारुण्य-पुण्यवसते ! वशिनां वरेण्य ।
भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय
दुःखांकुरोद्दलन—तत्परतां विधेहि ॥ ३९

हे नाथ ! आप दुःखी जीवों के प्रति वत्सल हैं, शरणागतों के प्रतिपालक हैं, करुणा के पवित्र धाम हैं, और जितेन्द्रिय पुरुषों में श्रेष्ठ है ।

हे महेश ! भक्ति-भाव के कारण विनम्र हुए मुझ सेवक पर अपनी दयादृष्टि कीजिए और इस दुःख की जड़ को उखाड़ने में शीघ्र ही तत्परता दिखाइए ।

निःसंख्यसार-शरणं शरणं शरण्य—

मासाद्य सादितरिपु-प्रथितावदातम् ।

त्वत्पाद-पंकजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो ।

वन्ध्योऽस्मि चेद् भुवन-पावन ! हा हतोऽस्मि ॥४

हे भुवन-पावन ! आपके चरण-कमल अतुल बल के स्थान

की रक्षा करने वाले हैं, शरणागतों के प्रतिपालक

और कर्म-शत्रुओं को नष्ट करने के कारण विश्वविख्यात य

दुर्भाग्य है कि आपके इस प्रकार मङ्गलमय चरणों

अवलम्बन पा कर भी मैं ध्यान से शून्य रहा, अतएव अभा

रहा। भगवन् ! खेद है कि मैं तो आपके चरणकम

को पा हूँ।

! विदिताखिलवस्तु-सार !

विभो भुक्ताधिनाथ !

करुणाहृद ! मां पुनीहि

भयद-व्यसनाम्बुराशेः ॥ ४

आप स्वर्गाधिपति इन्द्रों द्वारा वन्दनीय हैं,

को जानने वाले हैं, संसार-सागर से प

उबारने वाले हैं, तीन लोक के नाथ हैं। हे करुणा सिन्धु ! भयं

के

से

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र !
सान्द्रोल्लसत्पुलक - कंचुकितांगभागाः।
त्वद् बिम्बनिर्मल - मुखाम्बुज - बद्धलक्ष्या
ये संस्तवं तव विभो ! रचयन्ति भव्याः ॥ ४३

जन - नयन - कुमुद - चन्द्र !
प्रभास्वराः स्वर्ग - सम्पदो भुक्त्वा
ते विगलित - मल - निचया
अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥ ४४

हे जिनेन्द्र देव ! अटल श्रद्धा के द्वारा स्थिरबुद्धि व
प्रेमाधिक्य के कारण अतीव सघन-रूप से उल्लसित हुए रोमां
से व्याप्त अंग वाले तथा निरन्तर आपके मुख-कमल की ओ
अपलक लक्ष्य रखते वाले जो भव्य प्राणी आपकी विधि-पू
स्तुति करते हैं—आपका गुणानुवाद करते हैं—

हे भक्त-जनता के नेत्ररूपी कुमुदों को विकसित करने व
विमल चन्द्र ! वे अत्यन्त रमणीय स्वर्ग-सम्पदाओं को भोग
में कर्म-मल से रहित हो जाते हैं, और शीघ्र ही म
प्राप्त कर लेते हैं।

चिन्तामणि-स्तोत्र

किं कर्पूर-मयं सुधारसमयं किं चन्द्ररोचिर्मयं,
किं लावण्यमयं महामणिमयं कारुण्यकेलीमयम् ।
विश्वानन्दमयं महोदयमयं शोभामयं चिन्मयं,
शुक्लध्यानमयं वपुर्जिनपतेर्भूयाद् भवालम्बनम् ॥

भगवान पार्श्वनाथ का शरीर अत्यन्त सुन्दर और दिव्य
जिनपति भगवान पार्श्वनाथ का वह शरीर संसार के प्राणिय
लिए आलम्बन रूप था।

कैसा दिव्य था, वह शरीर ! कपूर से भी अधिक ...
सुधा से भी अधिक सरस था, चन्द्रकान्तमणि के समान ...
प्रकाशमय था, महामणि के समान

प रव्याप्त था। प्रस्तुत श्लोक में भगवान् के यश को हंस कहा गया है। जिस प्रकार हंस उज्ज्वल होता है, उसी प्रकार भगवान् का यश भी उज्ज्वल एवं धवल था।

चिन्तामणि पार्श्वनाथ का यशोरूपी हंस सर्वत्र अव्याहत गति था, विश्व का वह कौन-सा स्थान है, जहाँ वह न पहुंचा हो?

उसने अपनी धवलिमा से इस धरा को धवल बनाया, पाताल के घोर अन्धकार को नष्ट किया, समस्त आकाश को उसने पूर्ण किया। समग्र दिशाओं की सीमा को वह पार कर गया। उसने अपनी उज्ज्वल धवलिमा से स्वर्गवासी देवों को विस्मित किया। पाताल के असुरों को चकित किया, और भू-लोक के मानवों को

लब्ध किया। उसने अपनी लीलाओं से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को
बना दिया। उसने जलधि की जलराशि को झकझोर कर फे
कर डाला। भगवान् पार्श्वनाथ का वह यशोहंस चिरकाल
सुशोभित होता रहे।

पुष्पानां विपणिस्तमोदिनमणिः कामेभकुम्भे सृ
मोक्षे निस्सरणिः सुरद्रु करिणी ज्योतिः प्रकाशारणि
दाने देवमणिर्नतोत्तमजनश्रेणिः कृपा-सारि
विश्वानन्दसुधाघृणिर्भवभिदे श्रीपार्श्वचिन्तामणिः।

चिन्तामणि पार्श्वनाथ, समस्त सुखों के केन्द्रस्थान हैं। स
के अन्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्य से भी अधिक प्रकाश
हैं। कामरूपी मदोद्धत गज को वश में करने के लिए अंकु
समान हैं। मोक्षरूपी प्रासाद पर चढ़ने के लिए सोपानरू
कल्पवृक्ष के समान भक्तों की अभिलाषाओं को पूर्ण करने
हैं। कर्म से आवृत ज्ञान-रूप ज्योति के प्रकाशित करने में
के तुल्य हैं। दान देने में इन्द्र से भी अधिक उदार हैं।
भक्त-जनों पर कृपा रखने के लिए सदा तत्पर हैं।
अमृत की तरंग के समान हैं।

भगवान् चिन्तामणि पार्श्वनाथ के स्वरूप का ध्यान क
और नाम का जप करने से संसार के समस्त
हो जाता है।

मिला। इन्द्र का ऐश्वर्य मिला, चक्रवर्ती जैसी ऋद्धि मिली और साधकों की सिद्धि (मुक्ति) भी मेरे हाथों में खेल रही है। अनेक प्रकार के मनोरथ मेरे सिद्ध हुए हैं।

प्रभो! आपकी कृपा से ही मेरा दुर्भाग्य, मेरा बुरा समय, मेरा पाप और मेरा भय एवं कष्ट—सब नष्ट हो गए हैं, चकनाचूर हो गए हैं।

यस्य प्रौढ़तम-प्रतापतपनः प्रोद्दामधामा जगत्,
घालः कलिकालकेलिदलनो मोहान्धविध्वंसकः।
द्योतपदं समस्तकमलाकेलीगृहं राजते,
स श्रीपार्श्वजिनो जनेहितकरश्चिन्तामणिः पातु माम्॥५॥

संसार के समस्त जीवों का कल्याण करने वाले भ
चिन्तामणि पार्श्वनाथ, मेरी रक्षा करें।

भगवान् पार्श्वनाथ, अतिशय प्रताप वाले हैं। संसार के
विकट संकटों का क्षय करने वाले हैं। कलिकाल की ली
नष्ट करने वाले हैं। मोहरूपी अन्धकार के विध्वंसक हैं। भ
पार्श्वनाथ की भक्ति करने वाले भक्त के घर में सदा लक्ष्
वास और प्रकाश रहता है।

विश्वव्यापितमो हिनस्ति तरणिर्बालोपि कल्प
दारिद्र्याणि गजावलीं हरिशिशुः काष्ठानि वह्नेः
पीयूषस्य लवोऽपि रोगनिवहं यद्वत्तथा ते
मूर्तिः स्फूर्तिमती-सती त्रिजगती-कष्टानि हर्तुं क्षमा

प्रौढ़सूर्य तो क्या, बालसूर्य भी विश्व में व्याप्त अन्धक
नष्ट कर डालता है। कल्पवृक्ष तो क्या, उसका एक नन्
अंकुर भी दरिद्र्य को दूर कर देता है। सिंह तो क्या, सि
छोटा-सा शिशु भी गज-घटा को छिन्न-भिन्न कर देता है।
की एक छोटी-सी चिनगारी भी हजारों मन काष्ठ के
जला कर खाक कर देती है। अमृत का एक बिन्दु भी
रोगों को नष्ट कर डालता है। इसी प्रकार आप की
त्रिभुवन के कष्टों को समाप्त कर सकती है।

श्री चिन्तामणिमन्त्रमोंकृति-युतं ह्रींकारसारा
श्रीमर्हंनमिऊणपाशकलितं त्रैलोक्य-वश्या

मन्त्र ऋद्धि-सिद्धि और मुक्ति देने वाला है।

ह्रीँ श्रींकारवरं नमोऽक्षरपरं ध्यायन्ति ये योगिनो,
हृत्पद्मे विनिवेश्य पार्श्वमधिपं चिन्तामणीसंज्ञकम्।
भाले वामभुजे च नाभिकरयोर् भूयो भुजे दक्षिणे,
पश्चादष्टदलेषु ते शिवपदं द्वित्रै भँवैर् यान्त्यहो ॥ ८

चिन्तामणि मन्त्र की महिमा अपार है। प्रभाव अद्भुत है।
ह्रीँ कार एवं श्रींकार से समन्वित और अन्त में नमः अक्ष
युक्त तथा चिन्तामणिसंज्ञक भगवान् पार्श्वनाथ को जो योगि
साधक-जन हृदयों में धारण करके ध्यान करते हैं, वे अव
ही परम सुख को प्राप्त करते हैं। चिन्तामणिरत्न की तरह ज

भगवान् पार्श्वनाथ भक्त घर सदा लक्ष्मी का वास रहता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की लक्ष्मी उसके वश में हो जाती है। उस भक्त के सभी संकल्पों की और मनोरथों की पूर्ति हो जाती है।

इति जिनपति - पार्श्वः, पार्श्वपार्श्वाख्ययक्षः,
प्रदलित - दुरितौघः प्रीणित - प्राणि - सार्थः।
त्रिभुवन - जनवाञ्छा-दान - चिन्तामणीकः,
शिवपद - तरुबीजं बोधिबीजं ददातु ॥ ११

भगवान् पार्श्वनाथ की शुद्ध भक्ति से लौकिक सुख ही नहीं अध्यात्मसुख भी मिलता है।

॥ ॐ ॥

श्री पार्श्वनाथाय नमः।

खरतरगच्छीय

श्री पंचप्रतिक्रमण सूत्र

—卐—

प्राभातिक सामायिक लेने की विधि।

(... [illegible] ... लिये हुए ...
[illegible] ... की प्रमार्जना ...
[illegible] ... आदि को [illegible] ...।
[illegible] ... सामायिक करने ...
[illegible] ... है ... [illegible] ...
[illegible] ... आदि ...
[illegible] ...)—

[illegible] ...। ...सिद्धाणं। [illegible]
[illegible] ...।

भगवान् पाश्वनाथ के भक्त के घर में सदा लक्ष्मी का वास रहता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की लक्ष्मी उसके वश में हो जाती है। उस भक्त के सभी संकल्पों की और मनोरथों की पूर्ति हो जाती है।

इति जिनपति - पार्श्वः, पार्श्वपार्श्वाख्ययक्षः,
प्रदलित - दुरितौघः प्रीणित - प्राणि - सार्थः।
त्रिभुवन - जनवाञ्छा-दान - चिन्तामणीकः,
शिवपद - तरुबीजं बोधिबीजं ददातु॥ ११॥

भगवान् पार्श्वनाथ की शुद्ध भक्ति से लौकिक सुख ही नहीं अध्यात्मसुख भी मिलता है।

चरवला मुहप त्त हाथ कर गुरुज या स्थापना चार्यजी को खड़े होकर वंदन करे)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ।

(इस प्रकार तीन खमासमण देना, पीछे खड़े खड़े)

इच्छकार भगवान् ! सुहराई सुहदेवसी, सुखतप शरीरनिराबाध सुखसंयमयात्रा निर्वहते हो जी ? स्वामी साता है जी ?

(ऐसा कह कर, नीचे बैठकर, दाहिने हाथ को चरवले पर या नीचे रखकर, मस्तक नमा कर नीचे का सूत्र बोले)—

सामायिक लेने की विधि

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! अब्भुट्ठि
अभिंतर राइअं खामेउं इच्छं, खामेमि राइअं।
किंचि अपत्तिअं, परपत्तिअं भत्ते पाणे विणए वेया
आलावे संलावे उच्चासणे समासणे अन्तरभा
उवरिभासाए, जं किंचि मज्झ विणयपरिहीणं, सुहु
बायरं वा, तुब्भे जाणह, अहं न जाणामि,
मि दुक्कडं।

(इस प्रकार बोल कर पीछे नीचे लिखे अनुसार बोलना

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्
निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण सं
भगवन् ! सामायिक लेवा मुहपत्ति पडिलेहुं ? इ

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहि
मत्थएण वंदामि।

(ऐसा बोल कर मुहपत्ति की पडिलेहना पीछे लिखे
बोल सहित बोलते हुए करें)।

१. इस तरह

अब नीचे लिखे पच्चीस बोलों से अंग को पडिलेहना करें अर्थात जिस अंग का नाम आवे उसी अंग को मुहपत्ति से स्पर्श करे)—

१ कृष्णलेश्या, २ नीललेश्या, ३ कापोतलेश्या, (ये तीन मस्तके परिहरू)। १ ऋद्धिगारव, २ रसगारव, ३ सातागारव (ये तीन मुखे परिहरू)। १ मायाशल्य, २ नियाणशल्या, ३ मिथ्यादर्शनशल्य (ये तीन हृदये परिहरू)। १ क्रोध, २ मान, (ये दोनों दाहिने कंधे

हरू)। १ माया, २ लोभ (ये दोनों बांये कंधे परिहरू)। १ हास्य, २ रति, ३ अरति, (ये तीन बांये

भगवन् ! इरियावहियं पडिक्कमामि ? इच्छं, इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए, गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे, ओसा-उत्तिंग, पणग-दग-मट्टी मक्कडा संताणा-संकमणे, जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया, ा, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, , ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरो- तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं विसो-
करणेणं, विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं णिग्घायण-
ठामि काउस्सग्गं ।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासि-
एणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं भमलीए
पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खे-
लसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आ-
गारेहिं, अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो ।
अरिहंताणं भगवंताणं, णमुक्कारेणं न पारेमि ताव
मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ।

(यहाँ एक लोगस्स का या चार नवकार का काउस्सग्ग
पीछे नीचे लिखे अनुसार प्रगट लोगस्स कहें ।)

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे । अरि-
हंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ॥ १ ॥ उसभमजिअं
च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च । पउमप्पहं सुपा-
सं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ २ ॥ सुविहिं च पुप्फदंतं, सी-
अल सिज्जंस वासुपुज्जं च । विमलमणंतं च जिणं, ध-
म्मं संतिं च वंदामि ॥ ३ ॥ कुंथुं अरं च मल्लिं,

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! बैसणो संदिस्सावुं ? 'इच्छं' ।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! बैसणो ठाउं ? 'इच्छं' ।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए सीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह ! सज्झाय संदिस्सावुं ! 'इच्छं' ।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज
निसीहिआए मत्थएण वंदामि ! इच्छाकारेण संदि
! सज्झाय करूं ! 'इच्छं' ।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्
मत्थएण वंदामि ।

(इस प्रकार खमासमण दे कर आठ नवकार गिने । ।
जाडे में वस्त्र की आवश्यकता हो तो)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्
मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदि
! पांगुरणो संदिसावुं ! 'इच्छं' ।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी
आए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगव
पडिग्गहुं ! 'इच्छं' ।

इस प्रकार खमासमण देकर वस्त्र ग्रहण करे ।
४८ मिनिट) स्वाध्याय ध्यान करे या प्रतिक्रमण
में या पौषध में सामायिक और पौषधशाला
पाठ में वंदन करे तो 'सज्झायमो' कहे और
बैठे तो 'सज्झाय करता हूँ' ऐसा कहे ।)

॥ इति सामायिक लेने की विधि ॥

जयउ सामिय जयउ सामिय रिसह सत्तुंजि, उज्जिंति पहु नेमिजिण, जयउ वीर सच्चउरिमंडण। भरुअच्छहिं मुणिसुव्वय, मुहरिपास दुहदुरिअखंडण, अवरविदेहिं तित्थयरा, चिहुं दिसि विदिसि जिं के वि, तो आणागयसंपइअ, वंदु जिणसव्वेवि ॥१॥ कम्मभूमिहिं कम्मभूमिहिं पढमसंघयणि, उक्कोसय सत्तरिसय जिणवराण विहरंत लब्भइ। नवकोडिहिंकेवलीण, कोडिसहस्स

*पोषधमें कुसुमिण दुसुमिण का काउस्सग करके पीछे चैत्यवन्दन है।

न साइ मम्मइ। संपइ जिणवर वीस मुणि बि
कोडिहिं वरनाण, समणइ कोडिसहस्स दुअ थुणिज्ज
निच्च विहाणि ॥२॥ सत्ताणवइ सहस्सा, लक्खा छप्पन्न
कोडीओ। चउसय छायासीया, तिअलोए चेइए
॥३॥ पन्नरस कोडिसयं, पणवीस कोडि लक्ख
सा। अट्ठावीस सहस्सा, चउसय अट्ठासिया
॥४॥

किंचि नामतित्थं, सग्गे पायालि माणुसे लोए।
ताइं सव्वाइं वंदामि ॥ १ ॥

णं अरिहंताणं भगवंताणं ॥१॥ आइगराणं
सयंसंबुद्धाणं ॥२॥ पुरिसुत्तमाणं, पुरिससी-
पुरिसवर-गन्धहत्थीणं ॥ ३ ॥
लोगहिआणं लोगपइवाणं,
॥४॥ अभयदयाणं, चक्खुदयाणं,
बोहिदयाणं ॥५॥ धम्मदयाणं,
धम्मसारहीणं, धम्मवर-
॥६॥ अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं,
जावयाणं, तिन्नाणं

पण , ड- वरयाण ॥ १ ॥

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ।

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं ।
विसहरविसनिन्नासं, मंगल-कल्लाण आवासं ॥ १ ॥
विसहर-फुलिंगमंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ । तस्स
गह-रोग-मारी, दुट्ठजरा जंति उवसामं ॥ २ ॥ चिट्ठउ
दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ । नर-तिरिएसु
वि जीवा, पावंति न दुक्ख-दोहग्गं ॥ ३ ॥ तुह सम्मत्ते
, चिन्तामणिकप्पपायवब्भहिए । पावंति अविग्घेणं,

संतिं च वंदामि ॥ ३ ॥ कुंथुं अरं च मल्लिं, वन्दे
मुणिसुव्वयं नमिजिणं च वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह
वद्धमाणं च ॥ ४ ॥ एवं मए अभिथुआ, विहुय रयमला
पहीणजरमरणा । चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे
पसीयंतु ॥ ५ ॥ कित्तिय वंदिय, महिया, जे ए लोगस्स
उत्तमा सिद्धा । आरुग्ग बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं
दिंतु ॥ ६ ॥ चन्देसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं
पयासयरा । सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम

ठाणं संपत्ताणं, नमो जिणाणं जिअभयाणं ॥ ९ ॥ जे अ अईआ सिद्धा, जे अ भविस्संति णागए काले । संपइअ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि ॥ १० ॥

(अब खड़े होकर बोलना ।)

करेमि भन्ते ! सामाइयं; सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव नियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविणं मणेण ए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भन्ते ! क्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं। जो मे राइयो
यारो कओ काइयो वाइयो माणसियो उस्सुत्तो उम्म
कप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अ
यारो अणिच्छिअव्वो असावग-पाउग्गो नाणे दंसणे
पाचरित्ते सुए सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं
याणं, पंचण्हमणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्वयाणं,
सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खं
विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं विसो
करणेणं, विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं निग्घायण
यामि काउस्सग्गं।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासि
एणं जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं भम
सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आ
अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो।
अरिहंताणं, भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि ताव
ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

प णजरमरणा । चउव प जणवरा, ८ रा,
पसीयंतु ॥ ५ ॥ कित्तिय वंदिय महिया, जे ए लोगस्स
उत्तमा सिद्धा । आरुग्ग बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं
दितु ॥ ६ ॥ चंदेसु निम्मलयराआ, आइच्चेसु अहियं
पयासयरा । सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम
दिसंतु ॥ ७ ॥

० लोए अरिहंतचेइयाणं करेमि काउस्सग्गं । वंद-
ए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माण-
बोहिलाभवत्तिआए निरुवसग्गवत्तिआए

सद्दाए, मेहाए, धिईए, धारणाए, अणुप्पेहाए, वड्ढम
ठामि काउस्सग्गं ॥

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छ
जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पि
च्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचा
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अ
अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो ॥ जाव अरि
भगवंताणं णमुक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठ
मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(एक लोगस्स या चार नवकार का काउस्सग्ग
पीछे नीचे मुजब "पुक्खरवरदीवड्ढे" कहना ।)

पुक्खरवरदीवड्ढे, धायईसंडे अ जंबुदीवे अ ।
रवयविदेहे, धम्माइगरे नमंसामि ॥ १ ॥ तम-ति
पडल-विद्धंसणस्स, सुरगणनरिंदमहियस्स । सीमा
वंदे, पप्फोडिअमोहजालस्स ॥ २ ॥ जाईजरामर
गप्पणासणस्स, कल्लाणपुक्खलविसाल-सुहावहस्स ।
देव-दाणव-नरिंदगणच्चिअस्स, धम्मस्स सारमुवलब्भ
पमायं ॥ ३ ॥ सिद्धे भो ! पयओ णमो जिणमए

सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो। जाव अरिहंताणं भगवंताणं णमुक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

(काउस्सग्ग में आज के चार प्रहर रात्रिसम्बंधी इत्यादि आलोयणा का चिंतन करें। यदि न आता हो तो आठ नवकार का काउस्सग्ग करें पीछे नीचे मुजब "सिद्धाणं बुद्धाणं०" कहना।)

सिद्धाणं बुद्धाणं, पारगयाणं परंपर-गयाणं। लोअग्ग-

डाए कायदुक्कडाए, कोहाए माणाए मायाए लोभाए, सव्वकालिआए सव्वमिच्छोवयाराए सव्वधम्माइक्कमणाए आसायणाए जो मे अइयारो कओ तस्स खमासमणो ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

(फिर खड़े होकर बोलना)

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! राइअं आलोउं ? 'इच्छं' आलोएमि । जो मे राइयो अइयारो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो कप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो

अणिच्छिअव्वो असावगपाउग्गो नाणे दंसणे चरित्त
सुए सामाइए। तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं
मणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्याणं, चउण्हं सिक्ख
बारसविहस्स सावगधम्मस्स जं खंडिअं, जं वि
तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

आज की चार पहर रात्रि में मैंने जिन-जिन
की विराधना की हो, सात लाख पृथ्वीकाय, सा
अप्काय, सात लाख तेउकाय, सात लाख वा
दस लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख स
वनस्पतिकाय, दो लाख बेइन्द्रिय, दो लाख ते
दो लाख चौरिन्द्रिय, चार लाख देवता, चार
नारकी, चार लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय, चौद
मनुष्य, एवं चार गति के चौरासी लाख जीव
में से किसी जीव का मैंने हनन किया, कराया,
हुए का अनुमोदन किया हो सब मन, वचन,
करके मिच्छामि दुक्कडं।

पहला प्राणातिपात दूसरा मृषावाद

कथा भक्तकथा की हो, और कोई परनिंदादि पाप किय
हो, कराया हो, करते हुए का अनुमोदन किया हो, व
सब मन वचन काया करके, रात्रि अतिचार आलोय
करके प्रतिक्रमण में आलोऊँ, तस्स मिच्छामि दुक्कड
(नीचे बैठके दाहिना हाथ चरवले या आसन प
रखके बोलना)

सव्वस्सवि राइअ दुच्चिंतिअ दुब्भासिअ दुच्चिट्ठिअ
इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! 'इच्छं' तस्स मिच्छामि
क्कडं ॥

(अब दाहिना गोडा ऊँचा करके 'भगवन्
पडुँ ? इच्छं' कहकर तीन वार 'नवकार'
'करेमि भंते' और 'इच्छामि पडिक्क०
'वंदित्तुसूत्र' बोलें)

णमो अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं। णमो
याणं। णमो उवज्झायाणं। णमो लोए सव्व
एसो पंच नमुक्कारो। सव्व-पावप्पणासणो, मंग
सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

करेमि भंते! सामाइयं, सावज्जं जोगं
क्खामि। जावनियमं पज्जुवासामि, दुविहं
मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस
पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरा

इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे राइओ
कमो काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो
अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अ
अणिच्छिअव्वो असावगपाउग्गो नाणे दंसणे
चरित्ते सुए सामाइए तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं
ायाणं, पंचण्हं

जं बद्धमिंदिएहिं, चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहिं।
रागेण व दोसेण व, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४॥
आगमणे, निग्गमणे ठाणे चंकमणे अणाभोगे।
अभिओगे अ निओगे, पडिक्कमे राइअं सव्वं ॥५॥
संका कंख विगिच्छा, पसंस तह संथवो कुलिंगीसु।
सम्मत्तस्सइआरे, पडिक्कमे राइअं सव्वं ॥६॥
छक्कायसमारंभे, पयणे अ पयावणे अ जे दोसा।
अत्तट्ठा य परट्ठा, उभयट्ठा चेव तं निंदे ॥७॥

पंचण्हमणुव्वयाणं, गुणव्वयाणं च तिण्हमइयारे ।
सिक्खाणं च चउण्हं, पडिक्कमे राइअं सव्वं ।

पढमे अणुव्वयम्मि, थूलगपाणाइवाय - विरईओ ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ।

वहबंधछविच्छेए, अइभारे भत्तपाणवुच्छेए ।
पढमवयस्सइआरे, पडिक्कमे राइअं सव्वं ।।

बीए अणुव्वयंमि, परिथूलग-अलिअ-वयणविरईओ ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ।।

सहसा-रहस्सदारे, मोसुवएसे अ कूडलेहे अ ।
बीअवयस्सइआरे, पडिक्कमे राइअं सव्वं ।।

तइए अणुव्वयम्मि, थूलगपरदव्वहरण-विरईओ ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ।।

तेनाहडप्पओगे, तप्पडिरूवे विरुद्धगमणे अ ।
कूडतुलकूडमाणे, पडिक्कमे राइअं सव्वं ।।

चउत्थे अणुव्वयम्मि, निच्चं परदार-गमण विरईओ ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ।।

इत्तर, अणंगवीवाहतिव्वअणुरागे ।
पडिक्कमे राइअं सव्वं ।।

इंगालीवणसाडी-भाडी फोडी सुवज्जए कम्मं ।
वाणिज्जं चेव दंत-लक्ख-रस-केसविसविसयं ॥२२॥
एवं खु जंतपिल्लण, कम्मं निल्लंछणं च दवदाणं ।
सरदहतलायसोसं, असईपोसं च वज्जिज्जा ॥२३॥
सत्थग्गि मुसलजंतग तणकट्ठे मंतमूल भेसज्जे ।
दिन्ने दवाविए वा, पडिक्कमे राइअं सव्वं ॥२४॥
ण्हाणुव्वट्टण-वन्नग, विलेवणे सद्दरूवरसगंधे ।
आभरणे, पडिक्कमे राइअं सव्वं ॥२५॥

वंदण-वयसिक्खा-गारवेसु-सन्ना-कसाय-दंडेसु ।
गुत्तीसु अ समिईसु अ, जो अइआरो अ तं निंदे ॥३५॥
सम्मदिट्ठी जीवो, जइ वि हु पावं समायरइ किंचि ।
अप्पो सि होइ बंधो, जेण न निद्धंधसं कुणइ ॥३६॥
तं पि हु सपडिक्कमणं, सप्परिआवं सउत्तरगुणं च ।
खिप्पं उवसामेई, वाहि व्व सुसिक्खिओ विज्जो ॥३७॥
जहा विसं कुट्ठगयं, मंतमूलविसारया ।
विज्जा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निव्विसं ॥३८॥
एवं अट्ठविहं कम्मं, रागदोससमज्जिअं ।
आलोअंतो अ निंदंतो, खिप्पं हणइ सुसावओ ॥३९॥
कयपावो वि मणुस्सो आलोइय निंदिअ गुरुसगासे ।
होइ अइरेगलहुओ, ओहरिअ-भरुव्व भारवहो ॥४०॥
आवस्सएण एएण, सावओ जइ वि बहुरओ होइ ।
दुक्खाणमंतकिरिअं, काही अचिरेण कालेण ॥४१॥
आलोअणा बहुविहा, न य संभरिआ पडिक्कमणकाले ।
मूलगुण उत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४२॥
तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स ।
अब्भुट्ठिओमि आराहणाए, विरओमि विराहणाए ।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥४३॥

होइ अइरेगलहुओ, ओहरिअ-भरुव्व भारवहो ॥४०॥
आवस्सएण एएण, सावओ जइ वि बहुरओ होइ ।
दुक्खाणमंतकिरिअं, काही अचिरेण कालेण ॥४१॥
आलोअणा बहुविहा, न य संभरिआ पडिक्कमणकाले ।
मूलगुण उत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४२॥
तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स ।
अब्भुट्ठिओमि आराहणाए, विरओमि विराहणाए ।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥४३॥

...वंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअ लोए अ...
...ताइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ॥...
...वंत के वि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे अ...
...सिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥...
...वरसंचियपावपणासणीइ, भवसयसहस्स-महणीए...
...उवीस-जिण-विणिग्गय-कहाइ, वोलंतु मे दिअहा...
...म मंगलमरिहंता, सिद्धा साहू सुअं च धम्मो अ...
...म्मदिट्ठी देवा, दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥...
...डिसिद्धाणं करणे, किच्चाणमकरणे पडिक्कमण...
...असद्दहणे अ तहा, विवरीय-परूवणाए अ ॥...
...खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे...
...मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणइ...
...एवमहं आलोइअ, निंदिय गरहिय दुगंछिअं सम्म...
...तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥...

(मुँहपत्ति रख कर वांदणा दें)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जाव...
...निसीहिआए । अणुजाणह मे मिउग्गहं, निसीहि...
...कायं काय-संफासं । खमणिज्जो भे किलामो...
...क्किंताणं बहुसुभेण भे राइ वइक्कंता ? ज...

अब्भुट्ठिओ सूत्र—

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! अब्भुट्ठिओमि अब्भिंतर राइअं खामेउं? 'इच्छं' खामेमि राइअं। जं किंचि अपत्तिअं, परपत्तिअं, भत्ते पाणे विणए वेयावच्चे आलावे संलावे उच्चासणे समासणे, अंतरभासाए, उवरिभासाए, जं किंचि मज्झ विणय-परिहीणं, सुहमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह, अहं न जाणामि तस्स मिच्छामि दुक्कडं॥

(फिर नीचे मुताबिक दो वांदना देना)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणि
निसीहिआए । अणुजाणह मे मिउग्गहं । निसीहि
कायं काय-संफासं । खमणिज्जो भे किलामो अ
ताणं बहुसुभेण भे, राइवइक्कंता ? जत्ता भे ? ज
च भे ? खामेमि खमासमणो ! राइअं वइक्कमं, अ
आए' पडिक्कमामि खमासमणाणं, राइआएआस
तित्तीसन्नयराए जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए व
डाए कायदुक्कडाए, कोहाए माणाए मायाए
सव्वकालिआए सव्वमिच्छोवयराए सव्वधम्माइक्क
आसायणाए जो मे अइयारो कओ तस्स खमास
पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरा
(पुनः उपरोक्त सूत्र पढ़ें । फिर मस्तक में अंजली लगा क
आयरियउवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुलग
जे मे केइ कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि
सव्वस्ससमणसंघस्स, भगवओ अंजलिं करिअ
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयंपि
सव्वस्स जीवरासिस्स, भावओ धम्मनिहिअनिअ
सव्वं खमावइत्ता, खमामि, सव्वस्स अहयं

१—दूसरी बार में 'आवस्सिआए' नहीं बोलना चाहिए

सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं विसोही-करणेणं, विसल्ली करणेणं पावाणं कम्माणं णिग्घायणट्ठाए, ठामि काउस्सग्गं ।

"श्री महावीर स्वामी छम्मासी तप चिंतवणा निमित्त करेमि काउस्सग्गं" अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससि-एणं, खासिएणं छीएणं जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं

खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, ए
आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे क
जाव अरिहंताणं भगवंताणं णमुक्कारेणं न पारे
कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरा

(काउस्सग्ग में भी महावीरस्वामीकृत छम्मासि
करना* । अथवा छह लोगस्स या चौवीस नवकार
जो पच्चक्खाण करना हो वह मन में धारकर काउस्सग

---

*छमासी तप चिंतन की विधि इस प्रकार है; अपनी
कि हे आत्मन् ! तू भगवान् महावीर देवके शासनमें विच
परमात्मा श्रीवीर प्रभुने जैसे छम्मासी तप किया था वैसे
है ? मनसे ही उत्तर देना कि नहीं, तो एक दिन कम ? न
नहीं, इस तरह एकेक दिन कम पूछते जाना और उत्तरमें
यावत् २९ दिन कम करके उत्तरमें ना कहना, बादमें पाँच म
ना कहना, फिर उसमें भी एकेक दिन कम करते हुए २९ दि
४ मासका प्रश्न करना, और उसको भी ना कहना, इसी
हर एक महीने में एकेक दिन कम करते हुए यावत् २ म
और एक महीने तक विचारना, पीछे एक मासमेंसे भी एके
हुए १३ दिन कम करके, उसके बाद चौंतीस भक्त (१६ उप
भक्त (१५ उपवास) आदि क्रमसे दो-दो भक्त कम करते
(१ उपवास) और आंबिल नीवी एकलठाणा एकासणा
अवड्ढ पुरिमड्ढ साढपोरसी और अन्तमें नोकारसी तक
जो पच्चक्खाण करने के भाव हो वह करनेका मनमें धार
पारना ।

इस तप चिंतन विधिमें यह खास ध्यानमें रखने
अपने न किया हो उसके लिए विचारना कि मैं नहीं कर
जो तप पहले किया हो वहाँसे नीचेके तपमें विचारना कि
लेकिन आज भाव नहीं है ।

उत्तमा सिद्धा। आरुग्ग बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तम दिंतु ॥ ६ ॥ चन्देसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहिय पयासयरा। सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ७ ॥

(अब छट्ठा आवश्यक की मुँहपत्ति पडिलेहना, फिर नी मुजब दो वांदना देना)

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए। अणुजाणह मे मिउग्गहं। निसीहि, अहो-यं कायसंफासं, खमणिज्जो भे किलामो। अप्पकिलंताण

महुसुभेण मे, राइवइक्कंता ! जत्ता भे ! जवणि
खामेमि खमासमणो राइअं वइक्कम्मं आव
पडिक्कमामि, खमासमणाणं, राइआए आस
तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए
डाए कायदुक्कडाए, कोहाए माणाए मायाए
सव्वकालिआए, सव्वमिच्छोवयाराए सव्वधम्माइक्क
आसायणाए जो मे अइयारो कओ तस्स ख
पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसि

(पुनः उपरोक्त सूत्र पढ़ें जिसमें आवस्सिआए न

सकल-तीर्थ-नमस्कार

सद्भक्त्या देवलोके रविशशिभवने
निकाये, नक्षत्राणां निवासे [illegible]
विमाने । पाताले पन्नगेन्द्रे [illegible]
सान्द्रान्धकारे, [illegible]
चैत्यानि वन्दे ॥ १ ॥ [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

वा । डाहाले कोशले वा विगलितसलिले जंगले वाढमाले,
श्रीमत्तीर्थंकराणां प्रतिदिवसमहं तत्र चैत्यानि वन्दे ॥५॥
अंगे बङ्गे कलिङ्गे सुगतजनपदे सत्प्रयागे तिलङ्गे, गौडे
चौडे मुरण्डे वरतरद्रविडे उद्रियाणे च पौण्ड्रे । आद्रे
माद्रे पुलिन्द्रे द्रविडकवलये कान्यकुब्जे सुराष्ट्रे,
श्रीमत्तीर्थंकराणां प्रतिदिवसमहं तत्र चैत्यानि वन्दे ॥६॥
चम्पायां चन्द्रमुख्यां गजपुरमथुरापत्तने चोज्जयिन्यां,
कोशाम्ब्यां कोशलायां कनकपुरवरे देवगिर्यां च काश्याम् ।
ासिक्ये राजगेहे दशपुरनगरे भद्दिले ताम्रलिप्त्यां,

श्रीमत्तीर्थंकराणां प्रतिदिवसमहं तत्र चैत्यानि व
स्वर्गे मर्त्येऽन्तरिक्षेगिरिशिखरहृदेस्वर्नदीनीरतीरे,
नागलोके जलनिधिपुलिने भूरुहाणां निकुंजे । ग्रा
वने वा स्थलजलविषमे दुर्गमध्ये त्रिसन्ध्यं, श्रीम
राणां प्रतिदिवसमहं तत्र चैत्यानि वन्दे ॥८॥ श्री
कुलाद्रौ रुचकनगवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे, चौज्ज
नन्दे रतिकररुचके कोण्डले मानुषांके । इक्षुकारे
च दधिमुखगिरौ व्यन्तरे स्वर्गलोके, ज्योतिर्लोके
त्रिभुवनवलये यानि चैत्यालयानि ॥९॥ इत्थं
चैत्यस्तवनमनुदिनं ये पठन्ति प्रवीणाः, प्रोद्यत
हेतुं कलिमलहरणं भक्तिभाजस्त्रिसन्ध्यम् । तेषां
यात्राफलमतुलमलं जायते मानवानां, कार्याणां
स्वैः प्रमुदितमनसां चित्तमानन्दकारी ॥१०॥

(पीछे)

"इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! पसायकरी
स्वाध्याय करावो जी"

(ऐसा कहकर गुरुजसे या वृद्ध साधर्मिक के
या स्वयं स्वाध्यायार्थ के जानने वाली इच्छानुसार नवकार
आदि का पच्चक्खाण करें)

वत्तियागारेणं 'विगईओ पच्चक्खामि, अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं लेवालेवेणं, गिहत्थसंसिट्ठेणं उक्खित्तविवेगेणं, पडुच्चमक्खिएणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, देसावगासियं भोगपरिभोगं, पच्चक्खामि, अग्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, वोसिरामि।

(पोरसी का पच्चक्खाण करना हो तो 'नवकारसहिअं' के स्थान पर 'पोरिसिं' कहें। और उपवास एकासनादि पच्चक्खाण हो तो एक साथ पीछे लिखे हैं वहां से देख लें।)

इच्छामो अणुसट्ठिं नमो खमासमणाणं नमोऽ
ाचार्योपाध्यायसर्व्वसाधुभ्यः ।

(यहाँ पर स्त्रियाँ प्रतिक्रमण करती हों तो 'संसारदा
के अनुसार कहें)—

संसारदावानलदाहनीरं, संमोहधूलीहरणे स
मायारसादारणसारसीरं, नमामि वीरं गिरिसा
॥१॥ भावावनामसुरदानवमानवेन, चूलाविलोलक
वलिमालितानि । संपूरिताभिनतलोकसमीहितानि,
नमामि जिनराजपदानि तानि ॥२॥ बोधागाधं सुप
वीनीरपूराभिरामं, जीवाहिंसाविरललहरीसंगमागाह
चूलावेलं गुरुगममणिसंकुलं दूरपारं, सारं वीरागम
निधिं सादरं साधु सेवे ॥ ३ ॥

(अगर पुरुष प्रतिक्रमण करते हों तो नीचे मु
'परसमयतिमिरतरणिं' की तीन गाथा कहें)—

परसमयतिमिरतरणिं, भवसागरवारितरणवरतर
रागपरागसमीरं, वन्दे देवं महावीरम् ॥१॥ निरुद्धसं
[illegible] भावारिगणा निकामम् । निरन्तरं
[illegible] मोहभरं हरन्तु ॥२॥ सं
[illegible]

याणं, बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं सव्वनूणं सव्वदरिसीणं, सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुण-रावित्ति, सिद्धिगइनामधेयं, ठाणं संपत्ताणं, नमो जिणाणं जिअभयाणं जे अ अईआ सिद्धा, जे अ भवि-स्संति णागए काले। संपइ अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि।

(अब खड़े होकर बोलो)

अरिहंतचेइआणं करेमि काउस्सग्गं। वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए,

बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए। सद्धाए, मेहाए, घिईए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं भमलीए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो। जाव अरिहंताणं भगवंताणं णमुक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

(एक नवकार का काउस्सग्ग पार करके "नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः" कह कर प्रथम थुइ कहे।)

मूरति मन मोहन, कंचन कोमल काय,
सिद्धारथ नंदन, त्रिशला देवी सुमाय।
मृगनायक लंछन, सात हाथ तनु मान,
दिन दिन सुखदायक, स्वामी श्रीवर्द्धमान।

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे। अ

यासयरा। सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धि मम
संतु ॥ ७ ॥

सव्वलोए अरिहंतचेइयाणं करेमि काउस्सग्गं। वंद-
वत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माण-
त्तिआए, बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए,
द्धाए, मेहाए, धिईए, धारणाए, अणुप्पेहाए वड्ढमाणोए
।मि काउस्सग्गं ॥

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं
भाइएणं, उड्डुएणं वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमु-

च्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलस
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं
अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अ
भगवंताणं, नमुक्कारेणं न पारेमि, ताव काय
मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(एक नवकार का काउस्सग्ग "नमो ऽर्हत्
पाध्याय सर्व साधुभ्यः" कहकर मष्ट दूसरी थुइ कहना

सुर नरवर किन्नर, वन्दित पद अरविं
कामित भर पूरण, अभिनव सुरतरु कन्द
भवियणने तारे, प्रवहण सम निशदी
चोवीसे जिनवर, प्रणमुं विशवा वीस

पुक्खरवरदीवड्ढे, धायईसंडे अ जंबुदीवे अ
रवयविदेहे, धम्माइगरे नमंसामि ॥ १ ॥ तमति
पडलविद्धंसणस्स सुरगणनरिंदमहियस्स । सी
धरे, पप्फोडिअ मोहजालस्स ॥ २ ॥ जाईजराम
पणासणस्स, कल्लाण—पुक्खलविसाल-सुहावहस्स
देवदाणवनरिंदगणच्चिअस्स, धम्मस्स सारमुवल
पमायं ? ॥ ३ ॥ सिद्धे भो ! पयओ नमो
नंदी सया संजमे, देवं नागसुवण्णकिन्नरगण

रेहिं, अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो । जा
अरिहंताणं भगवंताणं, णमुक्कारेणं न पारेमि ताव का
ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(एक नवकार का काउस्सग्ग करके प्रकट "णमोऽर्हत्सिद्धाचा
ध्याय सर्व साधुभ्यः" कहकर तीसरी थुइ कहना)

अरथें करी आगम, भाख्या श्री भगवंत ।
गणधर ते गुंथ्या, गुणनिधि ज्ञान अनन्त ॥
सुरगुरु पण महिमा, कही न शके एकन्त ।
समरू सुखसायर, मन सुद्ध सूत्र सिद्धान्त ॥ ३ ॥

सिद्धाणं बुद्धाणं, पारगयाणं परंपरगयाणं। लोअग्गमुवगयाणं, नमो सया सव्वसिद्धाणं ॥१॥ जो देवाण वि देवो, जं देवा पंजली नमंसंति। तं देवदेवमहिअं, सिरसा वंदे महावीरं ॥२॥ इक्कोवि नमुक्कारो, जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स। संसारसागराओ, तारेइ नरं व नारिं वा ॥३॥ उज्जिंतसेलसिहरे, दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स। तं धम्मचक्कवट्टिं, अरिट्ठनेमिं नमंसामि ॥४॥ चत्तारि अट्ठ दस दो य, वंदिआ जिणवरा चउव्वीसं। परमट्ठनिट्ठिअट्ठा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥५॥

वेयावच्चगराणं संतिगराणं सम्मद्दिट्ठिसमाहिगराणं करेमि काउस्सग्गं ॥

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

माणं लोगनाहाणं, लोगहिआणं लोगपईवाणं, लोग-
पज्जोअगराणं ॥ ४ ॥ अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गद-
याणं, सरणदयाणं बोहिदयाणं ॥ ५ ॥ धम्मदयाणं,
धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवर-
चाउरंत-चक्कवट्टीणं ॥६॥ अप्पडिहयवर-नाणदंसणधराणं
विअट्टछउमाणं ॥ ७ ॥ जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं,
तारयाणं, बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं ॥ ८ ॥
सव्वन्नूणं, सव्वदरिसीणं, सिवमयलमरुअमणंतमक्खय-

मव्वाबाहमपुणरावित्ति सिद्धिगइ-नामधेयं ठाण
नमो जिणाणं, जिअभयाणं ॥ ९ ॥ जे अ अ
जे अ भविस्संति णागए काले। संपइ अ वट्ट
तिविहेण वंदामि ॥ १० ॥

इच्छामि खमासमणो वंदिउं ज
निसीहिआए मत्थएण वंदामि 'श्रीआचार्यजी

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्ज
हिआए मत्थएण वंदामि 'श्रीउपाध्यायजी मि

इच्छामि खमासमणो वंदिउं ज
निसीहिआए मत्थएण वंदामि 'सर्वसाधुजी मि

(पूर्व में मुख कर के तीन खमासमण देकर श्री
का चैत्यवन्दन कर)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं ज
निसीहिआए मत्थएण वंदामि ।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! चैत्य
करूं ?

श्री सीमंधर स्वामी चैत्यवन्द

जय जय त्रिभुवन आधिकार, पंचम भवि
जय जय करुणा सांत दांत, भविजन हितका

दयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, बोहिदयाणं, धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवर, चाउरंत-चक्कवट्टीणं, अप्पडिहयवरनाणदंसणध-राणं, विअट्टछउमाणं, जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तार-याणं, बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं, मोअगाणं, सव्वन्नूणं, सव्वदरिसीणं, सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुण-राविति, सिद्धिगइनामधेयं, ठाणं संपाविउं कामस्स*

---

* श्री सीमंधर स्वामी अभी विद्यमान हैं अतः उनका चैत्य-वन्दन यहीं तक बोलना उचित है

(संपत्ताणं, नमो जिणाणं जिअभयाणं ॥ जे अ अईया
सिद्धा, जे अ भविस्संति णागए काले। संपइ अ
वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि ॥)

जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअ
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं
जावंत केवि साहू, भरहेरवयमहा
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरया
नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः

श्री सीमंधर जिन स्तवन

श्री सीमंधर साहिबा, वीनतडी अवधा
परम पुरुष परमेसरू, आतम परम आधार
॥१॥ केवलज्ञान दिवाकरू, भांगे सादि अनन्त
भासक लोकालोक के, ज्ञायक ज्ञेय अनन्त
॥ श्री० ॥ २ ॥ इंद्र चंद्र चक्रीसरू, सुर नर र
सारे । ... सेवे सदा, ... पा
सारे ॥ श्री० ॥ ३ ॥ ... ... जिम वसे,
हंस ... ...
... ... श्री० ॥ ४ ॥ ...

काउस्सग्गं।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं
छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं भमलिए
पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेल
संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं
आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो
जाव अरिहंताणं भगवंताणं णमुक्कारेणं न पारेमि ताव
कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

(एक नवकार का काउस्सग्ग कर "नमो
ऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः"
सीमंधरजी की थुई कहें ।)

महीमंडणं पुण्णसोवन्नदेहं, जणाणंदणं केवल
महाणंदलच्छी बहुबुद्धिरायं, सुसेवामि सीमंधरं

(पीछे नीचे लिखे तीन खमासमण पूर्वक सि
सामने मुख करके सिद्धाचलजी का चैत्यवंदन करें)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं ज
निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारे
भगवन् ! चैत्यवंदन करूं ? 'इच्छं'

श्री सिद्धाचलजी का चैत्यवन्द

जय जय नाभिनरिंद नंद, सिद्धाचल
जय जय प्रथम जिणंदचंद, भवदुःख विहं
जय जय साधु सुरिंद विंद, वंदिय
जय जय जगदानंद कंद, श्रीऋषभ जिने
त्रयभुवन जिन—धर्मनो ए, दायक
शुभ पदपंकज सीविऊ, नित दिन नरवर
... जं किंचि नामतित्थं, सग्गे पायालि
... जिणबिंबाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि ॥१

मव्वाबाहमपुणराविंत्ति, सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जिअभयाणं, जे अ अईआ सिद्धा, जे अ भविस्संति णागए काले। संपइ-अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि।

जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअ लोए अ।
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं॥

जावंत केवि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे अ।
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं॥

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्य

सिद्धाचलजी का स्तवन

सिद्धाचलगिरि भेट्यारे, धन्य भाग्य हमा
(टेर) ए गिरिवरनी महिमा मोटी, कहेवा
पारा। रायण रूंख समोसर्या स्वामी,
वारारे ॥ धन्य० ॥ सि० ॥ १ ॥ मूलनायक
जिनेश्वर, चौमुख प्रतिमा चारा। अष्टद्र
भावे, समकित मूल आधारा रे ॥ धन्य० ॥
दूर देशांतरथी हूँ आयो, श्रवणे सुणी गुण
पतित उद्धारण बिरुद तुमारो, एह तीरथ ज
॥ धन्य० ॥ सि० ॥ ३ ॥ भाव भगति सुं प्र
अपना जनम सुधारा। यात्रा करी भविजन
नरक तिर्यंच गति वारारे ॥ धन्य० ॥ सि
संवत अठार त्यासी मास अषाढ, वदि आठम
प्रभुजीके चरन परतापके संघमें, "खमार
प्यारारे ॥ धन्य० ॥ सि० ॥ ५ ॥

जय वीयराय! जगगुरु! होउ ममं तु
भयवं! भवनिव्वेओ मग्गा-णुसारिआ इट्ठफ

मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(यहाँ एक नवकारका काउस्सग्ग कर "नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः" कह कर श्री सिद्धाचलजी की थुइ कहना ।)

शत्रुंजगिरि नमियें, ऋषभदेव पुंडरीक ।
शुभ तपनी महिमा, सुणि गुरुमुख निरभीक ।
शुद्ध मन उपवासें, विधिसुं चैत्यवंदनीक ।
करियें जिन आगल, टाली वचन अलीक ॥ १ ॥

इति राइ-प्रतिक्रमण-विधि ॥

पडिलेहण विधि

(अब स्थिरता हो तो नीचे लिखी विधि के अनु
करें। पोषध वालों के लिए अनिवार्य है और व्य
हो तो दृष्टिपडिलेहन तो अवश्य करें*।)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्ज
हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण
भगवन् ! पडिलेहण संदिसाउं ? 'इच्छं'

इच्छामि०*। इच्छाकारेण संदिस
पडिलेहण करूं ? 'इच्छं'

(यहां मुहपत्ति की पडिलेहण करें)—

इच्छामि० इच्छाकारेण संदिसह भग
पडिलेहण संदिसाउं ? 'इच्छं'

इच्छामि०। इच्छाकारेण संदिसह भ
पडिलेहण करूं ? 'इच्छं'

(मुहपत्ति, आसन, चरवला, धोती और कंदो
करके फिर)—

---

* कोई सामायिक पारने के बाद भी पडिलेहन कर

* इच्छामि खमासमणो० इत्यादि संपूर्ण पाठ बोल

करु इच्छं

(ऐसा कह कर कंबल वस्त्र आदि सब की पडिलेहण करे। पीछे पौषधशाला की प्रमार्जना करके पूंज कचरा) निवद्य भूमि र परठ कर नीचे लिखे अनुसार इरियावहियं करे)—

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसोहिआए मत्थएण वंदामि ।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! इरियावहियं पडिक्कमामि ! इच्छं । इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहिआए, राहणाए गमणागमणे पाणक्कमणे बीयक्कमणे हरियक्कमणे

ओसा उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कड़ासंताणा
जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया, बेइंदिया,
चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया,
संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया,
ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ व
तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं
करणेणं, विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं णिग्घ
ठामि काउस्सग्गं ।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं,
छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं,
पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमे
संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं
रेहिं, अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो
अरिहंताणं भगवंताणं, णमुक्कारेणं न पारेमि
ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(... ... का पा ... नवकार का
... ... 'लोगस्स'

(ऐसा कह कर कंबल वस्त्र आदि सब की पडिलेहण करे। पीछे पौषधशाला की प्रमार्जना करके कूड़ा कचरा) निवद्य भूमि पर परठ कर नीचे लिखे अनुसार इरियावहियं करे)—

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! इरियावहियं पडिक्कमामि ! इच्छं। इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहिआए, विराहणाए गमणागमणे पाणक्कमणे बीयक्कमणे हरियक्कमणे

उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कड़ासंताणा संकम
जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदि
चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसि
, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दवि
ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोवि
तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं विसोह
करणेणं, विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं णिग्घायणट्ठा
ठामि काउस्सग्गं ।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिए
छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलि
पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेल
संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आग
रेहिं, अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो । जा
भगवंताणं, णमुक्कारेणं न पारेमि ताव का
झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

लोगस्स का या चार नवकार का काउस्स
अनुसार प्रगट 'लोगस्स' कहना

संध्याकालीन सामायिक लेने की विधि

दिन के अंतिम प्रहर में पौषधशाला आदि में अथवा गृह के किसी एकान्त स्थान में जाकर, उस स्थान का तथा वस्त्र का पडिलेहन करें। देरी हो गई हो तो दृष्टि पडिलेहन करें साधुजी न हो तो तीन नवकार गिन कर स्थापना करे। पीछे स्थापनाचार्य के सामने बैठकर, भूमि प्रमार्जन करके, बांयी ओर आसन के ओर बांयें हाथ में मुहपत्ति लेकर नीचे का पाठ कहे)—

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज
हिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदि
सामायिक लेवा मुहपत्ति पडिलेहुं ! 'इच्छं'।

(ऐसा कहकर मुहपत्ति पडिलेहना, पीछे)—

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज
हिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदि
सामायिक संदिसाउं ! इच्छं।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्ज
आए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदि
सामायिक ठाउं ! इच्छं।

(खड़े होकर तीन नवकार गिने पीछे "इच्
संदिसह भगवन् ! पसाय करी स
दंडक उच्चरावो जी" ऐसा बोलकर तीन
भंते उच्चरे)

करेमि भंते ! सामाइअं, सावज्जं ज
क्खामि। जाव नियमं पज्जुवासामि, दु
मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवे
पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं
(तीन बार कहना)

जीविआओ ववरोविया तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं ।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो

अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंता
णं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं
मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ।

(यहाँ पर एक लोगस्सका या चार नवकारका
करना, पार कर पीछे प्रगट 'लोगस्स' कहना)

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे ।
कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली ॥ १ ॥ उसभमजि
वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च । पउमप्पहं
जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ २ ॥ सुविहिं च पु
सीअल-सिज्जंस-वासुपुज्जं च । विमलमणंतं च जिणं
संतिं च वंदामि ॥ ३ ॥ कुंथुं अरं च मल्लि
मुणिसुव्वयं नमिजिणं च । वंदामि रिट्ठनेमिं, पा
वद्धमाणं च ॥ ४ ॥ एवं मए अभिथुआ, विहुय र
पहीणजरमरणा । चउवीसंपि जिणवरा, तित्थय
पसीयंतु ॥ ५ ॥ कित्तिय वंदिय महिया, जे ए ल
उत्तमा सिद्धा । आरुग्ग बोहिलाभं समाहिव
दिंतु ॥ ६ ॥ चन्देसु निम्मलयरा, आइच्चेसु
पयासयरा । सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं
दिसंतु ॥ ७ ॥

बहुसुभेण भे दिवसो वइक्कंतो ? जत्ता भे ? जवणिज्जं च
भे खामेमि खमासमणो ! देवसिअं वइक्कम्मं, आवस्सि
आए पडिक्कमामि खमासमणाणं,देवसिआए आसायणाए
तित्तिसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए वयदुक्क
डाए कायदुक्कडाए कोहाए माणाए मायाए लोभाए
सव्वकालिआए सव्वमिच्छोवयाराए सव्वधम्माइक्कमणाए
आसायणाए जो मे अइयारो कओ तस्स खमासमणो
पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।
पुनः वांदणा दें, "आवस्सिआए" न बोलें।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज
हिआए मत्थएण वंदामि। "इच्छकारि भ
करी पच्चक्खाण कराओजी।"

(अब यथाशक्ति पच्चक्खाण करना

(१) चउविहार का पच्चक्खाण

दिवसचरिमं पच्चक्खामि, चउव्विह
असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगे
रेणं, महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तिआगारेण

(२) दुविहार का पच्चक्खाण।

दिवसचरिमं पच्चक्खामि, दुविहं
असनं, खाइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसाग
गारेणं, सव्वसमाहिवत्तिआगारेणं वोसिरा

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! सिज्झाय संदिसाउं? इच्छं।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! सिज्झाय करूं? इच्छं।

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि।

(कह कर खड़े खड़े आठ नवकार गिने।)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्ज-
...आए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण
भगवन ! बेसणो संदिसाउं ! 'इच्छं'

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं ज-
निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारे-
भगवन ! बेसणो ठाउं ! 'इच्छं'

(अब आसन बिछा कर बैठ जाय और वस्त्र
हो तो नीचे का पाठ बोल कर वस्त्र ग्रहण करें।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं ज-
निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारे-
भगवन् ! पंगुरणं संदिसाउं ! 'इच्छं'

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्ज-
हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदि-
पंगुरणं पडिग्गहुं ! 'इच्छं'

(पीछे दो घड़ी (४८ मि०) स्वाध्याय करें या प्र-

॥ इति सन्ध्याकालीन सामायिक वि-

सुहाइ ! पास थभणय ! ॥ १ ॥ तइ सम-
रंत लहंति झति वरपुत्तकलत्तइ, धण्ण-सुवण्ण-हिरण्णपुण्ण
जण भुंजइ रज्जइ । पिक्खइ मुक्ख असंखसुक्ख तुह पास !
पसाइण, इअ तिहुअणवरकप्परुक्ख ! सुक्खइ कुण मह
जिण ॥ २ ॥ जरजज्जर परिजुण्णकण्ण नट्ठुट्ठ सुकुट्ठिण ।
चक्खुक्खीण खएण खुण्ण नर सल्लिय सूलिण । तुह
जिण ! सरणरसायणेण लहु हुंति पुणण्णव, जय धन्नं
तरि ! पास ! मह वि तुह रोगहरो भव ॥ ३ ॥ विज्जा-
जोइस-मंत-तंत-सिद्धीउ अपयत्तिण । भवणब्भअ अट्ठविह

सिद्धि सिज्झहि तुह नामिण। तुह नामिण अपवित्तओ जण होइ पवित्तउ। तं तिहुअणकल्लाणकोस तुह पास निरुत्तउ ॥ ४ ॥ खुद्दपउत्तइ मंत-तंत-जंताइं विसुत्तइ चरथिरगरल-गहुग्ग-खग्ग-रिउवग्ग विगंजइ। दुत्थिअ-सत्त अणत्थ-घत्थ नित्थारइ दय करि। दुरियइ हरउ स पास देउ दुरियक्करिकेसरि ॥ ५ ॥ जइ तुह रूविण किण पेयपाइय वेलवियउ, तु वि जाणउ जिणपास तुम्हि हउ अंगीकरिअउ। इय मह इच्छिउ जं न होइ सा तुह ओहावणु, रक्खंतह नियकित्ति णेय जुज्जइ अवहीरणु ॥ ६ ॥ एह महारिय जत्त देव इहु न्हवणमहूसउ, जं अणलिय गुणगहण तुम्ह मुणिजणअणिसिद्धउ। एम पसीह सुपासनाह! थंभणयपुरट्ठिय! इय मुणिवरु सिरिअभयदेउ विन्नवइ आणिंदिय ॥ ७ ॥

(दोनों हाथ जोड़कर मस्तक पर लगा कर)

जय महायस जय महायस जय महाभाग जय चिंतिय सुहफलय, जय समत्थ-परमत्थ जाणय। जय जय गुरुगरिम गुरु, जय दुहत्तसत्ताण ताणय। थंभणयट्ठिय पासजिण भवियह भीमभवुत्थु। भय अवणिताणंतगुण, तुज्झ तिसंझ नमोत्थु ॥ १ ॥

मव्वाबाहमपुणरावित्ति, सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताण
नमो जिणाणं जिअभयाण, जे अ अईआ सिद्धा, जे अ
भविस्संति णागए काले। संपइ-अ वट्टमाणा, सव्वे
तिविहेण वंदामि।

(अब खड़े होकर बोलना)

अरिहंतचेइआणं करेमि काउस्सग्गं। वंदणवत्तिआए
पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहि-
लाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए, सद्धाए, मेहाए, धिईए,
धारणाए, अणुप्पेहाए, वड्ढमाणीए, ठामि काउस्सग्गं।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्त-मुच्छाए, सुहुमेहिं, अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमुक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(एक नवकार का काउस्सग्ग कर "नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः" कह कर प्रथम थुई कहना)—

अश्वसेन नरेसर, वामादेवी नन्द । नव कर तनु निरुपम, नील वरण सुखकन्द ॥ अहि लंछन सेवित, पउमावई धरणिंद । प्रह ऊठी प्रणमुं, नितप्रति पास जिणंद ॥१॥

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे । अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ॥१॥ उसभमजिअं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च । पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥२॥ सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल—सिज्जंस-वासुपुज्जं च । विमलमणंतं च जिणं,

मव्वाबाहमपुणराविति, सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जिअभयाणं, जे अ अईआ सिद्धा, जे अ भविस्संति णागए काले। संपइ-अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि।

(अब खड़े होकर बोलना

अरिहंतचेइआणं करेमि काउस्सग्गं। वंदणवत्तिआए पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए, सद्धाए, मेहाए, धिईए, धारणाए, अणुप्पेहाए, वढ्ढमाणीए, ठामि काउस्सग्गं।

अरिहंताणं भगवंताणं, णमुक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(एक नवकार का काउस्सग्ग करके दूसरी थुइ कहना)—

कुलगिरि वेयड्ढ, कणयाचल अभिराम। मानुषोत्तर नंदो, रुचककुंडल सुखठाम॥ भुवणेसर व्यंतर, जोइस विमाणी नाम। वर्त्तें ते जिनवर, पूर्छो मुझ मन काम॥२॥

काउसग्ग पारना

पुक्खरवरदीवड्ढे, धायइसंडे अ जंबुदीवे अ। भरहेरवयविदेहे, धम्माइगरे नमंसामि ॥१॥ तम-तिमिर-पडल-विद्धंसणस्स सुरगणनरिंदमहियस्स। सीमाधरस्स वंदे, पप्फोडिअमोहजालस्स ॥२॥ जाईजरामरणसोगपणासणस्स, कल्लाण-पुक्खल-विसाल-सुहावहस्स। को देव-दाणवनरिंदगणच्चियस्स, धम्मस्स सारमुवलब्भ करे पमायं? ॥३॥ सिद्धे भो! पयओ णमो जिणमए नंदी सया संजमे, देवं नागसुवन्नकिन्नरगणस्सब्भूअभावच्चिए॥ लोगो जत्थ पइट्ठिओ जगमिणं तेलुक्कमच्चासुरं धम्मो वड्ढउ सासओ विजयओ धम्मुत्तरं वड्ढउ ॥४॥ सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं। वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहिलाभ-

जिहां अंग इग्यारे, बार उपांग छ छेद । दस पयन्ना
दांख्या, मूल सूत्र चउ भेद ।। जिन आगम षड्द्रव्य, सप्त
पदारथ जुत्त । सांभली सर्दहतां, त्रूटे करम तुरत्त ।।३।।

सिद्धाणं बुद्धाणं, पारगयाणं परंपरगयाणं । लोअग्ग-
मुवगयाणं, नमो सया सव्वसिद्धाणं ।।१।। जो देवाण वि
देवो, जं देवा पंजली नमंसंति । तं देवदेवमहिअं, सिरसा
वंदे महावीरं ।।२।। इक्कोवि नमुक्कारो, जिणवर-वसहस्स
वद्धमाणस्स । संसार-सागराओ, तारेइ नरं वा नारिं वा ।।३।।

सव्वदरिसीणं, सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहपुणरावित्ति, सिद्धगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं, नमो जिणाणं, जिअभयाणं, जे अ अईआ सिद्धा, जे अ भविस्संति णागए काले। संपइ अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि ॥

(यहाँ चार बार एक एक 'खमासमण' देकर बोलना)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि 'श्रीआचार्यजी मिश्र' ॥१॥

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए मत्थएण वंदामि 'श्री उपाध्यायजी मिश्र ॥२॥

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निनी-हिआए मत्थएण वंदामि 'जंगमयुगप्रधान वर्त्तमान भट्टारक मिश्र' ॥३॥

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए मत्थएण वंदामि 'सर्वसाधुजी मिश्र ॥४॥

(ऐसा कह कर दाहिने हाथ को चरवले या आसन पर रख कर, बाँया हाथ मुहपत्ति सहित मुख के आगे, रखकर सिर झुका कर 'सव्वस्सवि' का पाठ बोलना)

सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चिंतिअ दुब्भासिअ दुच्चि-ट्ठिअ इच्छं तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

(अब खड़े होकर बोलना)

करेमि भंते ! सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं मणेणं, वायाए, काएणं, न करेमि न कारवेमि, तस्स भंते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ॥

इच्छामि ठामि

'चार प्रहर दिवस में' का पाठ मन में चिन्तन करे या आठ नवकार का काउस्सग्ग करे। पीछे प्रगट लोगस्स कहे)

(अब नीचे बैठकर तीसरे आवश्यक की मुहपत्ति पडिलेहना और नीचे मुताबिक दो बार वंदना देना)—

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए! निसिहिआए! अणुजाणह मे मिउग्गहं, निसीहि, अहोकायं कायसंफासं, खमणिज्जो मे किलामो, अप्पकिलंताण बहुसुभेण मे दिवसो वइक्कंतो? जत्ता मे! जवणिज्जं च भे? खामेमि खमासमणो! देवसिअं वइक्कम्मं,

व का हनन या कराया, या हुये का अनुमोदन किया वह सब मन वचन काया करके मिच्छामि दुक्कडं ॥

पहला प्राणातिपात, दूसरा मृषावाद, तीसरा अदत्तादान, चौथा मैथुन, पाँचवाँ परिग्रह, छट्ठा क्रोध, सातवाँ मान, आठवाँ माया, नवाँ लोभ, दसवाँ राग, इग्यारहवाँ द्वेष, बारहवाँ कलह, तेरहवाँ अभ्याख्यान, चौदहवाँ पैशुन्य, पन्द्रहवाँ रति-अरति, सोलहवाँ परपरिवाद, सतरहवाँ माया-मृषावाद, अठारहवाँ मिथ्यात्वशल्य, इन

पाप स्थानकों में से किसी का मैंने सेवन किया कराया या करते हुये का अनुमोदन किया वह सब मन, वचन, काया करके मिच्छामि दुक्कडं ॥

ज्ञान, दर्शन, चारित्र पाटी पोथी, ठवणी, कवली, नवकारवाली, देव-गुरु धर्म की आशातना की हो, पन्द्रह कर्मादानों की आसेवना की हो, राजकथा, देशकथा, स्त्रीकथा, भक्तकथा की हो, और जो कोई परनिंदादि पाप किया हो, कराया हो, करते हुये का अनुमोदन किया हो, वह सब मन, वचन, काया करके, देवसिक अतिचार आलोयण करके प्रतिक्रमण में आलोउं तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

(नीचे बैठ के दाहिना हाथ चरवले या आसन पर रखके सव्वस्सवि बोलना)

सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चिंतिअ दुब्भासिअ दुच्चिट्ठिअ । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! इच्छं । तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

(अब दाहिना गोडा खड़ा करके 'भगवन् बंदिसु सूत्र भणुं?' 'इच्छं' ऐसा कहे । पीछे तीन नवकार और तीन बार 'करेमि भंते०' इच्छामि ठामि कह कर वंदित्तु० कहे)।

उम्मगो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो असावग-पाउग्गो नाणे तह दंसणे चरित्ताचरित्ते सुए सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं पंचण्हमणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्वयाणं, चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडियं जं विराहिअं, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

वंदित्तु (श्रावकप्रतिक्रमण) सूत्र ।

वंदित्तु सव्वसिद्धे, धम्मायरिए अ सव्वसाहू अ ।
इच्छामि पडिक्कमिउं, सावगधम्माइआरस्स ॥१॥

अपरिग्गहिआ-इत्तर, अणंग-वीवाह-तिव्व-अणुरागे ।
चउत्थवयस्सइआरे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१६॥

इत्तो अणुव्वए पंचमंमि, आयरिअमप्पसत्थंमि ।
परिमाणपरिच्छेए, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥१७॥

धण-धन्न-खित्त-वत्थू, रुप्प-सुवन्ने अ कुविअ-परिमाणे ।
दुपए चउप्पयम्मि य, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१८॥

गमणस्स उ परिमाणे, दिसासु उड्ढं अहे अ तिरिअं च ।
वुड्ढि सइअंतरद्धा, पढमंमि गुणव्वए निंदे ॥१९॥

त्मविद्या-इव, अनेक-नीराद-विम अनुरागे ।
व्रजन्त्युतो, परिसरं देशितं पूर्व ॥१६॥
स्वस्य पंक्तयसि, आपतितनतसर्वाणि ।
लिप्सितेन, इति स्वात्मसर्वोत्तं ॥१७॥
विप-वत्, पन तुल्ये च दुरित-परिणामे ।
परम्परनिम च, परिसरे देशितं सर्व ॥१८॥
त च परिणामे, विगाह अनु यो च विधिते च ।
आम्नायतः, वर्त्यसि तुल्यत्व विदे ॥१९॥

मज्जंमि अ मंसंमि अ, पुप्फे अ फले अ गंधमल्ले अ ।
उवभोग-परिभोगे, बीअंमि गुणव्वए निंदे ॥
सच्चित्ते पडिबद्धे, अपोलि दुप्पोलिअं च आहारे ।
तुच्छोसहिभक्खणया, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥
इंगालीवणसाडी, भाडीफोडी, सुवज्जए कम्मं ।
वाणिज्जं चेवय दंत-लक्ख-रस-केस विस-विसयं ॥
एवं खु जंतपिल्लण-कम्मं, निल्लंछणं च दव-दाणं ।
सर-दह-तलाय सोसं, असईपोसं च वज्जिज्जा ॥
सत्थग्गि-मुसल-जंतग- तणकट्ठे मंतमूलभेसज्जे ।
दिन्ने दवाविए वा, पडिक्कमे देसियं सव्वं ॥
न्हाणुव्वट्टण-वन्नग - विलेवणे - सद्द - रूव-रस-गंधे ।
वत्थासण - आभरणे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥
कंदप्पे कुक्कुइए, मोहरि-अहिगरण-भोग-अइरित्ते ।
दंडम्मि अणट्ठाए, तइअम्मि गुणव्वए निंदे ॥
तिविहे दुप्पणिहाणे, अणवट्ठाणे तहा सइ-विहूणे ।
सामाइअ वितह-कए, पढमे सिक्खावए निंदे ॥
आणवणे पेसवणे, सद्दे रूवे, अ पुग्गलक्खेवे,
देसावगासियम्मि, बीए सिक्खावए निंदे ॥

अपरिग्गहिआ-इत्तर, अणंग-वीवाह-तिव्व-अणुरागे ।

चउत्थवयस्सइआरे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१६॥

इत्तो अणुव्वए पंचमंमि, आयरिअमप्पसत्थंमि ।

परिमाणपरिच्छेए, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥१७॥

धण-धन्न-खित्त-वत्थू, रुप्प-सुवन्ने अ कुविअ-परिमाणे ।

दुपए चउप्पयम्मि य, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१८॥

गमणस्स उ परिमाणे, दिसासु उड्ढं अहे अ तिरिअं च ।

वुड्ढि सइअंतरद्धा, पढमंमि गुणव्वए निंदे ॥१९॥

काएण काइअस्स, पडिक्कमे वाइअस्स वायाए।
मणसा माणसिअस्स, सव्वस्स वयाइआरस्स ॥३४॥

वंदणवयसिक्खागा - रवेसु सन्नाकसायदंडेसु ।
गुत्तीसु अ समिईसु अ, जो अइआरो अ तं निंदे ॥३५॥

सम्मद्दिट्ठी जीवो, जइ वि हु पावं समायरइ किंचि ।
अप्पो सि होइ बंधो, जेण न निद्धंधसं कुणइ ॥३६॥

तं पि हु सपडिक्कमणं, सप्परिआवं सउत्तरगुणं च ।
खिप्पं उवसामेई, वाहिव्व सुसिक्खिओ विज्जो ॥३७॥

जहा विसं कुट्ठ-गयं, मंत-मूल-विसारया।
विज्जा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निव्विसं ॥३८॥
एवं अट्ठविहं कम्मं, रागदोससमज्जिअं।
आलोअंतो अ निंदंतो, खिप्पं हणइ सुसावओ ॥३९॥
कयपावो वि मणुस्सो, आलोइय निंदिय गुरुसगासे।
होइ अइरेगलहुओ, ओहरिअ-भरुव्व भारवहो ॥४०॥
आवस्सएण एएण, सावओ जइ वि बहुरओ होइ।
दुक्खाणमंतकिरिअं, काही अचिरेण कालेण ॥४१॥
आलोअणा बहुविहा, न य संभरिआ पडिक्कमण-काले।
मूलगुण-उत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४२॥
तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स,
अब्भुट्ठिओमि आराहणाए, विरओमि विराहणाए।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥४३॥
जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअलोए अ।
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ॥४४॥
जावंत केवि साहू, भरहेरवय-महाविदेहे अ।
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥४५॥
चिरसंचियपाव-पणासणीइ, भवसयसहस्स-महणीए।
चउव्वीसजिणविणिग्गय-कहाइ, वोलंतु मे दिअहा ॥४६॥

काएण काइअस्स, पडिक्कमे वाइअस्स वायाए।
मणसा माणसिअस्स, सव्वस्स वयाइआरस्स ॥३४॥

वंदणवयसिक्खागारवेसु सन्नाकसायदंडेसु।
गुत्तीसु अ समिईसु अ, जो अइआरो अ तं निंदे ॥३५॥

सम्मद्दिट्ठी जीवो, जइ वि हु पावं समायरइ किंचि।
अप्पो सि होइ बंधो, जेण न निद्धंधसं कुणइ ॥३६॥

तं पि हु सपडिक्कमणं, सप्परिआवं सउत्तरगुणं च।
खिप्पं उवसामेई, वाहिव्व सुसिक्खिओ विज्जो ॥३७॥

जहा विसं कुट्ठ-गयं, मंत-मूल-विसारया।
विज्जा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निव्विसं ॥३८॥
एवं अट्ठविहं कम्मं, रागदोससमज्जिअं।
आलोअंतो अ निंदंतो, खिप्पं हणइ सुसावओ ॥३९॥
कयपावो वि मणुस्सो, आलोइय निंदिय गुरुसगासे।
होइ अइरेगलहुओ, ओहरिअ-भरुव्व भारवहो ॥४०॥
आवस्सएण एएण, सावओ जइ वि बहुरओ होइ।
दुक्खाणमंतकिरिअं, काही अचिरेण कालेण ॥४१॥
आलोअणा बहुविहा, न य संभरिआ पडिक्कमण-काले।
मूलगुण-उत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४२॥

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं, जावणिज्जाए निसीहिआए ? अणुजाणह मे मिउग्गहं, निसीहि, अहोकायं कायसंफासं खमणिज्जो भे किलामो अप्प-किलंताणं बहुसुमेण भे, दिवसो वइक्कंतो ? जत्ता भे ? जवणिज्जं च भे ? खामेमि खमासमणो ! देवसिअं वइक्कम्मं आवस्सिआए, पडिक्कमामि खमासमणाणं देवसिआए आसायणाए, तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए वयदुक्कडाए कायदुक्कडाए

(अथ खड़े होकर मस्तक में अंजली लगाकर बोलना)

आयरिय-उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुलगणे अ ।
जे मे केइ कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि ॥१॥
सव्वस्स समणसंघस्स, भगवओ अंजलिं करिअ सीसे ।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि ॥२॥
सव्वस्स जीवरासिस्स, भावओ धम्म-निहिअ-निअ-चित्तो ।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि ॥३॥

करेमि भंते ! सामाइअं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि,
जाव नियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं मणेणं

वायाए, काएणं, न करेमि, कारवेमि, तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं, जो मे देवसिओ अइयारो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो । अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो असावग-पाउग्गो, नाणे दंसणे चरित्ता-चरित्ते सुए सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं, पंचण्हमणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्वयाणं, चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स जं खंडियं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोही-करणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए,

दिसंतु ॥७॥

सव्वलोए अरिहंतचेइयाणं करेमि काउस्सग्गं, वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए, सद्धाए, मेहाए, धिईए, धारणाए, अणुप्पेहाए, वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं ॥

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेल-

संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंताणं भगवंताणं, णमुक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(एक लोगस्स या चार नवकार का काउस्सग्ग करना पीछे "पुक्खरवरदीवड्ढे" कहना ।)

पुक्खरवरदीवड्ढे, धायइसंडे अ जंबुदीवे अ । भरहेरवयविदेहे, धम्माइगरे नमंसामि ॥१॥ तम-तिमिर-पडल-विद्धंसणस्स सुरगणनरिंदमहियस्स । सीमाधरस्स वंदे, पप्फोडियमोहजालस्स ॥२॥ जाईजरामरणसोगपणासणस्स, कल्लाण-पुक्खल-विसाल-सुहावहस्स । को देव-दाणवनरिंदगणच्चियस्स, धम्मस्स सारमुवलब्भ करे पमायं ! ॥३॥ सिद्धे भो ! पयओ णमो जिणमए नंदी सया संजमे, देवं नागसुवन्नकिन्नरगणस्सब्भूअभावच्चिए ॥ लोगो जत्थ पइट्ठिओ जगमिणं तेलुक्कमच्चासुरं, धम्मो वड्ढउ सासओ विजयओ धम्मुत्तरं वड्ढउ ॥४॥ सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं । वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहिलाभ-

(एक लोगस्स का या चार नवकार का काउस्सग्ग करना। पीछे "सिद्धाणं बुद्धाणं" कहना)—

सिद्धाणं बुद्धाणं, पारगयाणं, परंपरगयाणं लोअग्ग-मुवगयाणं, नमो सया सव्वसिद्धाणं ॥१॥ जो देवाण वि देवो, जं देवा पंजली नमंसंति। तं देवदेवमहिअं, सिरसा वंदे महावीरं ॥२॥ इक्कोवि नमुक्कारो, जिणवर-वसहस्स वद्धमाणस्स। संसार-सागराओ, तारेइ नरं व नारिं वा ॥३॥ उज्जिंतसेलसिहरे, दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स। तं धम्मचक्कवट्टिं, अरिट्ठनेमिं नमंसामि ॥४॥

याणं । णमो उवज्झायाणं । णमो लोए सव्वसाहूणं । एसो पंच नमुक्कारो । सव्वपावप्पणासणो । मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं ।

(अब बैठकर छट्ठा आवश्यक की मुहपत्ति पडिलेहना, पीछे दो वांदना देना दूसरी बार आवस्सिआए न कहना)।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए ? अणुजाणह मे मिउग्गहं, निसीहि, अहोकायं कायसंफासं, खमणिज्जो मे किलामो, अप्पकिलंताणं बहुसुभेण मे दिवसो वइक्कंतो ? जत्ता मे ? जवणिज्जं च

मे ! खामेमि खमासमणो ! देवसिअं वइक्कम्मं, आवस्सि-आए पडिक्कमामि खमासमणाणं, देवसिआए आसायणाए, तित्तिसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए वयदुक्कडाए कायदुक्कडाए कोहाए माणाए मायाए लोभाए सव्वकालिआए सव्वमिच्छोवयाराए सव्वधम्माइक्कमणाए आसायणाए जो मे अइयारो कओ तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

(पच्चक्खाण न किया हो तो यहाँ पर कर लेना चाहिये)

"इच्छामो अणुसट्ठिं नमो खमासमणाणं। नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्य"

(कहकर बायाँ घुटना खड़ाकर पुरुष "नमोऽस्तु वर्द्धमानाय" कहे और स्त्रियाँ 'संसारदावा' की तीन थुइ कहे)

नमोऽस्तुवर्द्धमानाय, स्पर्द्धमानाय कर्मणा। तज्जयावाप्त-मोक्षाय, परोक्षाय, कुतीर्थिनाम् ॥१॥ येषां विकचारविन्दराज्या, ज्यायः क्रमकमलावलिं दधत्या। सदृशैरिति संगतं प्रशस्यं, कथितं सन्तु शिवाय ते जिनेन्द्राः ॥२॥ कषाय—तापार्दितजन्तु-निर्वृतिं, करोति यो जैन-मुखाम्बुदोद्गतः। स शुक्र-मासोद्भव-वृष्टि-सन्निभो, दधातु तुष्टिं मयि विस्तरो गिराम् ॥३॥

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! स्तवन भणुं? इच्छं 'नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः'

(यहाँ पर बड़ा स्तवन कहें और ग्यारह गाथा से कम कहें तो स्तवन के बाद वरकनक कहें)

श्री चिन्तामणि पार्श्वजिन स्तवन।

भविका श्री जिनबिंब जुहारो, आतम परम आधारो रे॥ भ०॥ जिन प्रतिमा जिन सारिखी जाणो, न करो

शंका कांई। आगम वाणीने अनुसारे, राखो प्रीति सवाई रे ॥ भ० ॥ १ ॥ जे जिनबिंब स्वरूप न जाणे, ते कहिये किम जाणे। भूला तेह अज्ञाने भरिया, नहीं तिहाँ तत्व पिछाणे रे ॥ भ० ॥ २ ॥ अम्बड श्रावक श्रेणिक राजा, रावण प्रमुख अनेक। विविध परे जिनभक्ति करंता, पाम्या धर्म विवेक रे ॥ भ० ॥ ३ ॥ जिन प्रतिमा बहु भगते जोतां, होय निश्चय उपगार। परमारथ गुण प्रगटे पूरण, जो जो आर्द्रकुमार रे ॥ भ० ॥ ४ ॥ जिन प्रतिमा आकारे जलचर, छे बहु जलधि मझार। ते देखी बहुला मत्स्यादिक, पाम्या विरति प्रकार रे ॥ भ० ॥ ५ ॥ पाँचवें अंगे जिन प्रतिमानो, प्रगटपणे अधिकार। सूरियाभ सुर जिनवर पूज्या, रायपसेणी मझार रे ॥ भ० ॥ ६ ॥ दशमे अंगे अहिंसा दाखी, जिन पूजा जिनराज। एहवा आगम अरथ मरोडी, करिये केम अकाज रे ॥ भ० ॥ ७ ॥ समकित धारी सतीय द्रौपदी, जिन पूज्या मन रंगे। जोवो एहनो अरथ विचारी, छट्ठे ज्ञाता अंगे रे ॥ भ० ॥ ८ ॥ विजय सुरे जिम जिनवर पूजा, कीधी चित्त थिर राखी। द्रव्य भाव बिहुं भेदे कीनी, जीवाभिगम छे साखी

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । श्रीउपाध्यायजी मिश्र ।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । श्री सर्वसाधुजीमिश्र ।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! देवसिअ पायच्छित्तविसोहणत्थं काउस्सग्गं करूं ? इच्छं, देवसिअ पायच्छित्तविसोहणत्थं करेमि काउस्सग्गं ॥

हरफुलिंगमंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ। तस्स गह-रोगमारी, दुठ्ठजरा जंति उवसामं ॥२॥ चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ। नरतिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्ख-दोहग्गं ॥३॥ तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणि-कप्पपायवब्भहिए। पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं ॥४॥ इअ संथुओ महायस !, भत्तिब्भरनिब्भरेण हिअएण। ता देव ! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पास ! जिणचंद ! ॥५॥

हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्!
श्री चौरासी गच्छ शृंगारहार जंगमयुगप्रधान भट्टारक
चारित्रचुड़ामणि दादा श्री जिनकुशलसूरिजी आराधना
निमित्तं करेमि काउस्सग्गं।

(अन्नत्थ ऊससिएणं बोलकर एक लोगस्स का
या चार नवकार का काउस्सग्ग करना फिर प्रगट लोगस्स
उज्जोअगरे कहना)

(अब बायाँ गोडा ऊँचा करके चैत्यवंदन करे)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी-

हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! चैत्यवंदन करूं ? 'इच्छं'।

चउकसायपडिमल्लुल्लूरणु, दुज्जयमयणबाणमुसुमूरणु। सरसपियंगुवन्नुगयगामिउ, जयउ पासु भुवणत्तयसामिउ ॥१॥ जसु तणुकंतिकडप्पसिणिद्धउ, सोहइ फणिमणिकिरणालिद्धउ। नं नवजलहरतडिल्लयलंछिउ, सो जिणु पासु पयच्छउ वंछिउ।

अर्हन्तो भगवंत इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता, आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्याः उपाध्यायकाः। श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः, पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मंगलम्।

(इसके बाद णमोत्थुणं बोलना)

जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअ लोए अ। सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ॥१॥

भगवन्! जावंत केवि साहू, भरहेरवय [illegible] अ। सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंड [illegible]

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्या[illegible]

उवसग्गहरं पासं, पासं [illegible]।

विस [illegible]

लोगविरुद्धच्चाओ, गुरु-जणपूआ परत्थकरणं च। सुह-गुरुजोगो तव्वयणसेवणा आभवमखंडा ॥२॥

लघु शान्ति स्तोत्र

(पौषध वाले न बोलें)

शान्तिं शान्तिनिशान्तं, शान्तं शान्ताशिवं नमस्कृत्य। स्तोतुः शान्तिनिमित्तं, मंत्रपदैः शान्तये स्तौमि ॥१॥ ओमिति निश्चितवचसे, नमो नमो भगवतेऽर्हते पूजाम। शान्ति जिनाय जयवते यशस्विने स्वामिने दमिनाम् ॥२॥ सकलातिशेषकमहा सम्पत्तिसमन्विताय

शस्याय। त्रैलोक्यपूजिताय च, नमो नमः शान्ति
देवाय ॥३॥ सर्वामर-सुसमूह-स्वामिकसंपूजिताय निजि-
ताय। भुवनजनपालनोद्यततमाय सततं नमस्तस्मै ॥४॥
सर्वदुरितौघनाशन कराय सर्वाऽशिवप्रशमनाय। दुष्ट-
ग्रहभूत पिशाच शाकिनीनां प्रमथनाय ।५। यस्येति नाम-
मंत्र प्रधानवाक्योपयोगकृततोषा। विजया कुरुते
जनहित मिति च नुता नमत तं शान्तिम ।६। भवतु
नमस्ते भगवति! विजये! सुजये! परापरैरजिते! अपरा
जिते जगत्यां, जयतीति जयावहे! भवति! ।७। सर्वस्यापि
च संघस्य, भद्रकल्याणमंगलप्रददे। साधूनां च सदा
शिव-सुतुष्टिपुष्टिप्रदे जीयाः ।८। भव्यानां कृतसिद्धे!
निर्वृतिनिर्वाणजननि! सत्त्वानाम। अभय-प्रदान-
निरते! नमोस्तु स्वस्ति प्रदे! तुभ्यम् ॥९॥ भक्तानां
जन्तूनां, शुभावहे! नित्यमुद्यते! देवि! सम्यग्दृष्टिनां
धृति-रतिमतिबुद्धिप्रदानाय ॥१०॥ जीनशासननिरतानां
शान्तिनतानां च जगति जनतानाम। श्रीसम्पत्कीर्तियशो-
वर्धिनि! जय देवि! विजयस्व ॥११॥ सलिलानलविष-
विषधर-दुष्टग्रहराजरोगरणभयतः। राक्षसरिपुगणमारी,
चौरेति श्वापदादिभ्यः ॥१२॥ अथ रक्ष रक्ष सुशिवं, कुरु

लोगविरुद्धच्चाओ, गुरु-जणपूआ परत्थकरणं च। सुह-गुरुजोगो तव्वयणसेवणा आभवमखंडा ॥२॥

लघु शान्ति स्तोत्र

(पौषध वाले न बोलें)

शान्तिं शान्तिनिशान्तं, शान्तं शान्ताशिवं नमस्कृत्य। स्तोतुः शान्तिनिमित्तं, मंत्रपदैः शान्तये स्तौमि ॥१॥ ओमिति निश्चितवचसे, नमो नमो भगवतेऽर्हते पूजाम्। शान्ति जिनाय जयवते यशस्विने स्वामिने दमिनाम् ॥२॥ सकलातिशेषकमहा सम्पत्तिसमन्विताय

शस्याय। त्रैलोक्यपूजिताय च, नमो नमः शान्ति
देवाय ॥३॥ सर्वामर-सुसमूह-स्वामिकसंपूजिताय निजि-
ताय। भुवनजनपालनोद्यततमाय सततं नमस्तस्मै ॥४॥
सर्वदुरितौघनाशन कराय सर्वाऽशिवप्रशमनाय। दुष्ट-
ग्रहभूत पिशाच शाकिनीनां प्रमथनाय ।५। यस्येति नाम-
मंत्र प्रधानवाक्योपयोगकृततोषा। विजया कुरुते
जनहित मिति च नुता नमत तं शान्तिम ।६। भवतु
नमस्ते भगवति! विजये! सुजये! परापरैरजिते! अपरा
जिते जगत्यां, जयतीति जयावहे! भवति! ।७। सर्वस्यापि
च संघस्य, भद्रकल्याणमंगलप्रददे! [illegible] साधु
शिव-सुतुष्टिपुष्टिप्रदे जीयाः ।८। [illegible] !
निर्वृतिनिर्वाणजननि! [illegible]
निरते! नमोस्तु स्वस्ति [illegible] ।९। भक्तानां
जन्तूनां, शुभावहे! [illegible]
भवि [illegible] जैनशासननिरतानां
शान्तिनतानां, [illegible]
दर्शिनि! [illegible] ॥ सलिलानलविष
[illegible]
चौरैरि [illegible] रक्ष रक्ष

य वा यथाय यम्। स शा - पद यायात्
सूरिः श्रीमानदेवश्च ॥१७॥ उपसर्गाः क्षयं यान्ति
छिद्यन्ते विघ्नवल्लयः। मनः प्रसन्नतामेति, पूज्यमाने
जिनेश्वरे ॥१८॥ सर्वमंगलमाङ्गल्यं, सर्वकल्याणकारणम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयति शासनम् ॥१९॥

(प्रतिक्रमण में दीपक बिजली अग्नि आदि का प्रकाश अपने शरीर पर आ गया हो, या वर्षा आदि के पानी की बूंद लग गई हो इत्यादि कोई दोष लगा हो तो इरियावहियं० तस्स उत्तरी० अन्नत्थ० कहकर एक लोगस्स का काउस्सग्ग करके, प्रकट लोगस्स कहकर पीछे सामायिक पारें)

सामायिक पारने की विधि

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! सामायिक पारवा मुहपत्ति पडिलेहुं ! 'इच्छं'।

(ऐसा कहके मुहपत्ति का पडिलेहन करे। पीछे)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! सामायिक पारु ! 'यथाशक्ति'।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! सामायिक पारेमि 'तहत्ति'

([illegible] अंग नमाकर 'तीन नवकार' गिने। पीछे फिर नमाकर दाहिना हाथ नीचे स्थापन करके 'भयवं दसन्नभद्दो' बोले)

भयवं दसन्नभद्दो, सुदंसणो थूलभद्द वयरो य। सफलीकयगिहचाया, साहू एवंविहा हुंति ॥१॥ साहूण वंदणेणं, नासइ पावं असंकिया भावा। फासुयदाणे निज्जर अभिग्गहो नाणमाईणं ॥२॥ छउमत्थो मूढमणो

लगा हे, से सब मन, वचन, काया

दुक्कडं ।

* इति दैवसिक प्रतिक्रमणत विधि समास । *

दासानुदासा इव सर्पदेवा, यदीय पादाब्जतळे लुठन्ति ।
मरुस्थळीकल्पतरुः स जीयाद्, युगप्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥१॥

इति संध्याकालीन सामायिक प्रतिक्रमण विधि समास ॥

अथ पच्चक्खाण—सूत्राणि

—*卐*—

१—नवकारसहिअं पच्चक्खाण।*

उग्गए सूरे, नमुक्कार-सहिअं मुट्ठि-सहिअं पच्चक्खाइ चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तिआगारेणं, विगईओ पच्चक्खाइ, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहत्थसंसिट्ठेणं, उक्खित्तविवेगेणं, पडुच्च-मक्खिएणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, । देसावगासियं भोगपरिभोगं पच्चक्खाइ, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ।

---

* यह पच्चक्खाण उसके लिये है जो प्रतिदिन बोलकर नियम स्मरण करता है। सर्व पच्चक्खाण में जहाँ जहाँ 'पच्चक्खाइ' और 'वोसिरइ' पाठ आवे है। वहाँ वहाँ यदि पच्चक्खाण स्वयं बोलता हो तो पच्चक्खामि और 'वोसिरामि' और दूसरों को पच्चक्खाण कराना हो तो 'पच्चक्खाइ' और 'वोसिरइ' बोले। एवं 'लेवालेवेणं' के पाँच आगार साधु के लिये है, गृहस्थ के लिये नहीं है, इसलिये ये पाँच आगार गृहस्थ न बोले।

४—पुरिमड्ढ—अवड्ढ—पच्चक्खाण।

सूरे उग्गए पुरिमड्ढं, अवड्ढं, वा पच्चक्खाइ चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अण्णत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, पच्छण्णकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ।

---

* यह पच्चक्खाण जो चोदह नियम स्मरण नहीं करता है उसके लिये है, अर्थात् जो श्रावक नियम नहीं स्मरण करता हो, वह विगय का और देसावगासिक का आगार नहीं पच्चक्खे।

५—एकासन—बिआसन-पच्चक्खाण ।

पोरिसिं साड्ढपोरिसिं वा पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे चउव्विहंपि आहारं—असणं, पाणं, खाइमं, साइमं अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं पच्छन्नकालेणं दिसा-मोहेणं, साहुवयणेणं सव्वसमाहि-वत्तियागारेणं, एकासणं बिआसणं वा पच्चक्खाइ, दुविहं तिविहंपि आहारं असणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, सागारि-आगारेणं आउंटणपसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं, पारिट्ठाव-णियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं* वोसिरइ ।

६—एगलठाण-पच्चक्खाण ।

पोरिसिं साड्ढपोरिसिं वा पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे चउव्विहंपि आहारं—असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसा-मोहेणं, साहुवयणेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, एकासणं,

* [illegible] पर [illegible] के लिए एकासन, बिआसन, [illegible] नीवि [illegible] विविहार [illegible] के पच्चक्खाण में [illegible] आगार और होवे [illegible] [illegible] वा, [illegible] वा, [illegible] वा, [illegible] वा, [illegible] वा

गिहत्थसंसिट्ठेणं, उक्खित्तविवेगेणं, पारिट्ठावणियागारेणं महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, एकासणं पच्चक्खाइ, तिविहंपि आहारं—असणं, खाइमं, साइमं, अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारिआगारेणं, आउंटणपसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं पारिट्ठावणियागारेणं महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ।

८—निव्विगइय पच्चक्खाण।

पोरिसिं साड्ढपोरिसिं वा पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे चउव्विहंपि आहारं—असणं, पाणं खाइमं साइमं अण्ण-

त्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं दिसामोहेणं साहुवयणेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, निव्विगइयं, पच्चक्खाइ, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं लेवालेवेणं, गिहत्थसंसिट्ठेणं, उक्खित्तविवेगेणं पडुच्चमक्खिएणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, एकासणं पच्चक्खाइ तिविहंपि आहारं-असणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं, आउंटणपसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ।

९—चउव्विहार-उपवास पच्चक्खाण।

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ, चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ।

१०—तिविहार उपवास पच्चक्खाण।

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ, तिविहंपि आहारं—असणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं,

देसावगासियं भोगपरिभोगं पच्चक्खाइ, अण्णत्थ-णाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहि-वत्तियागारेणं वोसिरइ।

१३—दत्ति-पच्चक्खाण।

पोरिसिं साड्ढपोरिसिं पुरिमड्ढं वा पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाइमं,

---

* २१-२२ ये दानों पच्चक्खाण प्रत्येक पच्चक्खाण के अन्तिम पद 'वोसिरइ' के पहले, जो चौदह नियम धारता हो उच्चरे। जो चौदह नियम नहीं धारता हो तो ये दोनों पच्चक्खाण न उच्चरे।

१८—गंठिसहिअ, मुट्ठिसहिअ और अंगुट्ठसहिअ आदि अभिग्रहका पच्चक्खाण * ।

गंठिसहिअं मुट्ठिसहिअं वा पच्चक्खाइ, अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ ।

* इस पच्चक्खाण में पाँचवाँ 'चोलपट्टागारेण' चोलपट्टाका आगार साधके लिये होता है ।

पच्चक्खाण की आगार संख्या—

दो चेव नमुक्कारे, आगारा छच्च पोरिसिएउ।
सत्तेव य पुरिमड्ढे, एगासणयम्मि अट्ठेव ॥१॥
सत्तेगट्ठाणेउ अ, अट्ठेव य अंबिलम्मि आगारा।
पंचेव अब्भत्तट्ठे, छप्पाणे चरिम चत्तारि ॥२॥
पंच चउरो अभिग्गहे, निव्वीए अट्ठ नव य आगारा।
अप्पावरणे पंच उ, हवंति सेसेसु चत्तारि ॥३॥

पच्चक्खाण करने का फल—

पच्चक्खाणमिणं सेविऊण भावेण जिणवरुद्दिट्ठं।
पत्ता अणंत जीवा सासय सुक्खं अणाबाहं ॥१॥

॥ इति पच्चक्खाण समाप्ति ॥

आठद्विगुण जगनायक लायक, सोवनवरण सुहायाजी ॥ बीज दिवस नव नव चउद्विक जिन, वंदु अहनिश पायाजी ॥२॥ दुविध धर्म जिनवर प्रकास्यो, अर्थ अधिक सुखकारिजी । सूत्रे करि गणधर गुरु भाख्यो, भविजनना उपगारिजी ॥ दोय शिक्षा दोय नय निक्षेपा, चउभंगी मन आणोजी, बीज आराधि सम्पदा साधी, परमारथ पहिचाणोजी ॥३॥ बीज दिवस उपवास करीजे, पडिकमणादिक सारोजी । ए तप सुरतरु सरीखो जाणो, निरुपम सुख दातारोजी ॥ कुमारयक्ष तिम

...ासनदेवी चंडासानिध भूरिजी । शुभफलदायक संघने ...ोज्यो; जिनशासनप्रभारिजी ॥४॥ इति दशमी थुइ ...पूर्ण ॥

॥ अथ पंचमीकी थुइ ॥

नेमि जिनेसर जग परमेसर, पंचमी गतिना ...राताजी ॥ श्रावणसुदिपंचमी दिन जनम्या, त्रिभुवनमें ...विख्याताजी ॥ समुद्रविजयनंदन जगवंदन, शिवादेवी-...माताजी ॥ सहस वरस सब आयुष पाली, पाम्या शिव ...सुख साताजी ॥१॥ कातिवदि सम्भव केवल पाम्यो ...समवसर थुणिये ध्यायाजी ॥ चैत्र चंद्र जन्म अजित संभव ...नंत धुरि सिद्ध पायाजी ॥ वैशाख वदि कुंथुजिन ...दीक्षा, पंचमी च्यवन [illegible]ाजी ॥ धर्म चवन जेठ पंचमी ...दीक्षा वरवर सिद्ध वर पायाजी ॥२॥ पंचमिव्रत[illegible] [illegible]

आदीश्वर दीक्षा अभिनंदन, नेमि पास सिव पायाजी ॥
भिन्नमासअष्टमी कल्याणक, तीनकालमां जाणोजी ।
आठ जातिना कलश लेईने, स्नात्र करे सुरराणोजी ॥२॥
आठै प्रवचनमाता पालो, दोष सर्वने टालोजी ज्ञानादिक
आठ आचार सेवी ने, आतम तत्त्व विहालो जी ॥ वीर-
जिनेसर अर्थ प्रकासै, सूत्र रचै गणधारीजी आठम तप
आराधो भविजन, आठवरस अधिकारी जी ॥३॥ पर्व
तिथीमें पौषध भाख्यो, सिद्धांत छे जसु साखीजी ।
पडिकमणो तपजपआदरीयै, देववंदन विधि राखीजी ॥

आठ मंगल आराधतां पावै, सुखसंपति गुणभूरिजी ॥ श्रुतदेवी सुपसाय लहीने, श्रीजिनकृपाचंद्रसूरिजी ॥४॥

॥ इति अष्टमी थुइ संपूर्ण ॥

॥ अथ इग्यारसकी थुइ ॥

एकादशी आखी आदिदेवे ॥ आराधिने भवि शिवसुख लेवे ॥ धरो ध्यान श्रीजिनराजकेरो । टले अनादिकालनो कर्महेरो ॥१॥ मल्लिजन्मदीक्षाकेवल-पहाणं । अरनाथ चारित्र नमि परमनाणं ॥ दस खेत्रना कल्याणक एम जाणो ॥ दोढसोने वलि त्रणसो पिछाणो ॥२॥ इग्यारेवरस तिममास कीजे । आराधि अंग इग्यारह सुजस लीजे ॥ मौनमनधारीशुभधर्मकारी । श्रुतज्ञाननी भक्ति करिये विचारी ॥३॥ अठपोहरि पोषहकरि यथाशक्ते । जपतप करी उज्जमणोसुभक्ते ॥ इक चितध्यावे सुयदेवीपसाये । श्री जिनकृपाचंद्रसूरि सदासुख थाये ॥४॥ इति इग्यारस थुइ संपूर्ण ॥

॥ द्वितीयाका बड स्तवन ॥

(दुहा)

वर्द्धमान जिन वंदिये, त्रिशलानंदन देव ।
सिंहलंछन सेवित सदा, सुरपतिसारे सेव ॥१॥

णा दोय टंकनाजी, देववंदन निरधार। विधिसेतीफल नीपजेजी, पामे भवनोपार भ० ॥४॥ बीजदिवसनो सहु जुवेजी, चन्द्रोदय सुप्रसिद्ध। वधति कला तिम जाणजो जी, धर्मथी वांछित सिद्ध भ० ॥५॥ दुविधधर्म जिनवर कह्योजी, देश ने सर्वविरत्त। धर्म शुकल दोय ध्यानमांजी, होय सदा निरत्त भ० ॥६॥ अर्थ प्रकासे जिनवरूजी, सूत्र रचे गणधार। बिहूं सेवे वाचंयमीजी, दस अंग विचार भ० ॥७॥

(ढाळ २) नमो रे नमो सेत्रुंजगिरि रे, ए देशी ॥

बीज दिवसमां जानिये रे, कल्याणक सुविसाल रे। श्रावण सुदि बीजे चव्या रे, सुमतिनाथ दयाल रे। नमो रे नमो जिनचंद्रनेरे ॥१॥ माघ मासनी ऊजली रे, बीज दिवसमां जाण रे। अभिनंदन जनम्या प्रभुरे, त्रिहुं जगना महिराण रे नमो रे० ॥२॥ एहीज तिथि वासुपूज्यजी रे, पाम्यो केवलनाण रे। फागुन सुदि बीजे जानिये रे, अरनाथ चवन सुजाण रे। नमो रे० ॥३॥ समेतसिखर शिव वर्या रे, सीतलजिनवर नाण रे। चैत्र वदि बीज रे, सुख मन आण रे नमो० ॥४॥ इम तिथिरे, काल अणंते होय रे। अनंत

पाँच ज्ञान प्रगटायवाजी। पंचमी सेवो उदार रे, प्राणि, जिनवाणी मन आण, अनुपम सुखनी खाणरे ॥ प्रा० जिन० ॥१॥ नाण बड़ो संसारमांजी, ज्ञानथी सुगति थाय। ज्ञान दीपक सम जाणियेजी, सर्व लोक प्रगटाय रे ॥ प्रा० जिन० ॥२॥ दिव्यज्ञानलोचन कसोजी, लोकालोक देखाय ॥ ज्ञान बिना पशु सारिखोजी, जाणे नहीं नर कांय रे ॥ प्रा० ॥ जिन० ॥३॥ ज्ञान आराधक सर्वथाजी, किरिया देशविचार।

रे सुगुणनर, पंचमीतप विधियुत करी रे लाल
पामो अविचल नाण रे ॥ सु० ज्ञा० ॥ १६ ।
दोय मेदे नाण जाणीये रे। निश्चय ने व्यवहार रे ॥सु०।
त्रण अनुयोग व्यवहारमां रे ला० द्रव्यनिश्चय सुखकार रे
॥ सु० ॥ ज्ञान० ॥२०॥ पाँच ज्ञानना मेद छै रे, इका-
वन सुविशेष रे ॥ सु० ॥ भिन्नभिन्न ते दाख्या रे
॥ ला० ॥ तेह कहुँ लवलेश रे ॥ सु० ॥ ज्ञा० ॥ २१ ॥
मतिज्ञानना जाणिये रे, अठावीस प्रकार रे ॥ सु० ॥

श्रुतना चवदे ने वीश छे रे, अक्षरादिक सुविचार रे ।सु। ज्ञा० ।।२२।। अवधि छ असंख भेद छे रे, मनपर्यव दुग-जाण रे ॥ सु० ॥ लोकालोक प्रकाशको रे ॥ ला० ॥ केवल मनमें आण रे ॥ सु० ॥ ज्ञा० ॥२३॥ तीन ज्ञान प्रत्यक्ष छे रे, देवसर्व सुजगीश रे ॥ सु० ॥ अवधि मनपर्यव वलि रे ॥ला०॥ देश प्रत्यक्ष कह्या ईश रे ॥ सु० ॥ ज्ञा०॥ २४॥ केवल सर्व प्रत्यक्षनेरे, ध्यावो परमपवित्र रे ॥ सु०॥ दोय परोक्ष पिछाणिये रे ॥ला० ॥ मतिश्रुत भेद विचित्र रे॥ सु० ॥ ज्ञा० ॥२५॥ चार ज्ञान ठप्पा कह्या रे, श्रुत अनुयोग विचार रे ॥ सु० ॥ उद्देशादिक जाणिये रे ॥ ला० ॥ अनुयोगद्वार मझार रे ॥ सु० ज्ञा० ॥ २६ ॥ उपगारी श्रुतनाणथी रे, जाणे आज त्रिकाल रे ॥ सु० ॥ परबोधकश्रुत सेविये रे लाल, सद्गुरुचरण निहाल रे ॥ सु० ॥ ज्ञा० ॥ २७ ॥ वायण प्रच्छना परावत्तना रे, अनुपेहा दिलधार रे ॥सु०॥ धर्मकथा कही कीजीये रे ॥ला०॥ सझाय पाँच प्रकार रे ॥ सु० ॥ ज्ञा० ॥ २८ ॥ अंग इग्यार बार उपांग छे रे, दश पयण्णा नंदीश रे ॥ सु० ॥ छ छेद चउ मूल दिल धरो रे ०॥ अनुयोगद्वार पैतालीश रे ॥ सु० ॥

सागर गयां चरणधर, ज्ञानादिक चित्तलाय ॥ ज्ञा० ॥३४॥
घाति करमनो क्षयकरी, केवलज्ञान प्रकाश, भव्य कमल
प्रतिबोधता, विचरे भगवंत खास ॥ ज्ञा० ॥ ३५ ॥
ज्ञान चरण दोय भेद छै, मुक्ति कारण जाण । तप संयम
बिहु दाखिया, भाव ए मनमाँ आण ॥ ज्ञा० ॥ ३६ ॥
पाँचमि आराधना करी, ज्ञान भगति करो सार । तप
पूरण थयाँ कीजिये, उज्जमणो सुविचार ॥ ज्ञा० ॥३७॥
पाँच पाँच ज्ञानादिना, उपगरण करो सार । धन खरचो
बहु भावथी, लहो पुन्य संभार ॥ ज्ञा० ॥ ३८ ॥ देवो
दान सुपात्रने, साहमीवछल सार । भगति करो साहमी

तणी, रात्री जागो उदार ॥ ज्ञा० ३९ ॥ वरदत्त ने गुण-मंजरा, ज्ञान आराधिने सुख। पामी अविचल पद लह्या, मेटीने भवदुःख ॥ ज्ञा० ॥४०॥ कलश ॥ संवत उगणीसे पिचत्तर पोष वदि एकम भले। सुरत बंदर भविक सुखकर सीतलजिन सुपसाउले ॥ श्रीवीर जिनवर पंचमीतप विधि प्रकाश्यो शुभमणे। सुविहित परम्पर गच्छखरतर जिन-कृपाचंद्रसूरिभणे ॥४१॥ इति पंचमी का स्तवन सं० ॥

॥ अष्टमी का वृद्ध स्तवन ॥

॥ दुहा ॥ वर्द्धमान जिनवर नमुं । समरि सारदमाय अष्टमी तप विधि वरणवुं । आगमयुत सम्प्रदाय ॥ १ ॥ आठमतिथि आराधवा । भाखें त्रिजगभाण । विधिसेवि तपकीजिये । पामेउत्तम नाण ।२। ढाल पहली । संभवजिनवर वीनती । ए देशी । आठम तप आराधिये । अष्टमी गति दातारो रे । प्रवचन माता आठने । पालो निसदिन सारो रे । आठम० ।१। अष्टसिद्धिकारक सदा । आठमतप उजमंता रे । सामायकपोसह करी, पर्व-तिथि सेवंतां रे । आ० ।२। पर्वतिथिमां बंधाय छे । प्रायें परभव आयु रे। तिण कारण तिथितप करो ।

पोषध करिये । शुद्ध आगमने अनुसरिये । वलि आठ कर्मने हरिये । सलूणा भाव भले आराधो । ए तो आराधि सिवसुख साधो सलूणा आठम तिथि आराधो ॥१॥ आठमदोय चउदसकहीये । अमावस पूनिम लहीये । एह छ तिथी चारित्र वहिये ॥ स० ॥ भा० ॥ २ ॥ वली कल्याणक तिथी जाणो । पजुषण मनमां आणो । इत्यादि पर्व पिछाणो ॥ स० ॥ भा० ॥ ३ ॥ बीजे अंगे पांचमे अंगे । उपासकदशा सुखसंगे । आवश्यक टीका उमंगे ॥ स० ॥ भा० ॥ ४ ॥ इत्यादिक आगम साखे ॥

र्व तिथिये पोषध भाखे । विधियुत करतां फल चाखे । स० ॥ मा० ॥ ५ ॥ जे नित्य पोषधने ताणे । आगम विधि ते नवि जाणे । हरिभद्रवचन परमाणे ॥ स० ॥ मा० ॥ ६ ॥ ढाल तीसरी ॥ जइने कहेजो मारा वालाजी रे । ए देशी ॥ आठम परव तिथि कही । मारा वालाजी रे । आराधो गुणगेह । जगगुरु वंदिये । मारा वालाजी रे । इह तिथि कल्याणक घणा । मारा वालाजी रे । त्रिहुं काल ना गिणो तेह । जगगुरु वं० मारा वालाजी रे ॥ १ ॥ आचारांगमां भाखिया ॥ मा० वा० ॥ भावना अध्ययन सार ॥ ज० ॥ मा० ॥ ठाणांग ठाण पाँचमे ॥ मा० ॥ वा० ॥ कल्पसूत्र मनुहार ॥ ज० वं० ॥ २ ॥ आगम प्रकरण चरित्र घणा ॥ मा० ॥ वा० ॥ एमां प्रकटपणे तुं जोय ॥ ज० ॥ वं० ॥ षट कल्याणक वीरना ॥ मा० ॥ वा० ॥ आगम मांहे होय ॥ ज० वं० ॥ ३ ॥ पजसण कल्पे कह्यो ॥ मा० वा० ॥ पचास दिवस प्रमाण । ज० वं० ॥ तेह नवि माने मानवी । वा० । जिन आज्ञा सुख खाण । ज० वं० ॥ ४ ॥ इम अनेक कल्पना करी । मा० ॥ ज० ॥

वीरजिनवर भविकसुखकरमातत्रिशला नन्दनो । में थुण्यो आगम भक्तिसंयुक्त दुरितकर्म निकंदनो । शुभ वरस उगणीसे चमोत्तर भाद्रव सुदि आठम समें, जिन कृपा-चन्द्रसूरि स्तवन कीधो अनुभव ज्ञान प्रकाश में ।६

इति अष्टमी का स्तवन संपूर्ण ।

इग्यारसका वृद्ध स्तवन

दुहा

स्वस्ति श्रीमंगलकरण, हरणताप जिणचंद । वीरजिनंद दनंदसम, प्रणमुं धरी आनंद । १ । गौतम आदि

गणधरा, श्रुतकेवलि सुविहाण । त्रिकरणयोगे वंदता, पामे कोड कल्याण ॥ २ ॥ एकादशी तिथो वर्णवु, शास्त्रने अनुसार । विधिपूर्वक आराधतां, पामे भवनो पार ॥३

हार उपवास्य ॥ सु० ॥ तेह ... तारे ॥ वा० ॥
सुगुरु चरण सेवी करी ॥ सु० ॥ काउसग्ग दिलधार
॥ वा० ॥ १३ ॥ मौन करी मल्लिनाथजी ॥ सु० ॥
एक दिवस सुखकार ॥ वा० ॥ मौन प्रथा इण परि थई
॥ सु० ॥ लह्यो केवल श्रीकार ॥ वा० ॥ १४ ॥

ढाल (२)—माता त्रिशला झुलावे पुत्र पालणे । ए देशी ।

सुखकर देवनिरंजन नेमजिनेंद्र इम उपदिसे ॥ ए
आंकडी ॥ भविजन भाव धरीने सांभले श्री जिनवाण,
अमीरस वयणे श्रवण अंजलीभर पीवतां, एतो जाये भव

भव निर्मित कर्म निवाण ॥ सु० ॥ १५ ॥ भवियण अंग इग्यार आराधवा तप विधि ए कही, जेहथी पामे अनुपम, महिमा अतुल अपार। वरस इग्यारने मास एकादश तप करो, संपूरण तप हुआं होवे मंगलकार ॥ सु० ॥ १६ ॥ भ० ॥ अंग अग्यारे लिखावे सुवरण अक्षरे, पुस्तक पूठा ठवणी नवकरवाली सार। कवली झिलमिल पाटीने वली पाटली, वीटणा मखमल रेसम बरतणा मनुहार ॥ सु० ॥ १७ ॥ भ० ॥ डोरा लेखन झाबी वासकुंपा पाटलि कोथली, बटवो मिजासण ने चन्दरवा अधिकार। पठोपा चौपड रुमाल नाना भाँतिना, पाटा पाटलाने थिगलो रचे सुखकार ॥ सु० ॥ १८॥ भ० ॥ केसर सूखड खसकूची ने वाटकी, प्याला ने कलसा अंगलूहणा दिलधार। चामर छत्र त्रयने आभूषण रत्ने जड्या, रचिये वासखेपादि पूजा विविध प्रकार ॥ सु० ॥ १९ ॥ भ० ॥ देवपूजा तिम गुरुपूजा विधि आदरो, करिये साहमीवच्छल धरिये भाव विसाल। रात्रिजागो करि जिन गुण गावो प्रीतसुं, अधिको धन खरचीने लहिये रंग रसाल ॥ सु० ॥ २० ॥ भ० ॥ इग्यारसनो तप सेवो भावसुं, सुव्रत सेठ कीधो पोषधथी चित्त लाय। चोर

सीधा साधु अनंत, तीरथ ते नमुं रे ॥ १ ॥ तीन
कल्याणक तिहाँ थया, मुगते गया रे ॥ नेमीसर गिरनार
॥ ती० ॥ २ ॥ अष्टापद एक देहरो, गिरिसेहरो रे ।
भरतें भराव्या बिंब ॥ ती० ॥ ३ ॥ आबू चौमुख अति
भलो, त्रिभुवन तिलो रे । विमल वसइ वस्तुपाल ॥ती०॥
४ ॥ समेतशिखर सोहामणो, रलियामणो, रे । सिद्धा
तीर्थंकर वीश ॥ ती० ॥ ५ ॥ नयरीचंपा निरखीये, हिये
हरखीये रे । सिद्धा श्री वासुपूज्य ॥ ती० ॥ ६ ॥ पूर्व-
दिशे पावापुरी, ऋद्धे भरी रे । मुक्ति गया महावीर

ती० ।७। जेसलमेर जुहारीये, दुःख वारीयें रे । अरिहंत बिंब अनेक ती० ।८। बीकानेरज वंदीयें, चिर-नंदिये रे । अरिहंत देहरा आठ ती० ।९। सैरिसरो, संखेसरो पंचासरो रे । फलोधि थंभण पास ती० ।१०। अंतरीक अजाहरो, अमीझरो रे । जीरावलो जगनाथ ती० ।११। त्रैलोक्यदीपक देहरो, जात्रा करो रे । राणपुरे रिसहेस ती० ।। १२। श्रीनाडुलाई जादवो, गोडी स्तवो रे । श्रीवरकाणो पास ती० ।१३। नंदीश्वरनां देहरा, बावन भलां रे । रुचक कुंडल चारचार ती० ।१४। शाश्वती अशाश्वती प्रतिमा छती रे । स्वर्ग मृत्यु पाताल ती० ।१५। तीरथ यात्रा फल तिहां, होजो मुझ इहां रे । समयसुंदर कहे ।।१६। इति ।

श्री सीमंधर जिन स्तवन

धन धन खेत्र महाविदेहजी, धन्य पुंडरिकनी गाम, धन्य तिहांनां मानवीजी, नित्य उठी करे रे प्रणाम । सीमंधर स्वामी कइयें रे, हुं महाविदेह मा जयवंता जिनवर [illegible] रे, हुं तुमने वांदीश

अम वाला स मधर स्वा , म तान आराम सी० ॥ ६ ॥ नहि मांगु प्रभु राजरिद्धिजी, नहि माँगु गरथ भंडार । हुं मांगु प्रभु एटलुंजी, तुम पासे अवतार सी० ॥ ७ ॥ दैव न दीधी पाँखडीजी, केम करी आवुं हजूर । मुजरो मारो मानजोजी, प्रह ऊगमते सूर । सी० ८ ॥ समयसुंदरनी वीनतीजी, मानजो वारंवार । बे कर जोडो वीनवु जी, वीनतडी अवधार सी० ॥ ९ ॥ इति ।

इति राइ देवसी प्रतिक्रमण विधि समाप्त

द्वितीय खण्ड की सूची

—:o:—

ॐ

[illegible] मौर सांवत्सरिक
विधि सहित।

में पौषधशाला आदि किसी एकान्त
सामायिक लेने के लिये उस स्थान का
करें। पीछे मुनिराज न हों तो उच्च स्थान
या नवकारवाली आदि रखकर 'तीन नवकार'
[illegible] थापनाचार्यजी स्थापन करें। बाद में तीन खमासमण देकर
[illegible] भगवन्! (सुखपृच्छा) पूछकर अब्भुट्ठियोमि०
[illegible] श्री गुरु महाराज को या थापनाचार्यजी को वंदना करें।
[illegible] के सामने उकडु आसन (दोनों पैर पर) बैठ
[illegible] के बायीं ओर आसन रख कर, चरवला
लेकर (सामायिक लेवें) खमासमण दें—

वंदिउं जावणिज्जाए
वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह
लेवा मुहपत्ति पडिलेहुं? 'इच्छं'।
(पचीस बोल कह के)
[illegible] वंदिउं जावणिज्जाए

करेमि भंते ! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जावनियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए ? मत्थएण वंदामि।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! इरियावहियं पडिक्कमामि ? इच्छं। इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहि-

याए विराहणाए, गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे हरियक्कमणे, ओसा उत्तिंग पणग दग-मट्टी-मक्कडा-संताणा संकमणे, जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए, ठामि काउस्सग्गं।

अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्त-मुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो अविराहिओ, हुज्ज मे काउस्सग्गो। जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि॥

(एक लोगस्स या चार नवकार का पीछे नीचे लिखे अनुसार प्रगट लोगस्स कहना)—

बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु ॥६॥ चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा। सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥७॥

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्। पच्चक्खाण लेवा मुहपत्ति पडिलेहुं ? 'इच्छं'।

(अब नीचे बैठ कर मुहपत्ति पडिलेहें और दो वार वांदना दें। परन्तु चउवीहाहार उपवास हो तो मुहपत्ति नहीं पडिलेहें र वांदणा भी नहीं दें। तोवीहाहार उपवास हो तो मुहपत्ति हें परन्तु वांदणा नहीं दें।)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए ! अणुजाणह मे मिउग्गहं, निसीहि, अहो-कायं काय—संफासं, खमणिज्जो मे किलामो अप्पकिलंताणं बहुसुभेण मे दिवसो वइक्कंतो ? जत्ता मे ? जवणिज्जं च मे ? खामेमि खमासमणो ! देवसिअं वइक्कमं आवस्सिआए पडिक्कमामि खमासमणाणं, देवसिआए आसायणाए तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाएमणदुक्कडाए वयदुक्कडाए कायदुक्कडाएकोहाए माणाए मायाए लोभाए सव्वकालिआए सव्वमिच्छो-वयाराए सव्वधम्माइक्कमणाए आसायणाए जो मे अइ-यारो कओ तस्स खमासमणो ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

(पुनः उपरोक्त सूत्र पढ़ें)

(अब यथाशक्ति पच्चक्खाण करना । तिविहाहार उपवास, आयंबिल, एकासणा आदि तप किया हो तो पाणाहार का पच्चक्खाण करना ।)

इच्छाकार भगवन् ! पसाय करी पच्चक्खाण करावोजी ।

दवसच रम पच्चक्खाइ, दु वह प आहारअसण, खाइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तिआगारेणं वोसिरइ।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! सज्झाय संदिस्सावुं? 'इच्छं'।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! सज्झाय करूं? 'इच्छं'।

(इस प्रकार कह आठ नवकार गिनना)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! बेसणो संदिस्सावुं? 'इच्छं'।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! बेसणो ठाउं? 'इच्छं'।

(अब आसन बिछा कर बैठ जाय और वस्त्र की आवश्यकता हो तो नीचे का पाठ बोल कर वस्त्र ग्रहण करें)—

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! पांगुरण संदिस्सावुं? 'इच्छं'।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! पांगुरणा पडिग्गहुं? 'इच्छं'।

(अब नीचे लिखे विधि अनुसार प्रतिक्रमण करें। प्रथम तीन खमासमण देकर चैत्यवंदन करें अर्थात् जयतिहुअण० बोले)।

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! चैत्यवंदन करुं? 'इच्छं'।

जरजज्जर परिजुण्णकण्ण नट्टुट्ठ सुकुट्ठिण,
चक्खुक्खीण खएणखुण्ण नर सल्लिय सूलिण।
तुह जिण ! सरणरसायणेण लहु हुंति पुणण्णव,
जयधन्नंतरि ! पास ! मह वि तुह रोगहरो भव ॥३॥
विज्जा जोइस मंत तंत सिद्धीउ अपयत्तिण,
भुवणऽब्भुअ अट्ठविह सिद्धि सिज्झहि तुह नामिण।
तुह नामिण अपवित्तओ वि जण होइ पवित्तउ,
तिहुअण कल्लाण कोस तुह पास ! निरुत्तउ ॥४॥

खुद्द पउत्तइ मंत तंत जंताइ विसुत्तइ,
चर थिर गरल गहुग्ग खग्ग रिउवग्ग विगंजइ।
दुत्थिअ सत्थ अणत्थ घत्थ नित्थारइ दय करि,
दुरियइ हरउ स पासदेउ दुरियक्करि केसरि ॥५॥
तुह आणा थंभेइ भीम दप्पुद्धुर सुरवर,
रक्खस जक्ख फणिंदविंद चोरानल जलहर।
जल थलचारि रउद्द खुद्द पसु जोइणि जोइय,
इअ तिहुअणअविलंघिआण जय पास ! सुसामिय ॥६॥
पत्थिअ अत्थ अणत्थ तत्थ भत्तिब्भरनिब्भर,
रोमंच संचिय चारुकाय किन्नर नर सुरवर।
जसु सेवहि कमकमलजुयल पक्खालियकलिमलु,
सो भुवणत्तयसामि पास मह मद्दउ रिउबलु ॥७॥
जय जोइयमणकमलभसल ! भयपंजर कुंजर !
तिहुअणजणआणंदचंद ! भुवणत्तयदिणयर !
जय मइमेइणिवारिवाह ! जयजंतुपियामह !
थंभणयट्ठिय ! पासनाह ! नाहत्तण कुण मह ॥८॥
बहुविह वन्नु अवन्नु सुन्नु वन्निउ छप्पन्निहिं,
नर नियनियसत्थिहिं ॥ [illegible]

जरजज्जर परिजुण्णकण्ण नट्ठुट्ठ सुक्कुट्ठिण,
चक्खुक्खीण खएणखुण्ण नर सल्लिय सूलिण ।
तुह जिण ! सरणरसायणेण लहु हुंति पुणण्णव,
जयधन्नंतरि ! पास ! मह वि तुह रोगहरो भव ॥३॥
विज्जा जोइस मंत तंत सिद्धीउ अपयत्तिण,
भुवणऽब्भुअ अट्ठविह सिद्धि सिज्झहि तुह नामिण ।
तुह नामिण अपवित्तओ वि जण होइ पवित्तउ,
तं तिहुअण कल्लाण कोस तुह पास ! निरुत्तउ ॥४॥

इय अ ।

तुह कल्लाण-महेसु घंटटंकारवपेल्लिय,
वल्लिरमल्ल महल्लभत्ति सुरवर गंजुल्लिय।
हल्लुप्फलिय पवत्तयंति भवणे वि महूसव,
इय तिहुअणआणंदचंद जय पास ! सुहुब्भव ! ॥१२॥
निम्मलकेवल किरणनियरविहुरियतमपहयर !
दंसियसयलपयत्थसत्थ ! वित्थरियपहाभर !।
कलिकलुसियजणघूयलोयलोयणह अगोयर !,
तिमिरइ निरु हर पासनाह ! भुवणत्तय दिणयर !॥१३॥

तुह समरणजलवरिससित्त माणवमइमेइणि,
अवरावरसुहुमत्थबोहकंदलदलरेहिणी।
जायइ फलभरभरिय हरियदुहदाह अणोवम,
इय मइमेइणि वारिवाह दिस पास मइं मम ॥१४॥
कय अविकलकल्लाणवल्लि उल्लुरिय दुहवणु,
दाविय सग्ग-पवग्गमग्ग दुग्गइगमवारणु।
जयजंतुह जणएण तुल्ल जं जणिय हियावहु,
रम्मु धम्मु सो जयउ पासु जयजंतु पियामहु ॥१५
भुवणारण्णनिवास-दरिय-परदरिसणदेवय,
जोइणिपूयणखित्तवालखुद्दासुरपसुवय।
तुह उत्तट्ठ सुनट्ठ सुट्ठु अविसंठुलु चिट्ठहि,
इय तिहुअणवणसीह! पास! पावाइं पणासहि ॥१६॥
फणिफणफारफुरंतरयणकररंजियनहयल!
फलिणीकंदलदलतमालनीलुप्पलसामल!

जय पच्चक्ख! जिणेस! पास! थंभणयपुरट्ठिय! ॥१७॥
मनु तरलु पमाणु नेय वायावि विसंठुलु,
अविणयसहाउ आलसविहलंघलु।

लीणउ तुह कमकमलसरणु जिण! पालहि चंगह ॥२०॥

पइ कि वि किय निरोय लोय कि वि पाविय सुहसय,
कि वि मइमंत महंत के वि कि वि साहियसिवपय।
कि वि गंजियरिउवग्ग के वि जसधवलियभूयल,
मइ अवहीरहि केण पास! सरणागयवच्छल! ॥२१॥

पच्चुवयारनिरीह! नाह! निप्पन्नपओयण!,
तुह जिणपास! परोवयारकरणिक्कपरायण!,
त्तुमित्तसमचित्तवित्ति! नयनिंदयसममण!,
अवहीरि अजुग्गओ वि मइ पास निरंजण! ॥२२॥

उ बहुविहदुहतत्तगत्तु तुहु दुहनासण परु,
उ सुयणह करुणिक्कठाणु तुहु निरु करुणायरु।
उ जिण पास! असामिसालु तुहु तिहुअणसामिअ,
अवहीरहि मइ झखंत इय पास! न सोहिय ॥२३॥
ग्गाजुग्गविभाग नाह! न हु जोयहि तुह सम,
वणुवयारसहावभाव करुणारससत्तम।
समविसमइ किं घणु नियइ भुवि दाह समंतउ?,
य दुहियन्धव! पासनाह! मइ पाल थुणंतउ ॥२४॥
य दीणह दीणयं मुयवि अन्नु वि किवि जुग्गय,
जोइ वि उवयारु करहि उवयारसमुज्जय।
दीणह दीणु निहीण जेण तइ नाहिण चत्तउ,
जुग्गउ अहमेव पास पालहि मइ चंगउ ॥२५॥
अह अन्नु वि जुग्गय विसेसु कि वि मन्नहि दीणह,
पासि वि उवयारु करइ तुहु नाह समग्गह।
सुहिय किल कल्लाणु जेण जिण! तुम्ह पसीयह,
कि अन्निण तं चेव देव! मा मइ अवहीरह ॥२६॥
न हु होइ विहलु जिण जाणउ किं पुण,
दुक्कहु उम्मुयमण।

एह महारिय जत्त देव ! इहु न्हवणमहूसउ,
जं अणलियगुणगहण तुम्ह मुणिजण अणिसिद्धउ ।
एम पसीह सुपासनाह थंभणयपुरट्ठिय !,
इय मुणिवरु सिरिअभयदेउ विण्णवइ अणिंदिय ॥३०॥

(दोनों हाथ ऊँचे करके)

जय महायस जय महायस जय महाभाग जय चिंतिय सुहफलय, जय समत्थ-परमत्थ जाणय । जय जय गुरुगरिम गुरु, जय दुहत्त-सत्ताण ताणय ॥ थंभणयट्ठिय

ातजिण, भवियह भोम भवत्थु। भव अवर्णितानंतगुण, गुज्झ अतिसंभ नमोत्थु ॥१॥

नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं ॥१॥ आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं ॥२॥ पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं, पुरिसवर-पुंडरीआणं, पुरिसवर-गंधहत्थीणं ॥३॥ लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहिआणं लोगपइवाणं लोगपज्जोअगराणं ॥४॥ अभयदयाणं चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, बोहिदयाणं ॥५॥ धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं, धम्मवर-चाउरंत-चक्कवट्टीणं अप्पडिहयवरनाणदंसण धराणं, विअट्टछउमाणं ॥७॥ जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं ॥८॥ सव्वन्नूणं

सिवमयलमरुअमणंतमक्खय-मव्वाबाहम-
सिद्धिगई नामधेयं ठाणं संपत्ताणं, नमो
जिअभयाणं ॥९॥ जे अ अईया सिद्धा, जे अ
भविस्सति णागए काले। संपई अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि ॥१०॥

(मुत्ति खड़े होकर बोलना)

हिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो। जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

(एक नवकार का काउस्सग्ग करके "नमो ... चार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः" कहना।)

द्रैं द्रैं कि धपमप, धुधुमि धो ध धोरवं। दोदों कि दों दों द्रागि कि द्रण द्रण द्रेणवं॥ झझिझूं कि झ

निर्वाक्‌, निजजन रंजनं। सुरशैल शिखरे, भवतु सुखदं पार्श्व जिनपतिमज्जनं ॥१॥

(और भी कोई थुइ बोल सकते हैं।)

(लोगस्स बोले)

सव्वलोए अरिहंतचेइयाणं करेमि काउस्सग्गं वंदण-वत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माण-वत्तिआए, बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए, सद्धाए, मेहाए, धिईए, धारणाए, अणुप्पेहाए, वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं ॥

(अन्नत्थऊससिएणं० बोलकर एक नवकारका काउस्सग्ग करने के बाद दूसरी थुई कहना।)

कटरेंगिनि, थोंगिनि, किटति गिड्दां, धुधुकि धुटनट पाटवं। गुणगुणण गुणगण, रणकि णें, णें, गुणण-गुणण गोरवं॥ झंझि झं झिं झुं झें झें झणण रणरण, निजकि निजजन सज्जना। कलयंति कमला, कलित-कलमल, मुकुलमीश—महे जिनाः ॥२॥

पुक्खरवरदीवड्ढे, धायइसंडे अ जंबुदीवे अ। भरहे-रवयविदेहे, धम्माइगरे नमंसामि ॥१॥ तमतिमिरपडल-विद्धंसणस्स सुरगणनरिंदमहिअस्स। सीमाधरस्स

धारणाए, अणुप्पेहाए, वड्ढमाणीए, ठामि काउस्सग्गं।

(अन्नत्थ ऊससिएणं बोलकर एक नवकार का काउस्सग्ग करके तीसरी थुइ कहना।)

ठकि ठूँ कि ठूँ ठूँ, ठहिक ठहिक ठहिं पट्टास्ताड्यते। तललोकि लोलों त्रैंषि त्रैंषिनि, डेंषि डेंषिनि वाद्यते ॐ ॐ कि ॐ ॐ थोगि थोंगिनि, धोंगि धोंगिनि कलरवे। जिनमतमनंत महिम तनुतां, नमति रनर मुच्छवे ॥३॥

सिद्धाणं बुद्धाणं, पारगयाणं परंपरगयाणं।

लोअग्गमुवगयाणं, नमो सया सव्वसिद्धाणं ॥१॥ जो देवाण वि देवो, जं देवा पंजली नमंसंति। तं देवदेव-महिअं, सिरसा वंदे महावीरं ॥२॥ इक्को वि नमुक्कारो जिणवर वसहस्स वद्धमाणस्स। संसारसागराओ, तारेइ नरं व नारिं वा ॥३॥ उज्जितसेलसिहरे, दिक्खानाणं निसीहिआ जस्स। तं धम्मचक्कवट्टिं, अरिट्ठनेमिं नमंसामि ॥४॥ चत्तारि अट्ठ दस दोय, वंदिया जिणवरा चउव्वीसं। परमट्ठ निट्ठिअट्ठा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥५॥

वेयावच्चगराणं संतिगराणं सम्मदिट्ठिसमाहिगराणं करेमि काउस्सग्गं।

(अन्नत्थऊससिएणं० बोल कर एक नवकार का [illegible] कर 'नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यः' कह कर थोयी कहना)—

धुं धां कि धुं धां, धुधुकदि धुं धां, धुधुकदि दों दों अंबरे।
[illegible] चचपट रणकि [illegible], [illegible] झंकरे।
दद सुरसमपधुनि, निपपमगरस, ससस ससगुर सेविता।
[illegible] [illegible], दिशतु [illegible] शासनदेवता ॥४॥

[illegible] ([illegible] बोलना)

हिआए मत्थएण वंदामि । श्रीसर्वसाधुजी मिश्र ।

(ऐसे कह कर दाहिने हाथ को चरवले या आसन पर रख कर बायां हाथ मुंहपत्ति सहित मुख के आगे रख कर सिर झुका कर 'सव्वस्सवि' का पाठ बोलना।)

सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चिंतिअ दुब्भासिअ दुच्चिट्ठिअ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

(अब खड़े होकर बोलना)

करेमि भंते! सामाइअं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जाव नियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए

काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं। जो मे देवसिओ अइयारो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो असावग पाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ताचरित्ते सुए सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं चउण्हं कसायाणं, पंचण्हमणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्वयाणं चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं विसोहिकरणेणं विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं।

(अन्नत्थ ऊससिएणं० 'आज के चार प्रहर दिवस में' का पाठ मन में चिन्तन करे या आठ नवकार का कायोत्सर्ग करे पीछे प्रगट लोगस्स कहे।)

(लोगस्स उज्जोअगरे० कह नीचे बैठ कर तीसरे आवश्यक की मुहपत्ति पडिलेहना और नीचे मुताबिक दो वांदणा देना)

वयाराए सव्वधम्माइक्कमणाए आसायणाए जो मे अइ-
यारो कओ तस्स खमासमणो ! पडिक्कमामि निंदामि
गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

(उपरोक्त सूत्र पुनः बोलें आवस्सिआए न कहे)

(अब खड़े होकर बोलना)

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! देवसिअं आलोउं ?
'इच्छं' आलोएमि जो मे देवसिओ अइआरो कओ,
काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो
अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणि-

मिच्छत्तो असावगपाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ताचरित्ते सुए सामाइए। तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं, पंचण्ह-मणुव्वयाणं तिण्हं गुणव्वयाणं चउण्हं सिक्खावयाणं बारसविहस्स सावगधम्मस्स जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! देवसिअं अतिचार आलोऊँजी! 'इच्छं'—

आज की चार पहर रात्रि में मैंने जिन-जिन जीवों की विराधना की हो, सात लाख पृथ्वीकाय, सात लाख [illegible], सात लाख तेउकाय, सात लाख वाउकाय, [illegible] लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख साधारण [illegible] दो लाख बेइन्द्रिय, दो लाख तेइन्द्रिय, [illegible] चौरिन्द्रिय, चार लाख देवता, चार लाख [illegible] चार लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय, चौदह लाख [illegible] चार गति के चौरासी लाख जीव योनियों [illegible] जीव का मैंने हनन किया, कराया या करते [illegible] किया हो तो मन [illegible]

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, पाटी, पोथी, ठवणी, कवली, नवकारवाली देव गुरु धर्म की आशातना की हो, पन्द्रह कर्मादानों की आसेवना की हो, राजकथा देशकथा स्त्रीकथा भक्तकथा की हो और कोई परनिन्दादि पाप किया हो, कराया हो, करते हुए का अनुमोदन किया हो, वह सब मन, वचन, काया करके रात्रि अतिचार आलोयन करके प्रतिक्रमण में आलोऊँ. तस्स मिच्छामि

सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चिंतिअ दुब्भासिअ दुच्चि-

संदिसह भगवन् !' इच्छं। तस्स

बैठ कर, दाहिना घुटना खड़ा करके 'भगवन्
सुत्र भणुं ? इच्छं', ऐसा कहे। पीछे तीन
तीन बार 'करेमि भंते' कहें।

अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं। णमो आयरि-
उवज्झायाणं। णमो लोए सव्वसाहूणं।
। सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च
मंगलं।

! सामाइअं, सावज्जंजोगं पच्चक्खामि।
, दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए
न कारवेमि तस्स भंते! पडिक्कमामि
अप्पाणं वोसिरामि।

जो मे देवसिओ [illegible]
काइओ माणसिओ उस्सुत्तो [illegible]
दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ [illegible]
असावगपाउग्गो, [illegible]
सामाइए। [illegible]

कारावणे अ करणे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥३॥

जंबद्धमिंदिएहिं, चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहिं ।
रागेण व दोसेण व, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४॥

आगमणे निग्गमणे, ठाणे चंकमणे अणाभोगे ।
अभिओगे अ निओगे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥५॥

संका कंख विगिच्छा, पसंस तह संथवो कुलिंगीसु ।
सम्मत्तस्सइआरे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥६॥

कायसमारंभे, पयणे अ पयावणे अ जे दोसा ।
। य परट्ठा, उभयट्ठा चेव तं निंदे ॥७॥

, गुणव्वयाणं च तिण्हमइयारे ।
सिक्खाणं च चउण्हं, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥८॥
अणुव्वयंमि, थुलगपाणाइवायविरईओ ।
, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥९॥
वह बंध छविच्छेए, अइ भारे भत्तपाणवुच्छेए ।
, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१०॥
बीए अणुव्वयम्मि, परिथूलगअलिअवयणविरईओ ।
इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥११॥
, मोसुवएसे अ कूड-लेहे अ ।
, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१२॥
अणुव्वयंमि, थूलग-परदव्व-हरण-विरईओ ।
, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥१३॥
तप्पडिरूवे । विरुद्ध-गमणे अ ।
णे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१४॥
चउत्थे अणुव्वयम्मि, निच्चं परदारगमण-विरईओ ।
इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥१५॥
इत्तर, अनंग-वीवाह-तिव्व-अणुरागे ।
पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥१६॥

० स हमक्खणया, प सअ सव्व ॥२१॥
इंगाली-वण-साडो, भाडीफोडी सुवज्जए कम्मं ।
वाणिज्जं चेव दंत-लक्ख-रस-केस-विस-विसयं ॥२२॥
एवं खु जंतपिल्लणकम्मं निल्लंछणं च दवदाणं ।
सरदहतलायसोसं, असई पोसं च वज्जिज्जा ॥२३॥
सत्थग्गिमुसलजंतग-तणकट्ठे मंतमूल मेसज्जे ।
दिन्ने दवाविए वा, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥२४॥
ण्हाणुव्वट्टण वन्नग, विलेवणे सद्द-रूव-रस-गंधे ।
सण आभरणे, पडिक्कमे देसिअं सव्वं ॥२५॥

[illegible], मोहरि अहिंसस [illegible] ।
[illegible], तइअम्मि [illegible] निंद ॥२६॥
[illegible], उपक्कमे [illegible] [illegible] ।
[illegible], [illegible] [illegible] निंद ॥२७॥
[illegible], [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible], [illegible] [illegible] निंद ॥२८॥
[illegible], पमाय [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] निंद ॥२९॥
निच्छियमि, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] निंद ॥३०॥
[illegible] अ, जा ये [illegible] [illegible] ।
[illegible] अ, तं निंद [illegible] [illegible] ॥३१॥
न [illegible] [illegible] [illegible] ।
तं निंद [illegible] [illegible] ॥३२॥
[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible], मा [illegible] [illegible] [illegible] ॥३३॥
[illegible] [illegible] [illegible]
[illegible]

कयपावो वि मणुस्सो, आलोइय निंदिअ गुरुसगासे।
होइ अइरेगलहुओ ओहरिअभरुव्व भारवहो ॥४०॥
आवस्सएण एएण, सावओ जइ वि बहुरओ होइ।
दुक्खाणमंतकिरिअं, काही अचिरेण कालेण ॥४१॥
आलोअणा बहुविहा, न य संभरिआ पडिक्कमणकाले।
मूलगुणउत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥४२॥
तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स,
• ठ्ठिओमि आराहणाए, विरओमि विराहणाए,
पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥४३॥

जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअलोए अ।
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ॥४४॥

जावंत केवि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे अ।
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥४५॥

चिरसंचियपावपणासणीइ, भवसयसहस्समहणीए।
चउवीसजिणविणिग्गय-कहाइ वोलंतु मे दिअहा ॥४६॥

मम मंगलमरिहंता, सिद्धा साहू सुअं च धम्मो अ।
सम्मद्दिट्ठी देवा, दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥४७॥

पडिसिद्धाणं करणे किच्चाणमकरणे पडिक्कमणं।
असद्दहणे अ तहा, विवरीयपरूवणाए अ ॥४८॥

खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई ॥४९॥

एवमहं आलोइअ, निंदिअ गरहिअ दुगंछिअं सम्मं।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥५०॥

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसी-
हिआए मत्थएण वंदामि॥ देवसिअ आलोइअ पडिक्कंता

च मे। खामेमि खमासमणो पक्खिअं वइक्कम्मं, आवस्सिआए, पडिक्कमामि खमासमणाणं, पडिक्कमामि आसायणाए तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छो-

---

• चउमासिक प्रतिक्रमण मे 'चउमासि' और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण मे 'संवच्छरी' बोलना चाहिये।

+ चउमासिक प्रतिक्रमण मे 'चउमासीओ' संवच्छरी प्रतिक्रमण मे 'संवच्छरीओ' इस प्रकार बोलना।

कयाराए, सव्वधम्माइक्कमणाए, आसायणाए, जो मे अइयारो कओ तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

(पुनः उपरोक्त सूत्र बोलें, आवस्सिआए न कहें।)

(अब गुरु कहे कि—"पुण्यवन्तो देवसिने स्थानके पक्खिसूत्र भणजो, छींक जयणा करजो, मधुर स्वरे पडिक्कमजो सांभले तो विशुद्ध भावजो, मांडल माहि खावखेस राखजो" इस प्रकार गुरु के कहने बाद सब 'तहत्ति' कहे और 'अब्भुट्ठिओ' खामे)।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! संबुद्धा खामणेणं अब्भुट्ठिओमि अब्भिंतर पक्खिअं* खामेउं ! इच्छं, खामेमि पक्खिअं, पन्नरसण्हं दिवसाणं पन्नरसण्हं राईणं अपत्तिअं पर पत्तिअं भत्ते, पाणे, विणए,

* चउमासी प्रतिक्रमण में "चउमासिअं खामेउं ? इच्छं खामेमि चउमासिअं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसोत्तरसयं राइदिवसाणं" इस प्रकार बोलना, और संवत्सरी प्रतिक्रमण में "संवच्छरिअं खामेउं ? इच्छं, खामेमि संवच्छरिअं, दुवालसण्हं मासाणं, चउव्वीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयसट्ठि राइदिवसाणं"

च मे। खामेमि खमासमणो पक्खिअं वइक्कम्मं, आवस्सिआए, पडिक्कमामि खमासमणाणं, पडिक्कमामि आसायणाए तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छो-

---

● चउमासिक प्रतिक्रमण मे 'चउमासि' और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण मे 'संवच्छरी' बोलना चाहिये।

+ चउमासिक प्रतिक्रमण मे 'चउमासीओ' संवच्छरी प्रतिक्रमण मे 'संवच्छरीओ' इस प्रकार बोलना।

...राए; सव्वधम्माइक्कमणाए, आसायणाए, जो मे अइयारो कओ, तस्स खमासमणो पडिक्कमामि, निंदामि। गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

(पुनः उपरोक्त सूत्र बोलें, 'आवस्सियाए' न बोलें।)

(अब गुरु कहे कि—"पुण्यवन्तो! देवसिने स्थानके पक्खिय भणजो, छींक जयणा करजो, मधुर स्वरे पडिक्कमजो [illegible] [illegible] [illegible], मांडले [illegible] [illegible] [illegible]" इस प्रकार गुरु के कहे बाद सब 'तहत्ति' कहें और [illegible] [illegible]।)

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! संबुद्धा खामणेणं अब्भुट्ठिओमि, अब्भिंतर पक्खिअं* खामेउं? इच्छं, खामेमि पक्खिअं, पन्नरसण्हं दिवसाणं पन्नरसण्हं राइणं जं किंचि अपत्तिअं परपत्तिअं भत्ते, पाणे, विणए,

---

* चउमासी प्रतिक्रमण में "चउमासिअं खामेउं? इच्छं खामेमि चउमासिअं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसोत्तरसयं राइदिवसाणं," इस प्रकार बोलना, और संवत्सरी प्रतिक्रमण में "संवच्छरिअं खामेउं? इच्छं, खामेमि संवच्छरिअं, दुवालसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयसट्ठी राइदिवसाणं,"

अणिच्छिअव्वो असावगपाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ता
चरित्ते सुए सामाइए । तिण्हं गुत्तिणं, चउण्हं कसाया
पंचण्हमणुव्वयाणं, चउण्हं सिक्खावयाणं बारसविहस्स
सावगधम्मस्स, जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि
दुक्कडं ।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! पक्खिय अतिचार
आलोउं ? 'इच्छं' ।

(यह कहकर पक्खिय अतिचार कहे)

पाक्षिक अतिचार

...मि दंसणंमिय, चरणंमि तवंमि तह य विरियंमि।
...णं आयारो, इअ एसो पंचहा भणिओ ॥१॥

...ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार, ...चार, इन पांचों आचारों में जो कोई अतिचार पक्ष ... में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह ...मन का वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

...तत्र ज्ञानाचार के आठ अतिचार—"काले विणए ...णे, उवहाणे तह य निण्हवणे। वंजण अत्थतदुभए, ...विहो नाणमायारो" ॥२॥ ज्ञान नियमित समय में ... नहीं। अकाल में पढ़ा। विनय रहित, बहुमान ...त, योगोपधान रहित पढ़ा। ज्ञान जिससे पढ़ा उससे ...य को गुरु माना या कहा। देववंदन, गुरुवंदन ...ते हुए तथा प्रतिक्रमण, सज्झाय पढ़ते या गुणते ...द्ध अक्षर कहा। काना-मात्रा न्यूनाधिक कही, सूत्र ...शुद्ध कहा, अर्थ अशुद्ध किया, अथवा सूत्र और अर्थ ...नों असत्य कहे। पढ़कर भूला, असज्झाय के समय ...अक्खरावली, प्रतिक्रमण, उपदेशमाला आदि सिद्धांत

तथा अवज्ञा आशातना की, किसी को पढ़ने-गुनने में विघ्न डाला, अपने जानपने का मान किया । मतिज्ञान श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और केवलज्ञान, इन पांचों ज्ञानों में श्रद्धा न की, गूंगे तोतले की हँसी की, ज्ञान में कुतर्क की, ज्ञान की विपरीत प्ररूपणा की इत्यादि ज्ञानाचार संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ।

दर्शनाचार के आठ अतिचार—"निस्संकि

निक्कंखिय, निव्वितिगिच्छा अमूढदिट्ठीअ। उववूह थिरीकरणे वच्छल्ल पभावणे अट्ठ ॥२॥ देवगुरुधर्म में निःशंक न हुआ, एकांत निश्चय न किया। धर्मसंबंधी फल में संदेह किया। चारित्रवान् साधु-साध्वी की जुगुप्सा निंदा की। मिथ्यात्वियों की पूजा प्रभावना देखकर चारित्रवाले पर भी अभाव हुआ। संघ में गुणवान की प्रशंसा न की। धर्म से पतित होते हुए जीव को स्थिर न किया। साधर्मी का हित न चाहा। भक्ति न की, अपमान किया, देवद्रव्य, ज्ञानद्रव्य, साधारणद्रव्य की हानि होते हुए उपेक्षा की। शक्ति होने पर भले प्रकार सारसंभाल न की। साधर्मी से कलह क्लेश करके कर्मबंधन किया। मुखकोश बांधे बिना वीतराग देव की पूजा की। धूपदानी, खसकूची, कलस आदि से ... को ठपका लगाया, जिनबिंब हाथ से गिरा। श्वासोच्छ्वास लेते अवज्ञा आशातना हुई। जिनमंदिर ... पोषधशाला में थूका, तथा नाक का मल डाला। हंसी मस्करी की, कुतूहल किया। जिनमन्दिर सम्बन्धी ... आशातनाओं में से और गुरु महाराज संबंधी

स त, भाषास , एषणास म त, आयाण-भडमत्त-निक्षेपण-समिति और परिष्ठापनिकासमिति, मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति ये आठ प्रवचन माता रूप पाँच समिति और तीन गुप्ति सामायिक पौषधादिक में अच्छी तरह पाली नहीं, चारित्राचार संबन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

विशेषतः श्रावकधर्म सम्बन्धी श्रीसम्यक्त्व मूल

बारह व्रत, सम्यक्त्व के पाँच अतिचार—'संका कंख विगिच्छा०' शंका श्री अरिहंत प्रभु के बल अतिशय ज्ञानलक्ष्मी गांभीर्यादिगुण शाश्वती प्रतिमा चारित्रवान् के चारित्र में तथा जिनेश्वरदेव के वचन में सन्देह किया। आकांक्षा-ब्रह्मा, विष्णु, महेश, क्षेत्रपाल, गरुड़, गोगा, दिक्पाल, गोत्रदेवता, नवग्रहपूजा, गणेश, हनुमान, सुग्रीव, बाली, मातामसानी, आदिक तथा देश, नगर ग्राम, गोत्र के जुदे-जुदे देवादिक का प्रभाव देखकर, शरीर में रोग आतंक कष्ट आने पर इहलोक परलोक के लिए पूजा मानता की। बौद्ध सांख्यादिक सन्यासी, भगत, लिंगिये, जोगी, फकीर, पीर इत्यादि अन्य दर्शनियों के मंत्र यंत्र के चमत्कार देखकर परमार्थ जाने बिना मोहित हुआ। कुशास्त्र पढ़ा, छन्ना बारह, संवत्सरी, होली, राखड़ीपूनम (राखी), अजा दसम, प्रेतदूज, गौरी तीज, गणेशचौथ, नागपंचमी, [illegible], झीलणा छठ, शीलसप्तमी, दुर्गाष्टमी, रामनौमी, विजया-दशमी, व्रत एकादशी [illegible], वत्सद्वादशी, धनतेरस, अनंत चौदस, [illegible]

[illegible] भोगवांछा के लिए पूजा की। रो[illegible]
आतंक कष्ट के आने पर क्षीण वचन बोला। मानत
मानी। महात्मा महासती के आहार पानी आदि की
निन्दा की। मिथ्यादृष्टि की पूजा प्रभावना देखकर
प्रशंसा की प्रीति की। दाक्षिण्यता से उसका धर्म
माना। मिथ्यात्व को धर्म कहा। इत्यादि श्रीसम्यक्त्व
त सम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या
र जानते अजानते लगा हो, वह सब मन वचन काया
मिच्छामि दुक्कडं।

पहले स्थूल प्राणातिपात—विरमणव्रत के पाँच अतिचार—'वह बंध छविच्छेए०' द्विपद चतुष्पद आदि जीव को क्रोधवश ताड़न किया, घाव लगाया, जकड़ कर बांधा, अधिक बोझ लादा। निर्लांछन कर्म—नासिका छिदवाई, कर्णछेदन करवाया, खस्सी किया। दाना, घास पानी की समय सार संभाल न की, लेन देन में किसी के बदले किसी को भूखा रखा, पास खड़ा होकर मरवाया, कैद करवाया। सड़े हुए धान को बिना शोधे काम में लिया, पिसवाया, धूप में सुखाया। पानी यथा से न छाना। ईंधन, लकड़ी, उपले गोहे आदि बिना देखे जाले। उसमें सर्प, बिच्छू, कानखजूरा कीड़ी, मकोड़ी, सुरोला, मांकड़, जुआ, गिगोड़ा आदि जीवों का नाश हुआ। किसी जीव को दबाया, दुखी जीव को अच्छी जगह पर न रखा। चूंटी (कीड़ी) मकोड़ी के अंडे नाश किये, लीख फोड़ी, दीमक, कीड़ी, मकोड़ी, घीमेल, कातरा, चूड़ेल, पतंगिया, देडका, अलसीया, ईअल, कुत्ता, डांस, मच्छर, मगतरा, माखी, टिड्डी, प्रमुख जीवका नाश किया। चील, काग

प्राणातिपात विरमणव्रत संबन्धी जो को पक्ष
दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह
सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ।

दूसरे स्थूल मृषावाद विरमणव्रत के पाँच अतिचार—
'सहसा-रहस्सदारे०' सहसात्कार—बिना विचारे एकदम
किसी को अयोग्य आल-कलंक दिया। स्वस्त्री संबंधी
गुप्त बात प्रकट की, अथवा अन्य किसी का मंत्र भेद
मर्म प्रकट किया। किसी को दुःखी करने के लिये झूठी
सलाह दी। झूठा लेख लिखा. झूठी गवाही दी। अमा

... की। किसी की धरोहर रखी हुई वस्तु ... न दी। कन्या गौ भूमि संबंधी लेने देने लड़ते ... वादविवाद में मोटा झूठ बोला। हाथ पैर ... की गाली दी। मर्म वचन बोला इत्यादि दूसरे ... वाद विरमणव्रत संबंधी जो कोई अतिचार ... में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो ... मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

... स्थूल अदत्तादान विरमणव्रत के पांच अति- ... 'तेनाहडप्पओगे०' घर बाहिर खेत खलामें बिना ... के पूछे वस्तु ग्रहण की, अथवा आज्ञा बिना अपने ... में ली, चोरी की वस्तु ली, चोर को सहायता दी। ... कर्म किया। अच्छी बुरी, सजीव निर्जीव, ... वाली वस्तु का मेल संमेल किया। ... की ... लेते देते तराजू की ... ... अथवा ... दिया, देते हुए ... किया, ... विश्वासघात किया, ठगाई की। ... को धोखा दिया। माता-पिता ... ... ठगाई कर किसी को दिया ...

कया । अनगक्र ड़ा की । काम आदि की विशेष जागृति की, अभिलाषा से सराग वचन कहा । अष्टमी, चौदस आदि पर्वतिथि का नियम तोड़ा । स्त्री के अंगोपांग देखे, तीव्र अभिलाषा की । कुविकल्प चिंतन किया । पराये नाते जोड़े । अतिक्रम व्यतिक्रम अतिचार अनाचार स्वप्न स्वप्नांतर हुआ । कुस्वप्न आया । स्त्री, नट-विट, भांड, वेश्यादिक से हास्य किया । स्वस्त्री में तोष न किया । इत्यादि चौथे स्वदारा संतोष परस्त्री गमनविरमणव्रत संबंधि जो कोई अतिचार पक्ष दिवस

[illegible] जानते लगा हो तो वह सब
[illegible] मि दुक्कडं ।

[illegible] अतिचार ऊपर आये हैं, उनके स्थान
[illegible] अतिचार बोलना चाहिए ।

[illegible] पर-पुरुष-विरमण व्रत के पाँच
[illegible] इयार०' पर पुरुष गमन
[illegible], पुरुष से गमन किया,
[illegible] आदि की विशेष आकृति की,
[illegible] कहा, अष्टमी चौदस आदि
[illegible], राग भाव से पुरुष के अंगो-
[illegible] चिन्तन किया, पराये सम्बन्ध-सगाई
[illegible], अतिचार, अनाचार स्वप्न,
[illegible], पुरुष, नट, विट, भांड,
[illegible] किया, स्वपति से सन्तोष न किया
[illegible] पर-पुरुष-गमन विरमण व्रत
[illegible] अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म बादर
[illegible], वह सब मन वचन काया कर

लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छा दुक्कडं।

छट्ठे दिक्परिमाणव्रत के पांच अतिचार—"गमणस्सउ परिमा०" ऊर्ध्वदिशि अधोदिशि तिर्यग्दिशि जाने आने के नियमित प्रमाण उपरान्त भूल से गया। नियम तोड़ा; प्रमाण उपरान्त सांसारिक कार्य के लिए देश से वस्तु मंगवाई, अपने पास से अन्यत्र भेजी। का जंहाज आदि द्वारा व्यापार किया। वर्षाकाल में एक ग्राम से दूसरे ग्राम में गया। एक दिशा के प्रमाण

...कम करके दूसरी दिशा में अधिक गया। इत्यादि ...दिक्परिमाण व्रत संबन्धि जो कोई अतिचार पक्ष ...में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह ...मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

...सातवें भोगोपभोगव्रत के भोजन आश्रित पाँच ...अतिचार और कर्म आश्रित पन्द्रह अतिचार—'सच्चित्ते ...डिबद्धे०' सचित्त—खान-पान की वस्तु नियमसे अधिक ...स्वीकार की। सचित्त से मिली हुई वस्तु खाई। तुच्छ ...औषधि भक्षण किया। अपक्व आहार, दुपक्व ...आहार किया। कोमल इमली, बूट, भुट्टे, फलियाँ ...आदि वस्तु खाई। "सचित्त-दव्व-विगई वाणह-तंबोल-...वत्थ-कुसुमेसु। वाहण-सयण विलेवण-बंभ-दिसि न्हाण-...भत्तेसु ॥१॥ ये चौदह नियम लिये नहीं। लेकर ...भूले। बड़, पीपल, पिलंखण, कठुंबर, गूलर ये पाँच ...फल। मदिरा मांस, शहद, मक्खन ये चार महाविगई। ...हिम ओले कच्ची मिट्टी, रात्रि-भोजन बहुबीजाफल, ...अचार, घोलवड़े, द्विदल बैंगण, तुच्छफल, अजानाफल ...चलितरस, अनन्तकाय ये बाईस अभक्ष्य। सूरन-जमी-

सत्रा णज्य, वसवा ७ पाच व णज्य।

पिल्लणकम्मे, निल्लंछणकम्मे, दवग्गिदावणिया, सरदह-तलावसोसणिया, असइपोसणिया, ये पाँच सामान्य एवं कुल पन्द्रह कर्मादान महा आरम्भ किये कराये करते को अच्छा समझा। श्वान, बिल्ली आदि पोषे पाले। महा सावद्य, पापकारी, कठोर काम किया। इत्यादि सातमें भोगोपभोग विरमणव्रत सम्बन्धी जो कोई

तचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते

। हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि

दुक्कडं।

आठवें अनर्थदंडके पाँच अतिचार—कंदप्पे कुक्कु-
कंदर्प—कामाधीन होकर नट विट वेश्या आदिक
हास्य खेल, क्रीड़ा कुतूहल किया। स्त्री-पुरुष के
भाव रूप शृंगार सम्बन्धी वार्त्ता की। विषयरस
क कथा की। स्त्री-कथा, देश-कथा, भक्त-कथा, राज-
। ये चार विकथा की, पराई भांजगड़की, किसी
चुगलखोरी की, आर्त्तध्यान रौद्रध्यान ध्याया।
, कटारी, कुशि, कुल्हाड़ी, रथ, ऊखल, मूसल
, चक्की आदिक वस्तु दाक्षिण्यतावश किसी को
दी। पापोपदेश दिया अष्टमी चतुर्दशी के दिन
ने पीसने का नियम तोड़ा। मूर्खता से, असंबद्ध वाक्य
। प्रमादाचरण सेवन किया। घी, तेल, दूध, दही,
छाछ आदि का भाजन खुला रखा, उसमें जीवा-
का नाश हुआ। बासी मक्खन रखा और तपाया
ते धोते, दातन करते, जीव आकुलित मोरी में पानी
। झूले में झूला। जुआ खेला। नाटक आदि देखा।
ढांगर खरीदवाये। कर्कश वचन कहा, किचकिची
। ताड़ना तर्जना की। मत्सरता धारण की। श्राप

वचन काया कर मच्छा म दुक्कडं ।

नवमें सामायिकव्रत के पाँच अतिचार—'तिविहे दुप्पणिहाणे०' सामायिकमें संकल्प विकल्प किया । चित्त स्थिर न रखा । सावद्य वचन बोला । प्रमार्जन किये बिना शरीर हिलाया, इधर उधर किया । शक्ति होनेपर भी सामायिक न किया । सामायिकमें खुले मुंह बोला । नींद ली । विकथा की । घर संबंधी विचार किया । दीपक या बिजली का प्रकाश शरीर पर पड़ा । सचित्त का संघटन हुआ । स्त्री तिर्यंच आदि का निरंतर

पांचवें स्थूल परिग्रहपरिमाणव्रत के पांच
'धन-धन्न खित्त वत्थु० धन धान्य क्षे
चांदी वर्त्तन आदि। द्विपद—दास दासी,
गौ बैल घोड़ा आदि नव प्रकार के परिग्रह
लिया; लेकर बढ़ाया। अथवा अधिक देख
माता पिता पुत्र स्त्री के नाम किया। परि
न किया, करके भूलाया याद न कि
पांचवें स्थूल परिग्रह परिणामव्रत सम्बन
अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर ज
लगा हो वह सब मन वचन काया क

को काम करके दूसरी दिशा में अधिक गया। इत्यादि छट्ठे दिक्परिमाण व्रत संबन्धि जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

सातवें भोगोपभोगव्रत के भोजन आश्रित पांच अतिचार और कर्म आश्रित पन्द्रह अतिचार—'सच्चित्ते पडिबद्धे०' सचित—खान-पान की वस्तु नियमसे अधिक स्वीकार की। सचित्त से मिली हुई वस्तु खाई। तुच्छ औषधिका भक्षण किया। अपक्व आहार, दुपक्व आहार किया। कोमल इमली, बूट, भुट्टे, फलियाँ आदि वस्तु खाई। "सचित्त-दव्व-विगई वाणह-तंबोल-वत्थ-कुसुमेसु। वाहण-सयण विलेवण-बंभ-दिसि न्हाण-भत्तेसु ॥१॥ ये चौदह नियम लिये नहीं। लेकर भूलाये। वड, पीपल, पिलंखण, कठुंवर, गूलर ये पाँच फल। मदिरा मांस, शहद, मक्खन ये चार महाविगई। बरफ ओले कच्ची मिट्टी, रात्रि-भोजन बहुबीजाफल, आचार, घोलवड़े, द्विदल बैंगण, तुच्छफल, अजानाफल चलितरस, अनन्तकाय ये बाईस अभक्ष्य। सूरन-जमी-

कन्द, कच्ची हलदी, सतावरी, कच्चानरकचूर, अदरक, कुवारपाठा, थोर, गिलोय, लहसून, गाजर, गट्ठा-प्याज, गोगलु, कोमलफलफूल, पत्र, थेगी, हरा मोथा, अमृत-वेल, मूली, पदवहेड़ा, आलू, कचालू, रतालू, पिंडालु आदि अनन्तकाय का भक्षण किया। दिवस अस्त होने पर भोजन किया। सूर्योदय से पहले भोजन किया। तथा कर्मतः पन्द्रह कर्मादान—इंगालकम्मे, वणकम्मे, साड़ीकम्मे, भाड़ीकम्मे, फोड़ीकम्मे ये पाँच कम्मं। दंतवाणिज्य, लक्खवाणिज्य, रसवाणिज्य, केसवाणिज्य, विसवाणिज्य ये पाँच वाणिज्य। जंत-पिल्लणकम्मे, निल्लंछणकम्मे, दवग्गिदावणिया, सरदह-तलावसोसणिया, असइपोसणिया, ये पाँच सामान्य एवं कुल पन्द्रह कर्मादान महा आरम्भ किये कराये करते को अच्छा समझा। श्वान, बिल्ली आदि पोषे पाले। महा सावद्य, पापकारी, कठोर काम किया। इत्यादि सातमें भोगोपभोग विरमणव्रत सम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

आठवें अनर्थदंडके पाँच अतिचार—कंदप्पे कुक्कु-इए०' कंदर्प—कामाधीन होकर नट विट वेश्या आदिक से हास्य खेल, क्रीड़ा कुतूहल किया ! स्त्री-पुरुप के हावभाव रूप शृंगार सम्बन्धी वार्त्ता की। विषयरस पोषक कथा की। स्त्री-कथा, देश-कथा, भक्त-कथा, राज-कथा ये चार विकथा की, पराई भांजगड़की, किसी का चुगलखोरी की, आर्त्तध्यान रौद्रध्यान ध्याया। खांडा कटारी, कुशि, कुल्हाड़ी, रथ, ऊखल, मूसल अग्नि, चक्की आदिक वस्तु दाक्षिण्यतावश किसी को मांगी दी। पापोपदेश दिया अष्टमी चतुर्दशी के दिन दलने पीसने का नियम तोड़ा। मूर्खता से, असंबद्ध वाक्य बोला। प्रमादाचरण सेवन किया। घी, तेल, दूध, दही, गुड़, छाछ आदि का भाजन खुला रखा, उसमें जीवा-दिक का नाश हुआ। बासी मक्खन रखा और तपाया न्हाते धोते, दांतन करते, जीव आकुलित मोरी में पानी डाला। झूले में झूला। जुआ खेला। नाटक आदि देखा। ढोर डांगर खरीदवाये। कर्कश वचन कहा, किचकिची ली। ताड़ना तर्जना की। मत्सरता धारण की। श्राप

दिया। भैंसा साँड़ मेंढ़ा, मुरगा, कुत्ते आदिक लड़वाये, या इनकी लड़ाई देखी। ऋद्धिवान की ऋद्धि देख ईर्षा की। मिट्टी, नमक, धान, बिनोले विना कारण मसले। हरी वनस्पति खूंदी। शस्त्रादिक बनवाये। रागद्वेष के वशसे एकका भला चाहा। एकका बुरा चाहा। मृत्यु की वाँछा की। मैंना, तोते, कबूतर, बटेर, चकोर आदि पक्षियों को पींजरे में डाला। इत्यादिक आठवें अनर्थ-दंड विरमणव्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवसमें सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छा मि दुक्कडं।

नवमें सामायिकव्रत के पाँच अतिचार—'तिविहे दुप्पणिहाणे०' सामायिकमें संकल्प विकल्प किया। चित्त स्थिर न रखा। सावद्य वचन बोला। प्रमार्जन किये विना शरीर हिलाया, इधर उधर किया। शक्ति होनेपर भी सामायिक न किया। सामायिकमें खुले मुंह बोला। नींद ली। विकथा की। घर संबंधी विचार किया। ोपक या बिजली का प्रकाश शरीर पर पड़ा। सचित्त ...ुका संघटन हुआ। स्त्री तिर्यंच आदि का निरंतर

परस्पर संघट्टन हुआ। मुहपति संघट्टी। सामायिक अधूरा पारा, विना पारे उठा। इत्यादि नवमें सामायिकव्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या वादर जानते अजानते लगा हो वह सव मन वचन काया कर मिच्छा मि दुक्कडं।

दशमें देशावकासिकव्रत के पांच अतिचार— "आणवणे पेसवणे०" आणवणप्पओगे पेसवणप्पओगे सद्दाणुवाई रूवाणुवाई वहियापुग्गलक्खेवे। नियमित भूमि में वाहर से वस्तु मंगवाई। अपने पाससे अन्यत्र भिजवाई। खंखारा आदि शब्द करके, रूप दिखाके या कंकर आदि फेंककर अपना होना मालूम किया। इत्यादि दशमें देशावकासिक व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवसमें सूक्ष्म या वादर जानते अजानते लगा हो वह सव मन वचन काया कर मिच्छा मि दुक्कडं।

ग्यारहवें पौषधोपवासव्रतके पाँच अतिचार—'संथारुच्चार विहि०" अप्पडिलेहिअ दुप्पडिलेहिअ सिज्जासंथारए। अप्पडिलेहिय दुप्पडिलेहिय उच्चार पासवण भूमि। पौषध लेकर सोनेकी जगह विना पूँजे-प्रमार्जे

सोया। स्थंडिल आदि की भूमि भले प्रकार शोधी नहीं। लघुनीति बडोनीति करने या परठने के समय "अणुजा-णह जस्सुग्गहो" न कहा। परठे बाद तीन वार 'वोसिरे' न कहा। जिनमन्दिर और उपाश्रय में प्रवेश करते हुए 'निसीहि' और बाहिर निकलते 'आवस्सही' तीन वार न कही। वस्त्र आदि उपधि की पडिलेहणा न की। पृथ्वी काय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रस-कायका संघट्टन हुआ। संथारा पोरिसी पढनी भुलाई। बिना संथारे जमीन पर सोया। पोरिसी में नींद ली, पारना आदि की चिंता की। समय पर देववंदन न किया। प्रतिक्रमण न किया। पौषध देरी से लिया और जल्दी पारा, पर्वतिथिको पोसह न लिया। इत्यादि ग्यारहवें पौषधोपवास व्रत सम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अनजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

बारहवें अतिथि संविभाग व्रत के पाँच अतिचार—"सचित्ते निक्खिवणे०" सचित्त वस्तु के संघट्टेवाला [illegible]य आहार-पानी साधु-साध्वी को दिया। देने

को इच्छा से सदोष वस्तु को निर्दोष कही। देने की इच्छा से पराई वस्तु को अपनी कही। न देनेकी इच्छा से निर्दोष वस्तु को सदोष कही। न देने की इच्छा से अपनी वस्तु को पराई कही। गोचरी के समय इधर-उधर हो गया। गोचरी का समय टाला असमय में साधु महाराज को प्रार्थना की। आये हुए गुणवान् की भक्ति न की। शक्ति के होते हुए स्वामी-वात्सल्य न किया। अन्य किसी धर्मक्षेत्र को पड़ता देख मदद न की। दीन दुःखी की अनुकम्पा न की। इत्यादि बारहवें अतिथिसंविभाग व्रतसम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अनजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

संलेषणा के पाँच अतिचार —"इहलोए परलोए०" इहलोगासंसप्पओगे। परलोगासंसप्पओगे। जीविआसंस-प्पओगे। मरणासंसप्पओगे। कामभोगासंसप्पओगे। धर्म के प्रभाव से इह लोकसम्बन्धी राजऋद्धिभोगादिकी वांछा की। परलोक में देवदेवेन्द्र चक्रवर्ती आदि पदवी की इच्छा की। सुखी अवस्था में जीने की इच्छा की।

दुःख आने पर मरने की वांछा की। इत्यादि संलेषणा व्रतसम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

तपाचार के बारह भेद छ बाह्य छ अभ्यन्तर। "अणसणमुणोअरिया०" अनशन—शक्ति के होते हुए पर्वतिथि को उपवास आदि तप न किया। ऊनोदरी—दो चार ग्रास कम न खाये वृत्तिसंक्षेप—द्रव्य—खाने की वस्तुओं का संक्षेप न किया। रस—विगय त्याग किया। काय-क्लेश लोच आदि कष्ट न किया। संलिनता—अंगोपांग का संकोच न किया। पच्चक्खाण तोड़ा। भोजन करते समय एकासणा आयंबिल प्रमुख में चौकी, पटडा, आदि हिलता ठीक न किया। पच्चक्खाण पारना भुलाया, बैठते नवकार न पढ़ा। उठते पच्चक्खाण न किया। निवि, आयंबिल, उपवास आदि तप में कच्चा पानी पिया। वमन हुआ। बाह्य तपसंबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो, वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

अभ्यन्तर तप—"पायछित्तं विणओ०" शुद्ध अन्तः-करण पूर्वक गुरुमहाराज से आलोचना न ली गुरु की दी हुई आलोचना सम्पूर्ण न की। देव गुरु संघ साधर्मीका विनय न किया। बाल वृद्ध तपस्वी आदि की वेयावच्च न की। वाचना, पृच्छना, परावर्त्तना, अनुप्रेक्षा, धर्म-कथा लक्षण पाँच प्रकार का स्वाध्याय न किया। धर्म-ध्यान, शुक्लध्यान ध्याया नहीं। आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान ध्याया। दुःखक्षय कर्मक्षय निमित्त दश बीस लोगस्सका काउस्सग्ग न किया। इत्यादि अभ्यन्तरतप सम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

वीर्याचार के तीन अतिचार—"अणिगूहिय बल-विरइओ०" पढ़ते, गुणते, विनय, वेयावच्च, देवपूजा, सामायिक, पौषध, दान, शील, तप, भावनादिक धर्म-कृत्य में मन वचन काया का बल वीर्य पराक्रम फोरा नहीं। विधिपूर्वक पंचांग खमासमण न दिया। द्वादशा-वर्त्त वंदनकी विधि भले प्रकार न की। अन्य चित्त

निरादर से बैठा। देववंदनप्रतिक्रमण में जल्दीकी, इत्यादि वीर्याचार संबन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

"नाणाई अट्ठ पइवय, समसंलेहण पण पन्नर कम्मेसु।
बारस तव वीरिअ तिगं, चउव्वीसं सय अइयारा॥"

"पडिसिद्धाणं करणे०" प्रतिषेध—अभक्ष्य अनन्तकाय बहुबीज भक्षण, महारम्भ परिग्रहादि किया। देवपूजन आदि षट्कर्म, सामायिकादि छ आवश्यक, विनयादिक अरिहंतकी भक्ति, प्रमुख करणीय कार्य किये नहीं। जीवाजीवादिक सूक्ष्म विचार की सद्दहणा न की। अपनी कुमति से उत्सूत्र प्ररूपणा की। तथा प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, रति, अरति, परपरिवाद, मायामृषावाद, मिथ्यात्वशल्य, ये अठारह पाप-स्थान सेवन किये, कराये, अनुमोदे। दिनकृत्य प्रतिक्रमण, विनय, वैयावृत्य न किया और भी जो कुछ वीतराग की आज्ञा से विरुद्ध किया, कराया

या अनुमोदन किया। इन चार प्रकार के अतिचारो में जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं।

एवंकारे श्रावक धर्म सम्यक्त्व मूल बारह व्रतसंबंधी एक सो चोवीस अतिचारों में जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो, वह सब मन वचन काया कर के मिच्छामि दुक्कडं।

(अब नीचे बैठकर)

सव्वस्स वि पक्खिअ दुच्चिंतिअ दुब्भासिअ दुच्चिट्ठिअ, इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! इच्छं, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

(दो बार वांदणा दें, दूसरी बार आवस्सिआए न कहे।)

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए अणुजाणह मे मिउग्गह। निसीहि, अहोकायं कायसंफासं, खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे पक्खो वइक्कंतो? जत्ता? भे, जवणिज्जं च भे? खामेमि, खमासमणो! पक्खिअं वइक्कम्मं

आवस्सिआए पडिक्कमामि खमासमणाणं, पक्खिआए आसायणाए तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मण-दुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छोवयाराए, सव्वधम्माइक्कमणाए आसायणाए जो मे अइआरो कओ तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! देवसियं आलोइय पडिक्कंता पत्तेयखामणेणं अब्भुट्ठिओमि, अब्भितर* पक्खिअं खामेउं ? इच्छं, खामेमि पक्खिअं, पन्नरसण्हं दिवसाणं, पन्नरसण्हं राईण, जं किंचि अपत्तिअं परपत्तिअं भत्ते, पाणे, विणए, वेआवच्चे, आलावे, संलावे, उच्चा-सणे, समासणे, अंतरभासाए, उवरिभासाए, जं किंचि

* चउमासि प्रतिक्रमण मे "चउमासिअं खामेउं ? इच्छं, खामेमि । चउमासिअं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं वीसोत्तरसयं राईदिवसाणं" इस तरह बोलना ओर संवच्छरी प्रति-क्रमण मे "संवच्छरीअं खामेउं ? इच्छं, खामेमि संवच्छरिअं, दुवालसण्हं मासाणं चउवीसण्हंपक्खाणं, तिन्निसयसट्ठि .. दिवसाणं" इस तरह बोलना चाहिये ।

मज्झ विणयपरिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह, अहं न जाणामि, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

(यहाँ पर हरएक मनुष्य से खमतखामणा करके दो वांदना देना दूसरी वार आवस्सिआए न कहना।)

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए? अणुजाणह मे मिउग्गहं। निसीहि अहोकायं कायसंफासं खमणिज्जो मे किलामो। अप्पकिलंताणं बहुसुभेण मे पक्खो वइक्कंतो? जत्ता मे! जवणिज्जं च मे! खामेमि खमासमणो! पक्खिअं वइक्कम्मं, आवस्सिआए, पडिक्कमामि खमासमणाणं, पक्खिआए आसायणाए, तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छो-वयाराए, सव्वधम्माइक्कमणाए, आसायणाए जो मे अइ-आरो कओ तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

भगवन्! देवसिअ आलोइअ पडिक्कंता पक्खिअं पडिक्कमावेह 'इच्छं'।

करेमि भंते! सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जाव नियमं पज्जुवासामि। दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि। तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे पक्खिओ अइयारो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो, असावगपाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ताचरित्ते सुए सामाइए। तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं पंचण्हमणुव्वयाणं तिण्हं गुणव्वयाणं चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं, निग्घायणट्ठाए। ठामि काउस्सग्गं।

अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं,

संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो अविराहिओ, हुज्ज मे काउस्सग्गो ! जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

(यहाँ सब जने काउस्सग्ग में पक्खिसूत्रवंदित्तु-सूत्र सुनें और एक जन खमासमणपूर्वक आदेश मांग कर सूत्र प्रकट कहे)।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् पक्खिसूत्र * कड्ढूं ? 'इच्छं'।

(ऐसे खमासमणपूर्वक आदेश मांग कर, खड़े होकर प्रकट तीन नवकार कहकर साधु-मुनिराज हो तो पक्खिसूत्र कहे और यदि साधु-मुनिराज न हो तो श्रावक 'वंदित्तु सूत्र' कहे)।

---

* चउमासी प्रतिक्रमण में 'चउमासीसूत्र कड्ढुं' और संवच्छरी प्रतिक्रमण मे 'संवत्सरीसुव कड्ढुं' ऐसे बोलना चाहिये।

करेमि भंते ! सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जाव नियमं पज्जुवासामि। दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि। तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे पक्खिओ अइयारो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो, असावगपाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ता-चरित्ते सुए सामाइए। तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं पंचण्हमणुव्वयाणं तिण्हं गुणव्वयाणं चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकर-णेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं, निग्घायणट्ठाए। ठामि काउस्सग्गं।

अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं खासिएण छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएण, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमु-च्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं,

संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो अविराहिओ, हुज्ज मे काउस्सग्गो! जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।

(यहाँ सब जने काउस्सग्ग में पक्खिसूत्रवंदित्तु-सूत्र सुन्ने और एक जन खमासमणपूर्वक आदेश मांग कर सूत्र प्रकट कहे)।

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् पक्खिसूत्र * कड्ढूं? 'इच्छं'।

(ऐसे खमासमणपूर्वक आदेश मांग कर, खड़े होकर प्रकट तीन नवकार कहकर साधु-मुनिराज हो तो पक्खिसूत्र कहे और यदि साधु-मुनिराज न हो तो श्रावक 'वंदित्तु सूत्रं कहे)।

---

* चउमासी प्रतिक्रमण में 'चउम्मासीसूत्र कड्ढु, और संवच्छरी प्रतिक्रमण मे 'संवत्सरीसुव कड्ढु' ऐसे बोलना चाहिये।

वंदित्तुसूत्र।

वंदित्तु सव्वसिद्धे, धम्मायरिए, अ सव्व साहूअ।
इच्छामि पडिक्कमिउं, सावगधम्माइआरस्स ॥१॥
जो मे वयाइआरो, नाणे तह दंसणे चरित्ते अ।
सुहुमो अ बायरो वा, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ २ ॥
दुविहे परिग्गहंमि, सावज्जे बहुविहे अ आरंभे।
कारावणे अ करणे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ३ ॥
जं बद्धमिंदिएहिं, चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहिं।
रागेण व दोसेण व, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ४ ॥
आगमणे निग्गमणे, ठाणे चंकमणे, अणाभोगे।
अभिओगे अ निओगे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ५ ॥
संकाकंखविगिच्छा, पसंस तह संथवो कुलिंगीसु।
सम्मत्तस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ६ ॥
छक्कायसमारंभे पयणे अ पयावणे अ जे दोसा।
अत्तट्ठा य परट्ठा, उभयट्ठा चेव तं निंदे ॥ ७ ॥
पंचण्हमणुव्वयाणं गुणव्वयाणं च तिण्हमइयारे।
सिक्खाणं च चउण्हं, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ८॥
पढमे अणुव्वयंमि, थूलगपाणाइवायविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ ९ ॥

वह बंध छविच्छेए, अइभारे भत्तपाणवुच्छेए।
पढमवयस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं॥ १०॥
बीए अणुव्वयम्मि, परिथूलगअलिअवयणविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं॥ ११॥
सहस्सारहस्सदारे, मोसुवएसे अ कूडलेहे अ।
बीय वयस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं॥ १२॥
तइए अणुव्वयम्मी थूलगपरदव्वहरणविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं॥ १३॥
तेनाहडप्पओगे, तप्पडिरूवे अ विरुद्धगमणे अ।
कूडतुलकूडमाणे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं॥ १४॥
चउत्थे अणुव्वयम्मि, निच्चं परदारगमणविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे इत्थ पमायप्पसंगेणं॥ १५॥
अपरिग्गहिआ इत्तर, अणंगवीवाहतिव्व अणुरागे।
चउत्थवयस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं॥ १६॥
इत्तो अणुव्वए पंचमम्मि, आयरिअमप्पसत्थंमि।
परिमाणपरिच्छेए, इत्थ पमायप्पसंगेणं॥ १७॥
धण-धन्न-खित्त-वत्थू, रुप्प-सुवन्ने अ कुविअपरिमाणे।
दुप्पए चउप्पयम्मि य, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं॥ १८॥

गमणस्स उ परिमाणे, दिसासुउड्ढं अहे अ तिरिअं च।
वुड्ढि सइअंतरद्धा, पढमम्मि गुणव्वए निंदे ॥ १६ ॥
मज्जम्मि अ मंसम्मि अ, पुप्फे अ फले अ गंधमल्ले अ।
उवभोगपरिभोगे, बीअम्मि गुणव्वए निंदे ॥ २० ॥
सच्चित्ते पडिबद्धे, अपोलि दुप्पोलिअं च आहारे।
तुच्छोसहिभक्खणया, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ २१ ॥
इंगालीवणसाडी, भाडीफोडी सुवज्जए कम्मं।
वाणिज्जं चेव य, दत-लक्ख रसकेश-विस-विसयं ॥२२ ॥
एवं खु जंतपिल्लण-कम्मं, निल्लंछणं च दवदाणं।
सरदहतलायसोसं, असईपोसं च वज्जिज्जा ॥ २३ ॥
सत्थग्गिमुसलजंतग - तणकट्ठे मंतमूलभेसज्जे।
दिन्ने दवाविए वा पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ २४ ॥
ण्हाणुव्वट्टणवन्नग, विलेवणे सद्दरूवरसगंधे।
वत्थासणआभरणे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ २५ ॥
कंदप्पे कुक्कुइए, मोहरिअहिगरण भोगअइरित्ते।
दंडम्मि अणट्ठाए, तइअम्मि गुणव्वए निंदे ॥ २६ ॥
तिविहे दुप्पणिहाणे, अणवट्ठाणे तहा सइविहूणे।
सामाइअ वितहकए, पढमे सिक्खावए निंदे ॥ २७ ॥

आणवणे पेसवणे, सद्दे रूवे अ पुग्गलक्खेवे।
देसावगासियम्मि, बीए सिक्खावए निंदे॥ २८॥
संथारुच्चारविहो, पमाय तह चेव भोअणाभोए।
पोसह-विहि-विवरीए, तइए सिक्खावए निंदे॥ २९॥
सच्चित्ते निक्खिवणे, पिहिणे ववएसमच्छरे चेव।
कालाइक्कमदाणे, चउत्थे सिक्खावए निंदे॥ ३०॥
सुहिएसु अ दुहिएसु अ, जा मे अस्संजएसु अणुकंपा।
रागेण व दोसेण व, तं निंदे तं च गरिहामि॥ ३१॥
साहूसु संविभागो, न कओ तवचरणकरणजुत्तेसु।
संते फासुअदाणे, तं निंदे तं च गरिहामि॥ ३२॥
इहलोए परलोए, जीविअ मरणे अ आसंसपओगे।
पचविहो अइआरो, मा मज्झ हुज्ज मरणंते॥ ३३॥
काएण काइअस्स, पडिक्कमे वाइयस्स वायाए।
मणसा माणसिअस्स, सव्वस्स वयाइआरस्स॥ ३४॥
वंदणवयसिक्खागा—रवेसु सन्नाकसायदडेसु।
गुत्तीसु अ समिईसु अ, जो अइआरो अ तं निंदे॥ ३५॥
सम्मदिट्ठी जीवो, जइ वि हु पावं समायरइ किं चि।
अप्पो सि होइ बंधो, जेण न निद्धं धसं कुणइ॥ ३६॥

तं पि हु सपडिक्कमणं, सप्परिआवं सउत्तरगुणं च ।
खिप्पं उवसामेई, वाहि व्व सुसिक्खिओ विज्जो ॥ ३७ ॥
जहा विसं कुट्ठगयं, मंतमूलविसारया ।
विज्जा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निव्विसं ॥ ३८ ॥
एवं अट्ठविहं कम्मं, रागदोससमज्जिअं ।
आलोअंतो अ निंदंतो, खिप्पं हणइ सुसावओ ॥ ३९ ॥
कयपावो वि मणुस्सो, आलोइय निंदियगुरु सगासे ।
होइ अइरेग लहुओ, ओहरिअ—भरुव्व भारवहो ॥ ४० ॥
आवस्सएण एएण, सावओ जइ वि बहुरओ होइ ।
दुक्खाणसंतकिरिअं, काही अचिरेण कालेण ॥ ४१ ॥
आलोअणा बहुविहा, न य संभरिआ पडिक्कमणकाले ।
मूलगुण उत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ४२ ॥
तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स,
अब्भुट्ठिओमि आराहणाए, विरओमि विराहणाए ।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥ ४३ ॥
जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअलोए अ ।
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ॥ ४४ ॥
जावंत केवि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे अ ।
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥ ४५ ॥

चिरसंचियपावपणासणीइ, भवसयसहस्समहणीए ।
चउव्वीसजिणविणिग्गय-कहाइ वोलंतु मे दिअहा ॥४६॥
मम मंगलमरिहंता, सिद्धा साहू सुअं च धम्मो अ ।
सम्मदिट्ठि देवा, दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥ ४७ ॥
पडिसिद्धाणं करणे, किच्चाणमकरणे पडिक्कमणं ।
असद्दहणे अ तहा, विवरीयपरूवणाए अ ॥ ४८ ॥
खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई ॥ ४९ ॥
एवमहं आलोइअ, निंदिअ गरहिअ दुगंछिअं सम्मं ।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥ ५० ॥

(अब "णमो अरिहंताणं" प्रगट कह कर सब काउस्सग्ग पारे और खड़ा होकर बोलनेवाला तीन नवकार गिन कर बैठ जाय, पीछे दाहिना घुटना खड़ा करके तीन नवकार, तीन करेमि भंते और इच्छामि पडिक्कमिउं० कहकर "वंदित्तु सूत्र" कहे)

णमो अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं। णमो आयरियाणं। णमो उवज्झायाणं। णमो लोए सव्वसाहूणं। एसो पंच णमुक्कारो। सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं। पढमं हवइ मंगलं।

करेमि भंते ! सामाइअं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जाव नियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते ? पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

इच्छामि पडिक्कमिउं । जो मे पक्खिओ अइआरो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो असावग-पाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ताचरित्ते सुए सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं चउण्हं कसायाणं, पंचण्हमणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्वयाणं, चउण्हं सिक्खावयाणं बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

वंदित्तु सव्व-सिद्धे, धम्मायरिए अ सव्व-साहू अ ।
इच्छामि पडिक्कमिउं सावगधम्माइआरस्स ॥ १ ॥
जो मे वयाइआरो, नाणे तह दंसणे चरित्ते अ ।
सुहमो अ बायरो वा, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ २ ॥
दुविहे परिग्गहंमि, सावज्जे बहुविहे अ आरंभे ।
कारावणे अ करणे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ३ ॥

जं बद्धमिंदिएहिं, चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहिं।
रागेण व दोसेण व, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ४ ॥
आगमणे निग्गमणे, ठाणे चंकमणे अणाभोगे।
अभिओगे अ निओगे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ५ ॥
संका कंख विगिच्छा, पसंस तह संथवो कुलिंगीसु।
सम्मत्तस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ६ ॥
छक्कायसमारंभे, पयणे अ पयावणे अ जे दोसा।
अत्तट्ठा य परट्ठा, उभयट्ठा चेव तं निंदे ॥ ७ ॥
पंचण्हमणुव्वयाणं, गुणव्वयाणं च तिण्हमइयारे।
सिक्खाणं च चउण्हं, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ ८ ॥
पढमे अणुव्वयंमि, थूलगपाणाइवायविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ ९ ॥
वह बंध छविच्छेए, अइभारे भत्तपाणवुच्छेए।
पढमवयस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ १० ॥
बीए अणुव्वयंमि, परिथूलगअलियवयणविरइओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ ११ ॥
सहस्सा रहस्स दारे, मोसुवएसे अ कूडलेहे अ।
बीअवयस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ १२ ॥

वइए अणुव्वयंमि, थूलगपरदव्वहरणविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ १३ ॥
तेनाहड-प्पओगे, तप्पडिरूवे विरुद्धगमणे अ।
कूडतुलकूडमाणे, पडिकमे पक्खिअं सव्वं ॥ १४ ॥
चउत्थे अणुव्वयम्मि, निच्चं परदारगमणविरईओ।
आयरिअमप्पसत्थे इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ १५ ॥
अपरिग्गहिआ इत्तर, अणंगवीवाहतिव्वअणुरागे।
चउत्थवयस्सइआरे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ १६ ॥
इत्तो अणुव्वए पंचमम्मि, आयरिअमप्पसत्थंमि।
परिमाणपरिच्छेए, इत्थ पमायप्पसंगेणं ॥ १७ ॥
धण-धन्न-खित्तवत्थू, रुप्पसुवन्ने अ कुविअपरिमाणे।
दुपए चउप्पयम्मि, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ १८ ॥
गमणस्सउ परिमाणे, दिसासु उड्ढं अहे अ तिरिअं च।
वुड्ढि सइअंतरद्धा, पढमम्मि गुणव्वए निंदे ॥ १९ ॥
मज्जंमि असंसम्मि अ, पुप्फेअ फले अ गंध मल्ले अ।
उवभोगपरिभोगे, बीअम्मि गुणव्वए निंदे ॥ २० ॥
सचित्ते पडिबद्धे, अपोलि दुप्पोलिअं च आहारे।
तुच्छोसहिभक्खणया, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ २१ ॥

इंगालीवणसाडी, भाडीफोडी सुवज्जए कम्मं ।
वाणिज्जं चेव दंत—लक्खरसकेसविसविसयं ॥ २२ ॥
एवं खु जंतपिल्लण-कम्मं निल्लंछणं च दवदाणं ।
सरदहतलायसोसं, असईपोसं च वज्जिज्जा ॥ २३ ॥
सत्थग्गिमुसलजंतग-तणकट्ठे मंतमूल भेसज्जे ।
दिन्ने दवाविए वा, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ २४ ॥
ण्हाणुव्वट्टण वन्नग, विलेवणे सद्दरूवरसगंधे ।
वत्थासण आभरणे, पडिक्कमे पक्खिअं सव्वं ॥ २५ ॥
कंदप्पे कुक्कुइए, मोहरिअहिगरण भोगअइरित्ते ।
दंडम्मि अणट्ठाए, तइअम्मि गुणव्वए निंदे ॥ २६ ॥
तिविहे दुप्पणिहाणे, अणवट्ठाणे तहा सइविहूणे ।
सामाइअ वितह कए, पढमे सिक्खावए निंदे ॥ २७ ॥
आणवणे पेसवणे, सद्दे रूवे अ पुग्गलक्खेवे ।
देसावगासियम्मि, बीए सिक्खावए निंदे ॥ २८ ॥
संथारुच्चारविही, पमाय तह चेव भोअणाभोए ।
पोसहविहिविवरीए, तइए सिक्खावए निंदे ॥ २९ ॥
सच्चित्ते निक्खिवणे, पिहिणे ववएसमच्छरे चेव ।
कालाइक्कमदाणे, चउत्थे सिक्खावए निंदे ॥ ३० ॥

सुहिएसु अ दुहिएसु अ, जा मे अस्संजएसु अणुकंपा।
रागेण व दोसेण व, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ३१ ॥
साहूसु संविभागो, न कओ तवचरणकरणजुत्तेसु।
संते फासुअदाणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ३२ ॥
इहलोए परलोए, जीविअ मरणे अ आसंसपओगे।
पंचविहो अइआरो, मा मज्झ हुज्ज मरणंते ॥ ३३ ॥
काएण काइअस्स, पडिक्कमे वाइयस्स वायाए।
मणसा माणसिअस्स, सव्वस्स वयाइआरस्स ॥ ३४ ॥
वंदणवयसिक्खागा—रवेसु सन्नाकसायदंडेसु।
गुत्तीसु अ समिईसु अ, जो अइआरो अ तं निंदे ॥ ३५ ॥
सम्मदिट्ठी जीवो, जइ वि हु पावं समायरइ किं चि।
अप्पो सि होइ बंधो, जेण न निद्धंधसं कुणइ ॥ ३६ ॥
तं पि हु सपडिक्कमणं, सप्परिआवं सउत्तरगुणं च।
खिप्पं उवसामेई, वाहि व्व सुसिक्खिओ विज्जो ॥ ३७ ॥
जहा विसं कुट्ठगयं, मंतमूलविसारया।
विज्जा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निव्विसं ॥ ३८ ॥
एवं अट्ठविहं कम्मं, रागदोससमज्जिअं।
आलोअंतो अ निंदंतो, खिप्पं हणइ सुसावओ ॥ ३९ ॥

कयपावो वि मणुस्सो, आलोइय निंदिय गुरुसगासे ।
होइ अइरेगलहुओ, ओहरिअ—भरुव्व भारवहो ॥ ४० ॥
आवस्सएण एएण, सावओ जइ वि बहुरओ होइ ।
दुक्खाणमंतकिरिअं, काही अचिरेण कालेण ॥ ४१ ॥
आलोअणा बहुविहा, न य संभरिआ पडिक्कमण काले ।
मूलगुणउत्तरगुणे, तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ४२ ॥
तस्स धम्मस्स केवलिपन्नत्तस्स,
अब्भुट्ठिओमि आराहणाए, विरओमि विराहणाए ।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥ ४३ ॥
जावंति चेइआइं उड्ढे अ अहे अ तिरिअलोए अ ।
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ॥ ४४ ॥
जावंत केवि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे अ ।
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥ ४५ ॥
चिरसंचियपावपणासणीइ, भव-सय-सहस्स महणीए ।
चउव्वीसजिणविणिग्गय-कहाइ वोलंतु मे दिअहा ॥ ४६॥
मम मंगलमरिहंता, सिद्धा साहू सुअं च धम्मो अ ।
सम-दिट्ठी देवा, दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥ ४७ ॥
पडिसिद्धाणं करणे, किच्चाणमकरणे पडिक्कमणं ।
असद्दहणे अ तहा, विवरीयपरूवणाएअ ॥ ४८ ॥

खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणई ॥ ४९ ॥
एवमहं आलोइअ, निंदिअ गरहिअ दुगंछिअं सम्मं।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥ ५० ॥

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! मूलगुण-उत्तरगुण-अतिचार-विशुद्धिनिमित्तं काउस्सग्ग करूं? इच्छं।

(अब खड़े होकर बोलें)

करेमि भंते! सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जाव नियमं पज्जुवासामि। दुविहेणं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि। तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं, जो मे पक्खिओ अइयारो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उमग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो, असावगपाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ताचरित्ते सुए सामाइए। तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं

कसायाणं, पंचण्हमणुव्वयाणं तिण्हं गुणव्वयाणं चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोही-करणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं, निग्घायणट्ठाए, ठामि काउस्सग्गं।

(अन्नत्थ ऊससिएणं० बोलकर १२ बारह* लोगस्स का अथवा ४८ अड़तालीस नवकार का काउस्सग्ग करना पश्चात् पारकर प्रगट लोगस्स लोगस्स उज्जोअगरे० कहना।)

(अब बैठकर मुहपत्ति पडिलेहना और बादमे दो वांदना देना)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए अणुजाणह मे मिउग्गहं। निसीहि, अहोकायं कायसंफासं। खमणिज्जो भे किलामो। अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे पक्खो वइक्कंतो? जत्ता भे! जवणिज्जं च भे! खामेमि खमासमणो पक्खिअं वइक्कम्मं, आवसि-

* चउमासी प्रतिक्रमणमे (२०) बीस लोगस्स या अस्सी नवकार का काउस्सग्ग करना और संवत्सरी प्रतिक्रमणमे (४०) चालीस लोगस्स और एक नवकार, अथवा एक सो एकसठ नवकारकाउस्सग्ग करना।

आए, पडिक्कमामि खमासमणाणं, पक्खिआए, आसा
णाए, तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मणदुक्कडा
वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, माया
लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छोवयाराए, सव्वधम्म
इक्कमणाए, आसायणाए, जो मे अइआरो कओ, त
खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्प
वोसिरामि।

(पुनः उपरोक्त सूत्र पर्यंत दूसरी बार आवस्सिआए न कहें)

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! समाप्त खामणे
अब्भुट्ठिओमि, अब्भिंतर* पक्खिअं खामेउं? इ
खामेमि पक्खिअं, पन्नरसण्हं दिवसाणं, पन्नरसण्हं रा
जं किंचि अपत्तिअं परपत्तिअं भत्ते, पाणे, विणए, वे
वच्चे, आलावे, संलावे, उच्चासणे, समासणे, अंतरभ

* चउमासि प्रतिक्रमण में "चउमासिअं खामेउं? इ
खामेमि। चउमासिअं, चउण्हं मासाणं, अठ्ठण्हं पक्ख
वीसोत्तरसयं राइदिवसाणं" इस तरह बोलना और संवच्छरी प्र
क्रमण में "संवच्छरीअं खामेउं? इच्छं, खामेमि संवच्छ
दुवालसण्हं मासाणं चउवीसण्हंपक्खाणं, तिन्निसय
राईदिवसाण" इस तरह बोलना चाहिए।

साए, उवरिभासाए, जं किंचि मज्झ विणयपरिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह, अहं न जाणामि, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् पक्खि खामणा खामूं ? 'इच्छं' ।

(ऐसे कहकर नीचे मूजब चार खामणा देना)

१—इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ।

(पहेला गुरु खामणा खामूं ऐसा कहकर दाहिना हाथ चरवला या आसन पर रखकर मस्तक झुकाकर तीन नवकार बोले)

नमो अरिहंताणं, नमोसिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं, एसो पंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं ।

२—इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ।

आए, पडिक्कमामि खमासमणाणं, पक्खियाए, आसायणाए, तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छोवयाराए, सव्वधम्माइक्कमणाए, आसायणाए, जो मे अइआरो कओ, तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

(पुनः उपरोक्त सूत्र पढ़ें दूसरी बार आवस्सिआए न कहें)

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! समात्त खामणेणं अब्भुट्ठिओमि, अब्भितर* पक्खिअं खामेउं? इच्छं, खामेमि पक्खिअं, पन्नरसण्हं दिवसाणं, पन्नरसण्हं राईणं, जं किंचि अपत्तिअं परपत्तिअं भत्ते, पाणे, विणए, वेआवच्चे, आलावे, संलावे, उच्चासणे, समासणे, अंतरभा-

* चउमासि प्रतिक्रमणमे "चउमासिअं खामेउं? इच्छं, खामेमि। चउमासिअं, चउण्हं मासाणं, अठ्ठण्ह पक्खाणं बीसोत्तरसयं राइदिवसाणं" इस तरह बोलना और सवच्छरी प्रतिक्रमण मे "संवच्छरीअं खामेउं? इच्छं, खामेमि संवच्छरिअं, दुवालसण्हं मासाणं चउवीसण्हंपक्खाणं, तिन्निसयसट्ठि राइंदिवसाणं" इस तरह बोलना चाहिए।

साए, उवरिभासाए, जं किंचि मज्झ विणयपरिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह, अहं न जाणामि, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् पक्खि खामणा खामूं? 'इच्छं'।

(ऐसे कहकर नीचे मूजब चार खामणा देना)

१—इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि।

(पहेला गुरु खामणा खामूं ऐसा कहकर दाहिना हाथ चरवला या आसन पर रखकर मस्तक झुकाकर तीन नवकार बोले)

नमो अरिहंताणं, नमोसिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं, एसो पंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं।

२—इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि।

दूजा गुरु खामणा खामूं ऐसा कह कर सिर झुका तीन नवकार बोले।

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं, एसोपंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।

३—इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि।

तीजा गुरु खामणा खामूं कह सिर झुका कर तीन नवकार गिने।

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं, एसो पंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।

४—इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि।

चौथा गुरु खामणा खामूं कह सिर झुका कर तीन नवकार गिने।

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं

नमो उवज्झायाणं नमो लोए सव्वसाहूणं, एसो पंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।

'इच्छं' इच्छामो अणुसट्ठिं –पुण्यवंतो पाखी*के निमित्त एक उपवास, अथवा दो आयंबिल, अथवा तीन निवि, अथवा चार एकासना, अथवा दो हजार सज्झाय करी एक उपवास की पेठ पूरजो, और पक्खि के स्थान में देवसिय भणजो।

(यहाँ यथाशक्ति तप किया हो तो "पइट्ठियं" कहना और जिन्होंने तप न किया हो वे 'तहत्ति' कहे। अब दैवसिक प्रतिक्रमण में वंदित्तुसूत्र कहने के बाद जो विधि है इस मूजब कहना चाहिये।)

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए। अणुजाणह मे मिउग्गहं निसीहि, अहोकायं

* चउमासिय में इससे दूना अर्थात्—दो उपवास, चार आयबिल, छह निवि, आठ एकासना और चार हजार सज्झाय करी दो उपवास की पेठ पूरजो। संवच्छरीय में तिगुना—तीन उपवास, छह आयबिल, नो निवि बारह एकासणा और छह हजार सज्झाय करी तीन उपवास की पेठ पूरजो। इस प्रकार कहना।

कायसंफासं। खमणिज्जो भे किलामो। अप्पकिलताणं बहुसुभेण भे दिवसो वइक्कंतो ? जत्ता भे ? जवणिज्जं च भे ? खामेमि खमासमणो देवसिअं वइक्कम्मं, आवस्सि-आए पडिक्कमामि, खमासमणाण, देवसिआए आसाय-णाए, तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छोवयाराए, सव्वधम्मा-इक्कमणाए, आसायणाए, जो मे अइआरो कओ तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

(पुनः उपरोक्त सूत्र पढ़ें दूसरी बार आवस्सिआए न बोले।)

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! अब्भुट्ठिओमि अब्भिंतर देवसिअं खामेउं ? इच्छं, खामेमि देवसिअं जं किंचि अपत्तिअं परपत्तिअं भत्ते, पाणे विणए, वेयावच्चे, आलावे, संलावे, उच्चासणे, समासण अन्तरभासाए उवरिभासाए, जं किंचि मज्झ विणयपरिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह अहं न जाणामि तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए ? अणुजाणह मे मिउग्गहं । निसीहि अहोकायं कायसफासं खमणिज्जो भे किलामो । अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे दिवसो वइक्कंतो ? जत्ता भे ! जवणिज्जं च मे ! खामेमि खमासमणो ! देवसिअं वइक्कमं, आवस्सिआए, पडिक्कमामी खमासमणाणं, देवसिआए, आसायणाए, तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए, मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्वकालिआए, सव्वमिच्छो-वयाराए, सव्वधम्माइक्कमणाए, आसायणाए जो मे अइ-आरो कओ तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।

(पुनः वांदणा दे, दूसरो वार आवस्सिआए न कहे)

(अब खड़े होकर हाथ जोड कहना चाहिए)

आयंरिअ-उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुलगणे अ ।
जे मे केइ कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि ॥ १ ॥
सव्वस्स समणसंघस्स, भगवओ अंजलिं करिअ सीसे ।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयंपि ॥ २ ॥

सव्वस्स जीवरासिस्स, भावओ धम्मनिहिअनिअचित्तो।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयंपि ॥ ३ ॥

करेमि भंते सामाइअं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि। जावनियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं, जो मे देवसिओ अइआरो कओ, काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो, असावगपाउग्गो नाणे दंसणे चरित्ताचरित्ते सुए सामाइए। तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं, पंचण्हमणुव्वयाणं तिण्हं गुणव्वयाणं चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं, निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं।

(इसके बाद अन्नत्थ० बोले)

(दो लोगस्स का अथवा आठ नवकार का काउस्सग्ग करना पश्चात् पारकर प्रगट लोगस्स कहना।)

सव्वलोए अरिहंतचेइआणं करेमि काउस्सग्गं, वंदण वत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणव-त्तिआए बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए, सद्धाए, मेहाए, धिईए, धारणाए, अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं।

("अन्नत्थ ऊससिएणं" कहकर लोगस्स या चार नवकार का)
का काउस्सग्ग करना, पीछे—)

पुक्खरवरदिवड्ढे, धायइसंडे अ जंबुदीवे अ। भर-हेरवय विदेहे, धम्माइगरे नमंसामि ॥ १ ॥ तमतिमिर-पडलविद्धं-सणस्स सुरगणनरिंदमहियस्स। सीमाधरस्स वंदे, पप्फोडिअमोहजालस्स ॥ २ ॥ जाई-जरामरणसोग-पणासणस्स, कल्लाणपुक्खलविसालसुहावहस्स। को देव-दाणवनरिंदगणच्चिअस्स, धम्मस्स सारमुवलब्भ करे पमायं ॥ ३ ॥ सिद्धे भो पय ओ! णमो जिणमए नंदी सया संजमे, देवंनागसुवन्नकिन्नरगणस्सब्भूअभाव-च्चिए। लोगो जत्थ पइट्ठिओ जगमिणं तेलुक्कमच्चा-सुरं, धम्मो वड्ढउ सासओ विजओ धम्मुत्तरं वड्ढउ ॥ ४ ॥

सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं, वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए, सद्धाए मेहाए धिईए धारणाए अणुप्पेहाए, वड्ढमाणिए ठामि काउस्सग्गं।

(अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं बोलें)

(एक लोगस्स या चार नवकार का काउस्सग्ग करना, पीछे—)

सिद्धाणं बुद्धाणं पारगयाणं परंपरगयाणं लोअग्गमुवगयाणं, नमो सयासव्वसिद्धाणं ॥ १ ॥ जो ॱ। वि देवो, जं देवा पंजली नमंसंति। तं देवदेवमहिअं, सिरसा वंदे महावीरं ॥ २ ॥ इक्को वि नमुक्कारो, जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स। संसारसागराओ, तारेइ नरं व नारिं वा ॥ ३ ॥ उज्जितसेलसिहरे, दिक्खानाणं निसीहिआ जस्स। तं धम्मचक्कवट्टीं अरिट्ठनेमिं नमंसा[illegible] ॥ ४ ॥ चत्तारि अट्ठ दस दो य वंदिया जिणवरा चउव्वीसं। परमट्ठ निट्ठिअट्ठा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥

(सुअदेवआए करेमि काउस्सग्गं। अन्नत्थ ऊससिएणं बोलें।)

एक नवकार का काउस्सग्ग करना। पीछे 'नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः' २ सुअदेवयाः' की थुइ कहना)

कमलदल विपुलनयना कमलमुखी कमल गर्भ समगौरी।
कमले स्थिता भगवती ददातु श्रुतदेवता सौख्यम् ॥ १ ॥

(भुवनदेवयाए करेमि काउस्सग्गं। अन्नत्थ ऊससिएणं बोलें।)

(एक नवकार का काउस्सग्गं कर "नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः" कहकर भुवनदेवता की थुइ कहना)

ज्ञानादि—गुण-युतानां स्वाध्यायध्यान—सयमरतानाम्
विदधातु भुवन—देवी शिवं सदा सर्व साधुनाम् ॥ २ ॥

(खित्तदेवयाए करेमि काउस्सग्ग। अन्नत्थ ऊससिएण बोलें।)

(एक नवकार का काउस्सग्ग कर "नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः' कहकर क्षेत्रदेवता की थुइ कहना।)

यस्याः क्षेत्र समाश्रित्य साधुभिः साध्यते क्रिया
साक्षेत्र—देवता नित्यं भूयान्नः सुखदायिनी ॥ ३ ॥

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं, एसो पंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं।

(अब बैठकर छट्ठा 'आवश्यककी मुंहपत्ति पडिलेहुं ? ऐसा कहकर मुंहपत्ति पडिलेहना बाद में दो वन्दना देना दूसरी बार आवस्सिआए न कहना।)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए, अणुजाणह मे मिउग्गहं। निसीहि, अहोकायं, कायसंफासं खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे ! दिवसो वइक्कंतो ? जत्ता भे ! जवणिज्जं च भे ! खामेमि खमासमणो ! देवसिअं वइक्कम्मं आवस्सिआए पडिक्कमामि खमासमणाणं, देवसिआए आसायणाए तित्तीसन्नयराए, जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए लोभाए सव्वकालिआए, सव्वमिच्छोवयाराए, सव्वधम्माइक्कमणाए आसायणाए जो मे अइआरो कओ तस्स खमासमणो पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

"इच्छामो अणुसट्ठिं नमो खमासमणाणं, नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः"

(कहकर बायां घुटना खडाकर पुरुषवर्ग 'नमोऽस्तुवर्द्धमानाय' कहे और स्त्रीवर्ग 'संसारदावा' की तीन गाथा कहे)

नमोऽस्तु वर्द्धमानाय, स्पर्द्धमानाय कर्मणा। तज्जयावाप्त-मोक्षाय, परोक्षाय कुतीर्थिनां ॥ १ ॥ येषां विकचारविंद-राज्या, ज्यायः क्रमकमलावलिं दधत्या।

सद्दशैरिति संगतं प्रशस्यं, कथितं सन्तु शिवाय ते जिनेन्द्राः ॥२॥ कषायतापार्दितजन्तुनिर्वृ तिं, करोति यो जैनमुखाम्बुदोद्गतः । स शुक्रमासोद्भववृष्टिसन्निभो, दधातु तुष्टिं मयि विस्तरो गिराम् ॥३॥

संसारदावानलदाहनीरं, संमोहधूलीहरणे समीरं । मायारसादारणसारसीरं, नमामि वीरं गिरसारधीरं ॥१॥ भावावनामसुरदानवमानवेन, चूलाविलोलकमलावलि मालितानि । सम्पूरिताभिनतलोकसमीहितानि कामं नमामि जिनराजपदानि तानि ॥२॥ बोधागाधं सुपदपद-वीनीरपूराभिरामं, जीवाहिंसा-विरललहरी-संगमागाह-देहम् । चूलावेलं गुरुगममणी-संकुलं दूरपारं, सारं वीरा गमजलनिधिं सादरं साधु सेवे ॥३॥

(नमुत्थुणं अरिहंताणं बोलें ।)

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए मत्थएण वंदामि, इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! वृद्ध स्तवन भणुं ? इच्छं ।

(ऐसे कहकर 'नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः कहकर निम्नलिखित 'अजितशांति स्तवन' कहे)

अजितशांति स्तवन ।

अजिअं जिअसव्वभयं, संतिं च पसतसव्वगय
जयगुरुसंतिगुणकरे, दोवि जिणवरे पणिवयामि
गाहा । ववगयमंगुलभावे, ते-हं विउलतवनिम्मलस
निरुवमहमहप्पभावे, थोसामि सुदिट्ठसब्भावे
गाहा । सव्वदुक्खप्पसंतीणं, सव्वपावप्पसंतिणं,
अजिअसंतीणं, नमो अजिअसंतिणं ॥ ३ ॥ सिलं
अजियजिण ! सुहप्पवत्तणं, तव पुरिसुत्तम ! नामकि
तह य धिइमइप्पवत्तणं, तव य जिणुत्तम ! संति !
॥४॥ मागहिआ ॥ किरिआविहिसंचिअकम्मा
विमुक्खयरं, अजिअं निजिअं च गुणेहिं महामुणि
गयं । अजिअस्स य संति महामुणिणो वि य सं
सययं मम निव्वुइकारणयं च नमंसणयं ॥५॥ आलि
पुरिसा ! जइ दुक्खवारणं, जइ अ विमग्गह सुक्ख
अजिअं संतिं च भावओ, अभयकरे सरणं पवज्जह
मागहिआ ॥ अरइरइतिमिरविरहिअमुवरयजरमरणं
असुरगरुलभुयगवइपययपणिवइअं । अजिअमहम
सुनयनयनिउणमभयकरं, सरणमुवसरिअ भुविदिवि

सयमुवणमे ॥७॥ संगययं ॥ तं च जिणुत्तममुत्तमनित्तम-
सत्तधरं, अज्जवमद्दवखंतिविमुत्तिसमाहिनिहिं। संतिकरं
पणमामि दमुत्तमतित्थयरं, संतिमुणी मम संतिसमाहिवरं
दिसउ ॥८॥ सोवाणयं ॥ सावत्थिपुव्वपत्थिवं च वरह-
त्थिमत्थयपसत्थवित्थिन्नसंथिअं, थिरसरिच्छवच्छं मयग-
ललीलायमाणवरगंधहत्थिपत्थाणपत्थियं संथवारिहं।
हत्थिहत्थबाहुं धंतकणयरुअगनिरुवहयपिंजरं पवरलक्ख-
णोवच्चिअसोमचारुरूवं सुइसुहमणाभिरामपरमरमणिज्ज
वरदेवदुंदुहिनिनायमहुरयरसुहगिरं ॥ ६ ॥ वेड्डओ ॥
अजिअं जिआरिगणं, जिअसव्वभयं भवोहरिउं। पणमामि
अहं पयओ, पावं पसमेउ मे भयवं ॥ १० ॥ रासालु-
द्धओ ॥ कुरुजणवयहत्थिणाउरनरीसरो पढमं तओ महा-
चक्कवट्टिभोए, महप्पभाओ, जो बावत्तरिपुरवरसहस्सवर-
नगरनिगमजणवयवई, बत्तीसारायवरसहस्साणुआयमग्गो।
चउदसवररयणनवमहानिहिचउसट्ठिसहस्सपवरजुवईण सुंद-
रवई, चुलसीहयगयरहसयसहस्ससामी, छण्णवइगामको-
डिसामी आसिज्जो भारहंमि भयव ॥११॥ वेड्डओ ॥
तं संतिं संतिकरं, सतिण्ण सव्वभया। संतिं थणामि

जिणं, संतिं विहेउ मे भयवं ॥१२॥ रासानंदिअयं। इक्खाग ! विदेहनरीसर ! नरवसहा ! मुणिवसहा ! नवसारयससिसकलाणण ! विगयतमा ! विहुअरया ! अजिउत्तम ! तेअगुणेहिं महामुणि ! अमिअबला ! विउलकुला ! पणमामि ते भवभयमूरण ! जगसरणा ! मम सरणं ॥१३॥ चित्तलेहा ॥ देवदाणविंद चंदसूवंद ! हट्ठतुट्ठजिट्ठपरम, लट्ठरूव ! धंतरुप्प-पट्ट-सेअसुद्ध-निद्ध-धवल दंतपंति ! संतिसत्तिकित्तिमुत्तिजुत्तिगुत्ति पवर ! दित्ततेअ ! वंदधेअ ! सव्वलोअभाविअप्पभाव ! णेअ ! पइस मे समाहिं ॥१४॥ नारायओ ॥ विमलससिकलाइरेअसोमं, वितिमिरसूरकराइरेअतेअं। तिअसवइगणाइरेअरूवं, धरणिधरप्पवराइरेअसारं ॥१५॥ कुसुमलया ॥ सत्ते अ सया अजिअं, सारीरे अ बले अजिअं। तवसंजमे अ अजिअं, एस थुणामि जिणं अजिअं ॥१६॥ भुअगपरि-रिंगिअं ॥ सोमगुणेहिं पावइ न तं नवसरयससी, तेअगुणेहिं पावइ न तं नवसरयरवी। रूवगुणेहिं पावइ न तं तिअसगणवई, सारगुणेहिं पावइ न तं धरणिधरवई ॥१७॥ खिज्जिअयं ॥ तित्थवरपवत्तयं तमर-

यरहिअं, धीरजणथुअच्चिअं चुअकलिकलुसं। संतिसुह-प्पवत्तयं तिगरणपयओ, संतिमहं महामुणिं सरणमुवणमे ॥ १८ ॥ ललिअयं ॥ विणओणय सिरिरइअंजलि-रिसि-गणसंथुअं थिमिअं, विबुहाहिवधणवइनरवइथुअमहिअच्चिअं बहुसो। अइरुग्गयसरयदिवायर-समहिअसप्पभं तवसा, गयणंगणवियरणसमुइअ-चारणवंदिअं सिरसा ॥ १० ॥ किसलय-माला ॥ असुरगरुलपरिवंदिअं, किन्नरोरगनमसिअं। देवकोडिसयसंथुअं, समणसंघपरिवंदिअं ॥२०॥ सुमुहं ॥ अभयं अणहं, अरयं अरुअं। अजिअं अजिअं, पयओ पणमे ॥ २१ ॥ विज्जु-विलसिअं ॥ आगया वरविमाणदिव्वकणग-रहतुरयपहकरसएहिं हुलिअं। ससंभमोअरणखुभिअलुलिअचल—कुण्डलंग-यतिरीडसोहंतमउलिमाला ॥ २२ ॥ वेड्ढओ ॥ ज सुर-संघा सासुरसंघा, वेरविउत्ता भत्तिसुजुत्ता, आयरभूसि-असंभमपिंडिअ—सुट्ठुसुविम्हिअसव्वबलोघा। उत्तमकं-चणरयणपरूविअ—भासुरभूसणभासुरिअंगा, गायसमो-णय-भत्तिवसागय-पंजलिपेसियसीसपणामा ॥२३॥ रयण-माला। वंदिऊण थोऊण तो जिणं, तिगुणमेव य पुणो

पयाहिणं। पणमिऊण य जिणं सुरासुरा, पमुइआ
णाइं तो गया ॥२४॥ खित्तयं ॥ तं [illegible]
पंजली, रागदोसभयमोह-वज्जिअं। [illegible]
नरिंदवंदिअं, संतिमुत्तमं महातवं नमे
खित्तयं ॥ अंबरंतरविआरणिआहिं, [illegible] हंसव[illegible]
णिआहिं। पीणसोणिथणसालिणिआहिं, सकलक
लोअणिआहिं ॥२६॥ दीवयं ॥ पीणनिरंतरथण
मियगायलयाहिं, मणिकंचणपसिढिल[illegible]हि
तडाहिं, वर खिंखिणि णेउर सतिलयवलय [illegible]
आहिं रइकरचउरमणोहरसुंदरदंसणिआहिं।
चित्तक्खरा ॥ देवसुंदरीहिं पायवंदिआहिं, वं
जस्स ते सुविक्कमा कमा, अप्पणो निडालएहिं
णप्पगारएहिं केहि केहिं वि। अवंगतिलयपत्तलेह
च्चिल्लएहिं संगयंगयाहिं, भत्तिसंनिविट्ठवंदणागया
ते वंदिआ पुणो पुणो ॥ २८ ॥ नारायओ।
जिणचंद, अजिअं जिअमोहं। धुअसव्वकिलेसं,
पणमामि ॥ २६ ॥ नंदिअयं ॥ थुअवंदिअयस्स
गणदेवगणेहिं, तो देववहुहिं पयओ पणमिअस्सा

जगुत्तम सासणअस्सा, भत्तिवसागयपिंडिअयाहिं, देव-वरच्छरसाबहुआहिं सुरवररइगुणपंडिअआहिं ॥ ३० ॥ भासुरयं ॥ वंससद्दतंतितालमेलिए तिउक्खराभिरामसद्द-मीसए कए अ, सुइसमाणणे अ सुद्धसज्जगीअपायजाल-घंटिआहिं । वलयमेहलाकलावनेउराभिरामसद्दमीसए कए अ, देवनट्टिआहिं हावभावविब्भमप्पगारे एहिं नच्चि-ऊण अंगहारएहिं वंदिआ य जस्स ते सुविक्कमा कमा । तयं तिलोअ-सव्वसत्त संतिकारयं, पसंतसव्वपावदोसमेस हं, नमामि संतिमुत्तमं जिणं ॥३१॥ नारायओ । छत्त-चामरपडागजूअजवमंडिया, झयवरमगरतुरयसिरिवच्छ-सुलछणा । दीवसमुद्दमंदरदिसागयसोहिआ, सत्थि-अवसहसीहरहचक्कवरंकिया ॥३२॥ ललिअयं ॥ सहाव-लट्ठा समप्पइट्ठा, अदोसदुट्ठा गुणेहिं जिट्ठा । पसायसिट्ठा तवेण पुट्ठा, सिरीहिं इट्ठा रिसीहिं जुट्ठा ॥३३॥ वाण-वासिआ ॥ ते तवेण धुअसव्वपावया, सव्वलोअहिअमूल-पावया । संथुआ अजिअसंतिपायया, हुंतु मे सिवसुहाण-दायया ॥ ३४ ॥ अपरांतिका ॥ एवं तव बलविउलं, थुअं मए अजिअसंतिजिणजुअलं । ववगयकम्मरयमलं, गइं

गयं सासयं विउलं ॥ ३५ ॥ गाहा ॥ तं बहुगुणप्पसायं, मुक्खसुहेण परमेण अ विसायं । नासेउ मे विसायं, कुणउ अ परिसा वि अ प्पसायं ॥ ३६ ॥ गाहा ॥ तं मोएउ अ नंदिं, पावेउ अ नंदिसेणमभिनंदिं । परिसा वि य सुहनंदिं, मम य दिसउ संजमे नंदिं ॥ ३७ ॥ गाहा । पक्खिअ चाउम्मासिअ, संवच्छरिए अवस्स भणिअव्वो । सोअव्वो सव्वेहिं, उवसग्गनिवारणो एसो ॥ ३८ ॥ जो पढ़इ जो अ निसुणइ, उभओकालंपि अजिअसंतिथयं । न हु हुंति तस्स रोगा, पुव्वुप्पन्ना विनासंति ॥ ३९ ॥ जइ इच्छह परमपयं, अहवा किर्त्ति सुवित्थडं भुवणे । ता तेलुक्कुद्धरणे, जिणवयणे आयरं कुणह ॥ ४० ॥ गाहा ॥

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । श्री आचार्यजी मिश्र ।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । उपाध्यायजी मिश्र ।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । सर्वसाधुजी मिश्र ।

(अब खड़े होकर बोलना चाहिये)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! देवसिअपायच्छित्तविसोहणत्थं काउस्सग्गं करूं ? इच्छं । देवसिअपायच्छित्तविसोहणत्थं करेमि काउस्सग्गं ।

(यहां पर अन्नत्थ ऊससीएणं० बोलकर चार लोगस्स या सोलह नवकार का काउस्सग्गं कर प्रगट लोगस्स कहना । लोगस्स उज्जोअगरे पढ़ें ।)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् खुद्दोपद्दव उड्डावणनिमित्तं करेमि काउस्सग्गं ।

(यहां पर अन्नत्थ ऊससीएणं बोलकर चार लोगस्स या सोलह नवकार का काउस्सग्गं करना फिर प्रगट लोगस्स बोलना ।)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! चैत्यवंदन करुं ? इच्छं ।

श्री सेढीतटिनोतटे पुरवरे श्रीस्तम्भने स्वर्गिरौ, श्रीपूज्याभयदेवसूरिविबुधा-धीशैः समारोपितः । संसिक्तः स्तुति भिर्जलैः शिवफलैः स्फुर्जत्फणापल्लवः, पार्श्वः कल्पतरुः स मे प्रथयतां नित्यं मनोवाँछितम् ॥१॥ आधि-

व्याधिहरो देवो जीरावल्ली शिरोमणिः। पार्श्वनाथो जगन्नाथो, नतनाथो नृणां श्रिये ॥२॥

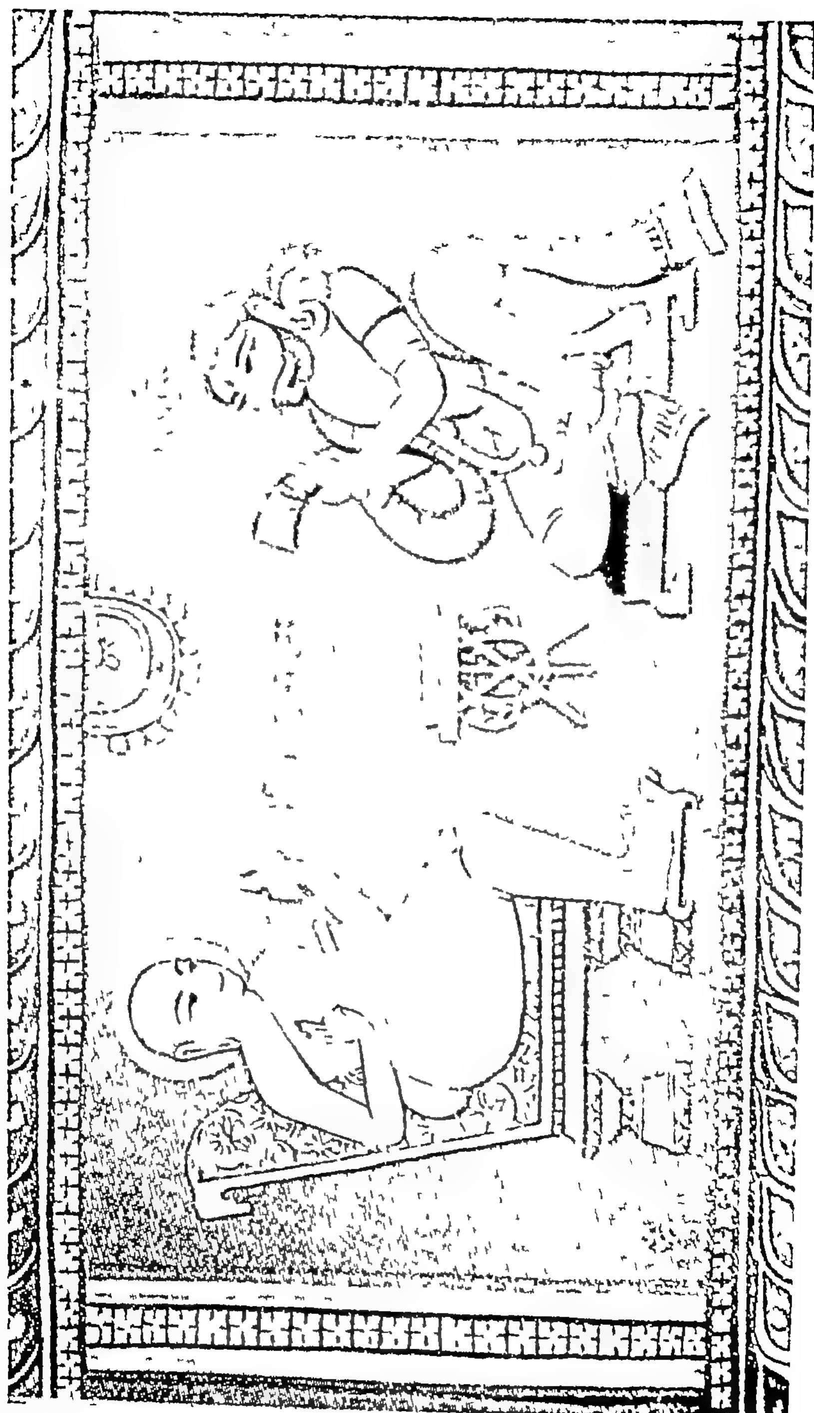
(नमोत्थुणं अरिहंताणं बोलें।)

जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरि अ लोए अ।
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ॥ १ ॥
जावंत के वि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे अ।
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरआणं।
नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः।

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं। विसहरविसनिन्नासं, मंगलकल्लाणआवासं ॥ १ ॥ विसहरफुल्लिंगमंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ। तस्स गहरोगमारी, दुट्ठजरा जंति उवसामं ॥ २ ॥ चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ। नरतिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्खदोगच्चं ॥ ३ ॥ तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणिकप्पपायवब्भहिए। पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं ॥ ४ ॥ इअ संथुओ महायस, भत्तिब्भरनिब्भरेण हिअएण। ता देव! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पासजिणचंद ॥ ५ ॥



दादा साहेब श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराज



जय वीयराय ! जगगुरु !, होउ ममं तुह पभावओ भयवं। भवनिव्वेओ मग्गाणुसारिआ इट्ठफलसिद्धी ॥१॥ लोगविरुद्धच्चाओ, गुरुजणपूआ परत्थकरणं च। सुहगुरु-जोगो तव्वयणसेवणा आभवमखंडा ॥ २ ॥

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए मत्थएण वंदामि।

सिरि-थंभणय-ठिय-पाससामिणो सेस तित्थसामीणं। तित्थसमुन्नइकारणं, सुरासुराणं च सव्वेसिं ॥ १ ॥ एसि-महं सरणत्थं, काउस्सग्गं करेमि सत्तीए। भत्तीए गुण-सुट्ठियस्स, संघस्स समुन्नइ-निमित्तं ॥ २ ॥ श्रीथंभण-पार्श्वनाथजी आराधवा निमित्तं करेमि काउस्सग्गं ॥

(अब खड़े होकर बोलना चाहिये)

वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहिलाभवत्तिआए, निरुवसग्गवत्ति-आए, सद्धाए, मेहाए, धिईए, धारणाए, अणुप्पेहाए, वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं।

(इसके बाद अन्नत्थ ऊससोएणं बोलें। सोलह नवकार का काउस्सग्ग करके लोगस्स बोलें।)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए नि
हिआए मत्थएण वंदामि । श्रीचौरासीगच्छ शृं॥ ..।
जंगमयुगप्रधान भट्टारक चारित्र चूड़ामणि दादा श्री जि
नदत्तसूरिजी आराधवा निमित्तं करेमि काउस्सग्गं ।

(अन्नत्थ ऊससिएणं बोलकर सोलह नवकार का ..उस्स
करना फिर प्रगट लोगस्स कहना ।)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी
हिआए मत्थएण वंदामि । श्रीचौरासीगच्छ शृं॥ ..।
जंगमयुगप्रधान भट्टारक चारित्रचूड़ामणि दादा श्री
कुशलसूरिजी आराधवा निमित्तं करेमि काउस्सग्गं ।

(अन्नत्थ ऊससिएणं बोलकर सोलह नवकार का .. उस्स
एवं प्रगट लोगस्स कहे ।)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी
हिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह
चैत्यवंदन करूं ? 'इच्छं' ।

चउक्कसायपडिमल्लुल्लूरणू, दुज्जयमयणबाणमुसुमूरणू
सरसपिअंगुवन्नुगयगामिउ, जयउ पासु भुवणत्तय. ..
॥ १ ॥ जसु तणुकंतिकडप्पसिणिद्धउ । सोहइ ..

मणिकिरणा लिद्धउ । नं नवजलहरतडिल्लयलंछिउ, सो जिणु पासु पयच्छउ वंछिउ ॥ २ ॥

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता, आचार्या—जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः । श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः, पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मंगलम् ॥ १ ॥

इसके बाद णमोत्थुणं बोले

जावंति चेइआइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअ लोए अ । सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइ ॥ १ ॥

जावंत केवि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे अ । सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥ १ ॥

इसके बाद "उवसग्गहरं" बोले।

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ।

जय वीयराय जगगुरु ! होउ ममं तुह पभावओ भयवं ! भवनिव्वेओ मग्गाणुसारिआ इट्ठफलसिद्धी ॥१॥

लोगविरुद्धच्चाओ, गुरुजणपूआ परत्थकरणं च । सुहगुरुजोगो तव्वयण सेवणा आभवमखंडा ॥ २ ॥

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ॥

बड़ी शांति ।

भो भो भव्याः शृणुत वचनं प्रस्तुतं सर्वमेतद्,
ये यात्रायां त्रिभुवनगुरोरार्हतां भक्तिभाजः ॥
तेषां शान्ति र्भवतु भवतामर्हदादिप्रभावा—
दारोग्य-श्रीधृतिमतिकरी क्लेशविध्वंसहेतुः १

भो भो भव्यलोका ! इह हि भरतैरावतविदेहसंभवानां समस्ततीर्थकृतां जन्मन्यासनप्रकम्पानन्तरमवधिना विज्ञाय, सौधर्माधिपतिः सुघोषाघंटाचालनानन्तरं सकलसुरा सुरेन्द्रैः सह समागत्य सविनयमर्हद्भट्टारकं गृहीत्वा गत्वाकनकाद्रिशृंगे, विहितजन्माभिषेकः शान्तिमुद्घोषयति । ततोऽहं कृतानुकारमिति कृत्वा महाजनो येन गतः स पन्थाः । इति भव्यजनैः सह समागत्य स्नात्रपीठे स्नात्रं विधाय, शांतिमुद्घोषयामि । तत्पूजा यात्रास्नात्रादिमहोत्सवानन्तरमिति कृत्वा कर्णं द॰ निशम्यतां निशम्यतां स्वाहा ।

ॐ पुण्याहं पुण्याहं प्रीयन्तां प्रीयन्तां ो हन्तः सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनस्त्रिलोकनाथा-स्त्रिलोकमहिता स्त्रिलोक्यपूज्या-स्त्रिलोकेश्वरास्त्रिलोकोद्योतकराः ।

ॐ श्रीकेवलज्ञानि-निर्वाणी सागर-महायश-विमल-सर्वानुभूति-श्रीधर-दत्त-दामोदर-सुतेजस्वामि-मुनिसुव्रत-सुमति-शिवगति-अस्ताग-नमीश्वर-अनिल-यशोधर-कृतार्थ-जिनेश्वर-शुद्धमति-शिवकर-स्यन्दन-सम्प्रति इति एते अतीतचतुर्विंशतितीर्थङ्कराः ।

ॐ श्रीऋषभ-अजित-संभव-अभिनंदन-सुमति-पद्मप्रभ-सुपार्श्व-चन्द्रप्रभ-सुविधि-शीतल-श्रेयांस-वासुपूज्य-विमल-अनन्त-धर्म-शान्ति-कुन्थु-अर-मल्लि-मुनिसुव्रत-नमि-नेमि-पार्श्व-वर्द्धमान इति एते वर्त्तमानजिनाः ।

ॐ श्रीपद्मनाभ-शूरदेव-सुपार्श्व-स्वयंप्रभ-सर्वानुभूति-देवश्रुत-उदय-पेढाल-पोट्टिल-शतकीर्ति-सुव्रत-अमम-निष्कषाय-निष्पुलाक-निर्मम-चित्रगुप्त-समाधि-संवर-यशोधर-विजय-मल्लि-देव-अनन्तवीर्य-भद्रंकर इति एते भावि तीर्थङ्कराः जिनाः । शान्ताः शान्तिकरा भवन्तु ।

ॐ मुनयो मुनिप्रवरा रिपुविजयदुर्भिक्षकान्तारेषु दुर्गमार्गेषु रक्षन्तु वो नित्यम् ।

ॐ श्रीनाभि जितशत्रु जितारि संवर मेघ धर प्रतिष्ठ महासेन सुग्रीव दृढ़रथ विष्णु वासुपूज्य कृतवर्म सिंहसेन

भानु विश्वसेन सूर सुदर्शन कुम्भ सुमित्र विजय समुद्रविजय अश्वसेन सिद्धार्थ इति एते वर्त्तमानचतुर्विंशतिजिन जनकाः।

ॐ श्रीमरुदेवी विजया सेना सिद्धार्था सुमङ्गला सुसीमा पृथिवीमाता लक्ष्मणा रामा नन्दा विष्णु जया श्यामा सुयशा सुव्रता अचिरा श्री देवी प्रभावती पद्मा वप्रा शिवा वामा त्रिशला इति एते वर्त्तमानजिनजनन्यः।

ॐ श्रीगोमुख महायक्ष त्रिमुख यक्षनायक तुम्बरु कुसुम मातंग विजय अजित ब्रह्मा यक्षराज कुमार षण्मुख पाताल किन्नर गरुड़ गन्धर्व यक्षराज कुवेर वरुण भृकुटि गोमेध पार्श्व ब्रह्मशान्ति इति एते वर्त्तमान जिनयक्षाः।

ॐ श्रीचक्रेश्वरी अजितबला दुरितारि काली महाकाली श्यामा शान्ता भृकुटि सुतारका अशोका मानवी चण्डा विदिता अंकुशा कन्दर्पा निर्वाणी बला धारणी धरणप्रिया नरदत्ता गान्धारी अम्बिका पद्मावती सिद्धायिका इति एते वर्त्तमानचतुर्विंशतितीर्थङ्करशासनदेव्यः।

ॐ ह्रीं श्रीं धृति मति कीर्ति कांति बुद्धि लक्ष्मी मेधा विद्या साधन प्रवेश निवेशनेषू सुगृहीतनामानो जयंतु

ते जिनेन्द्राः । ॐ रोहिणी प्रज्ञप्ति वज्रशृंखला वज्रांकुशी चक्रेश्वरी पुरुषदत्ता काली महाकाली गौरी गान्धारी सर्वास्त्र महाज्वाला मानवी वैरोट्या अछुप्ता मानसी महामानसी एता षोडश विद्यादेव्यो रक्षन्तु मे स्वाहा । ॐ आचार्योपाध्यायप्रभृतिचातुर्वर्ण्यस्य श्रीश्र-मणसंघस्य शान्तिर्भवतु । ॐ तुष्टिर्भवतु पुष्टिर्भवतु । ॐ ग्रहाश्चन्द्रसूर्यांगारकबुध बृहस्पतिशुक्रशनैश्चरराहुकेतुसहिताः सलोकपालाः सोम यम वरुण कुबेर वासवादित्य स्कन्द विनायकोपेता ये चान्येऽपि ग्रामनगर क्षेत्रदेवतादयस्ते सर्वे प्रीयन्तां प्रीयन्तां अक्षीण कोष कोष्ठागारा नरपतयश्च भवन्तु स्वाहा । ॐ पुत्र मित्र भ्रातृ कलत्र सुहृद् स्वजन सम्बंधि बंधुवर्गसहिता नित्यं चामोदप्रमोदकारिणो भवंतु । अस्मिंश्च भूमण्डले आयतननिवासिनां साधुसाध्वी श्रावक श्राविकाणां रोगोपसर्गव्याधि दुःखदुर्भिक्षदौर्मनस्योपशमनाय शान्तिर्भवतु ॥ ॐ तुष्टि-पुष्टि ऋद्धि वृद्धि मांगल्योत्सवाः भवंतु । सदा प्रादुर्भूतानि (दुरितानि) पापानि शाम्यन्तु शत्रवः पराङ्मुखा भवन्तु स्वाहा । श्रीमते शान्तिनाथाय, नमः शान्ति-विधायिने ।
त्रैलोक्यस्यामराधीश - मुकुटाभ्य - र्चितांघ्रये ॥ १ ॥

शान्तिः शान्तिकरः श्रीमान् शान्तिंदिशतु मे गुरुः। शांतिरेव सदा तेषां, येषां शान्तिगृहे गृहे ॥ २ ॥ ॐ उन्मृष्टरिष्टदुष्टग्रहगतिदुःस्वप्नदुर्निमित्तादि। सम्पादित-हितसम्पन्नामग्रहणो जयति शान्तेः ॥३॥ श्रीसंघपौरजनपद, राजाधिपराजसन्निवेशानाम्। गोष्ठिकपुरमुख्याणां व्याहरणैर्व्याहरेच्छान्तिम् ॥४॥ श्रीश्रमणसंघस्य शान्ति-र्भवतु, श्रीपौरलोकस्य शान्तिर्भवतु, श्रीजनपदानां शान्तिभवतु, श्रीराजाधिपानां शान्तिर्भवतु, श्रीराज-सन्निवेशानां शान्तिर्भवतु, श्रीगोष्ठिकानां शान्तिर्भवतु, ॐ स्वाहा ॐ स्वाहा ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथाय स्वाहा। एषा शान्तिः प्रतिष्ठायात्रास्नात्राद्यवसानेषु शान्ति-कलशं गृहीत्वा कुंकुमचन्दनकर्पूरागरुधूपवासकुसुमांजलि-समेतः स्नात्रपीठे श्रीसंघसमेतः शुचिशुचिवपुःपुष्पवस्त्र चन्दनाभरणालंकृतः चंदनतिलकं विधाय पुष्पमालां कंठे कुत्वा शांतिमुद्घोषयित्वा शान्तिपानीयं मस्तके दातव्य-मिति। नृत्यन्ति नित्यं मणिपुष्पवर्षं, सृजन्ति गायन्ति च मङ्गलानि। स्तोत्राणि गोत्राणि पठन्ति मंत्रान्, कल्याणभाजो हि जिनाभिषेके ॥१॥ अहं तित्थयरमाया,

सिवादेवी तुम्हनयरनिवासिनी। अम्ह सिवं तुम्ह सिवं, असिवोवसमं सिवं भवतु स्वाहा ॥ २ ॥ शिवमस्तु सर्व-जगतः, परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः। दोषाः प्रयान्तु नाशं, सर्वत्र सुखीभवन्तु लोकाः ॥ ३ ॥ उपसर्गाः क्षयं यान्ति, छिद्यन्ते विघ्नवल्लयः। मनः प्रसन्नतामेति, पूज्य-माने जिनेश्वरे ॥ ४ ॥ सर्वमंगलमांगल्यं, सर्वकल्याणकार-णम्। प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयति शासनम् ॥

(दीपक या बिजली का प्रकाश शरीर पर गिरा हो या कोई दोष लगा हो तो 'इरियावहि' तस्स उत्तरी० अन्नत्थ० कहकर एक लोगस्स का काउस्सग्ग करके प्रगट लोगस्स कहकर पीछे सामायिक पारे।)

सामायिक पारने की विधि।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! सामायिक पारवा मुहपत्ति पडिलेहूं ? 'इच्छं'।

(यहां पर मुहपत्ति की पडिलेहन करे, पीछे)

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामायिक पारूं ? यथाशक्ति।

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भग-वन् सामायिक पारेमि ? तहत्ति !

(आधा अंग नमाकर तीन नवकार पढ़े। पीछे घुटने टेक कर शिर नमाकर नीचे मुजब 'भयवंदसण्ण-भद्दो' कहे)।

भयवं दसण्णभद्दो, सुदंसणो थूलभद्द वइरो य। सफलीकयगिहचाया, साहू एवं विहा हुंति ॥ १ ॥ साहूण वंदणेण, नासइ पावं असकिया भावा। फासुअदाणे निज्जर, अभिग्गहो नाणमाईणं ॥ २ ॥ छउमत्थो मूढ़-मणो, कित्तियमित्तंपि संभरइ जीवो। जं च न संभरामि अहं, मिच्छामि दुक्कडं तस्स ॥ ३ ॥ जं जं मणेण चिंतिय-मसुहं वायाइ भासियं किंचि। असुहं काएण कयं, मिच्छामि दुक्कडं तस्स ॥४॥ सामाइय-पोसहसं॰ जीवस्स जाइ जो कालो। सो सफलो बोधव्वो, संसारफलहेउ ॥ ५ ॥

सामायिक विधि से लिया, विधि से किया, करते अविधि आशातना लगी हो, दश मन का, ५२

वचन का, बारह काया का, बत्तीस दूषण में से जो कोई दूषण लगा हो, वह सब मन, वचन, काया करके मिच्छामि दुक्कडं ।

॥ अथ इरियावही ॥

प्रतिक्रमण करते समय यदि दीपक बिजली आदि अग्नि का प्रकाश अपने शरीर पर आ गया हो, या बरसात आदि के पानी की बूँद लग गई हो, अथवा सचित्त वस्तु का संघट्टा हो गया हो तो इरियावहि करके सामायिक पारे—

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरियावहियं पडिक्कमामि ? इच्छं, इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए, गमणागमणे पाणक्कमणे बीयक्कमणे हरियक्कमणे, ओसा उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कडा संताणा संकमणे, जे मे जीवा, विराहिआ, एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया वत्तिया लेसिया संघाइया संघट्टिया परियाविया किलामिया उद्दविया ठाणाओ ठाणं संकामिया जीवियाओ ववरोविया तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

तस्स उत्तरी करणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, ... करणेणं विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं निग्घा... ठामि काउस्सग्गं ॥

(इसके बाद अन्नत्थ ऊससिएणं बोलें।)

(यहा पर एक लोगस्स या चार नवकार का काउत्सग्ग कर

(इसके बाद लोगस्स उज्जोअगरे बोलें।)

अथ छींक दोष निवारण विधि ॥

पाक्षिक, चातुर्मासिक और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करते . यदि छींक हो जाय तो याने "पक्खिग्य ... पडिलेहुं" यहां से "पक्खिा समाप्त खाम पर्यन्त के बोच में छींक हो जाय तो लिखे मुजब दोष निवा. तोन काउस्सग्ग करना प्रथम बार :—

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए नि स हिआए मत्थएण वंदामि। इच्छाकारेण संदिसह भ वन् 'अपशकुन दुर्निमित्त उहडावण निमित्तं करेमि स्सग्गं।

(अन्नत्थ उससिएणं बोलें)

यहाँ पर एक नवकार का काउस्सग कर पीछे काउस्सग पार प्रगट कर एक नवकार कह कर बाद में नीचे का श्लोक और डावे पग से भूमि दबाना—

उन्मृष्टरिष्टदुष्ट-ग्रहगति-दुस्वप्नदुर्निमित्तादि ।
संपादितहितसंपत् नामग्रहणं जयति शान्तेः ॥१॥

दूसरी बार अपशकुन० अन्नत्थ कहकर दो नवकार का काउस्सग्ग करे पीछे प्रगट दो नवकार कहना और उन्मृष्ट बोलना ॥ २ ॥

तीसरी बार अपशकुन० अन्नत्थ० कहकर तीन नवकार का काउस्सग करना पीछे प्रगट तीन नवकार कहकर बाद में उन्मृष्ट० कहना ॥ ३ ॥ *सम्पूर्ण प्रतिक्रमण करने के बाद दोष निवारण काउस्सग करके सामायिक पारे ॥ इति छींक दोष निवारण विधि ॥

अथ मार्जारि दोष निवारण विधि ॥

देवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक और सावत्सरिक प्रतिक्रमण करते समय यदि मंडल के बीच में से बिल्ली उल्लंघन करे तो नीचे लिखे मुजब दोष निवारणार्थ तीन काउस्सग करना प्रथम बार—

इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि । इच्छाकारेण संदिसह भग-

* नवर पाक्षिकप्रतिक्रमणे क्षुत्करणे पचदश दिनानि यावत् विशेपतस्तप. कार्यं । एव चातुर्मासिक प्रतिक्रमणे क्षुत्करणे चतुरो मासान्, सावत्सरिक प्रतिक्रमणे क्षुत्करणे वर्ष यावत् विशेषतस्तपः कार्यं इति समाचारी शतकम् ॥

वन् ! "अपशकुन दुर्निमित्त उहडावन निमित्तं करेमि काउस्सग्गं ।"

(इसके बाद अन्नत्थ ऊससिएणं बोलें ।)

यहाँ पर एक नवकार का काउस्सग कर पीछे काउस्सग पारकर प्रगट एक नवकार कहकर बाद में नीचे की गाथा कहना और डावे पग से भूमि दबाना—

जा सा कालीकब्बरी, अखिहिं कक्कडियारी ।
मंडलमांहिं संचरीय, हय पडिहय मज्जारि ॥

पग से भूमि दबाते समय "हय पडिहय मज्जारि" ये पद तीन बार बोलना ॥ १ ॥

दूसरी बार अपशकुन० अन्नत्थ० कहकर दो नवकार काउस्सग्ग करे पीछे प्रगट दो नवकार कहना और जा सा० गाथा कहना ॥ २ ॥

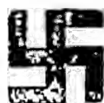
तीसरी बार अपशकुन० अन्नत्थ० कह कर तीन नवकार का काउस्सग्ग करना पीछे प्रगट तीन नवकार कहकर बाद में "जा सा०" गाथा कहना ॥३॥ सम्पूर्ण प्रतिक्रमण करने के बाद दोष निवारण काउस्सग्ग करके सामयिक पारे ॥ इति मार्जारि दोष निवारण विधि ॥

❀ इति-पक्खी-प्रतिक्रमण-विधि-समाप्त ❀

दासानुदासा इव सर्व्वदेवा, यदीयपादाब्जतले लुठन्ति ।
मरुस्थली कल्पतरुः स जीयाद्, युगप्रधानो जिनदत्तसूरि ॥१॥

दादा गुरु स्तवन

कुशल गुरुदेव के दर्शन, मेरा दिल होत हैं परसन ।
जगतमें आप ससो न कोई, न देखा नयन भर जोई ॥१॥
विरुद भूमंडले छाजै, फरसतां पाप सहु भाजे ।
पूजतां संपदा पावे, अचिंती लक्ष्मी घर आवे ॥२॥
इके मुखे गुण कहुं केता, मुझ हिये ज्ञान नहीं एता ।
लालचंदको अरज सुन लीजे, चरणकी सेव मोहि दीजै ॥३॥



पौषध-विधि



आठ पहरी—पौषध—विधि

पोसह के उपगरण लेकर उपाश्रयमें जावें, वहाँ गुरुमहाराज का संयोग न हो तो सामायिककी विधि अनुसार स्थापनाचार्यकी स्थापना करके विधिपूर्वक वंदन करें। पीछे खमासमण पूर्वक 'इरियावहियं' ःढ़ एक लोगस्सका काउस्सग्ग करके प्रकट लोगस्स कहे पीछे खमासमण देकर 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् पोसह मुहपत्ति पडिलेहुँ ? इच्छं' ऐसा कहकर मुहपत्ति पडिलेहना करे। पश्चात् खमासमण पूर्वक 'इच्छाकारे संदिसह भगवन्! पोसह संदिसाहु ? इच्छं' फिर । समण पूर्वक 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! ठाउं ? इच्छं' कहकर खमासमण देकर खड़े हो जा। और हाथ जोड़कर, आधा अंग नमाकर, तीन । गिने। पीछे "इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! पस। करी पोसह दंडक उच्चरावोजी" ऐसा बोलकर



प्रगट प्रभावी दादा साहब श्रीजिनकुशलसूरिजी



चतुर्थ दादा युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि और सम्राट अकबर आदि

लिखा हुआ पोसहका पच्चक्खाण तीन वार बड़े आदमी से उच्चरे या स्वयं उच्चर ले।

पोसहका पच्चक्खाण।

करेमि भंते! पोसहं, आहार पोसहं, देसओ सव्वओ वा, सरीरसक्कार—पोसहं। सव्वओ बंभचेर—पोसहं। सव्वओ अव्वावारपोसहं। सव्वओ चउव्विहे पोसहे। सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव*अहोरत्तिं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं, मणेणं वायाए काएणं, न करेमि, न कारवेमि, तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

पीछे इच्छं 'इच्छामि० इच्छा० सामायिक मुहपत्ति पडिलेहुँ? इच्छं,' कहकर खमासमण देकर मुहपत्ति पडिलेहन करे। पीछे 'इच्छामि० इच्छा० सामायिक संदिसाहुं? इच्छं'। 'इच्छामि० इच्छा० सामायिक ठाउं? इच्छं' कहकर, खमासमण देकर, खड़े हो, तीन नवकार गिने। पीछे "इच्छाकारेण संदिसह भगवन्!

* सिर्फ दिन का पौषध लेना हो तो 'जावदिवस,' दिन-रात का करना हो तो 'जावमहोरत्तिं' और सिर्फ रात का करना हो तो 'जावसेस दिवसरत्तीं' कहना चाहिये।

सामायिक दंडक उच्चरावोजी" ऐसा बोलकर ' `‍
भंते सामाइयं' का पाठ तीन वार उच्चरे, इसमें '
नियमं' की जगह 'जाव पोसहं,' बोले। (यहाँ इरिया
वहियं न बोले) पीछे 'इच्छामि० इच्छा० बेसणो संदि
साहुँ ? इच्छं,' 'इच्छामि० इच्छा० बेसणो ठाउं
इच्छं'। 'इच्छामि० इच्छा० सज्झाय करूं ? इच्छं,
कह कर खमासमण देकर खड़े-हो-खड़े आठ ..
गिने। पश्चात् शीत आदि परिषह निवारण के लि
वस्त्र की आवश्यकता हो तो 'इच्छामि० इच्छा० ..र
संदिसाहुँ ? इच्छं'। 'इच्छामि० इच्छा० पंगुरण पडिग्गहुँ
'इच्छं' ऐसा कहकर वस्त्र ग्रहण करे। पश्चात् 'इच्छामि
इच्छा० बहुवेलं संदिसाहुँ ! इच्छं'। 'इच्छामि० इच्छा
बहुवेलं करूं ? इच्छं,' इस प्रकार पौषध लेकर राई
क्रमण पहले नहीं किया हो तो करें, किन्तु इसमें च
थुई के देववन्दन के बाद नमोत्थुणं कहकर खमास
पूर्वक 'बहुवेलं,' का आदेश लेकर पीछे आचार्यजी
इत्यादि कहे। प्रतिक्रमण पूरा होने के बाद, पडिलेहन
नीचे लिखी विधि के अनुसार करे।

पडिलेहण विधि ।

खमासमण देकर इरियावहियं० तस्सउत्तरी० अन्नत्थ कहकर, एक लोगस्सका काउस्सग्ग करके, प्रकट लोगस्स कहे । पीछे 'इच्छामि० इच्छा० अंगपडिलेहन संदिसाहुँ ? इच्छामि० इच्छा० पडिलेहन करूं ? इच्छं,' कहकर मुहपत्ति पडिलेहे । पीछे 'इच्छामि० इच्छा० अंगपडिलेहन संदिसाहुँ ? इच्छं, इच्छामि० इच्छा० अंगपडिलेहनकरूं ? इच्छं,' कहकर धोती और कटीसूत्र (कन्दोरा) पडिलेहे । पीछे 'इच्छामि० इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! पसाय करी पडिलेहण पडिलेहावोजी ? इच्छं' ऐसा कहकर स्थापनाचार्य की पडिलेहना 'शुद्धस्वरूप धारे' का पाठ पूर्वक करके ऊँचे स्थान पर रक्खे । पश्चात् इच्छामि० इच्छा० उपाधि मुहपत्ति पडिलेहुँ ? इच्छं' कहकर मुहपत्ति पडिलेहे । पश्चात् 'इच्छामि० इच्छा० उपधि पडिलेहन संदिसाहुँ ? इच्छं' इच्छामि० इच्छा० उपधि पडिलेहन करूं ? इच्छं,' कहकर कंबल, वस्त्र आदि सब वस्तुएँ पडिलेहे । पश्चात् पौषधशाला की प्रमार्जना करके कचरे को जयणा पूर्वक परठे । पीछे खमासमण देकर इरिया-

वहियं० तस्स उत्तरी० अन्नत्थ० कहकर एक लोगस्स काउस्सग्ग करके प्रगट लोगस्स कहे। पीछे 'इच्छामि इच्छा० सज्झाय संदिसाहुँ ? इच्छामि० इच्छं सज्झा करूँ ? इच्छं', कहकर एक नवकार गिने। पीछे 'उ देशमाला' की सज्झाय कहकर फिर एक नवकार गिने

उपदेशमाला-सज्झाय।

जग चूड़ामणिभूओ, उसभो वीरो तिलोय सि
लओ। एगो लोगाइच्चो, एगो चक्खू तिहुअणस्स ॥१
संवच्छरमुसभजिणो, छम्मासे वद्धमाणजिणचंदो।
विहरिया निरसणा, जए ज्जए ओवमाणेणं ॥
जइत्ता तिलोयनाहो, विसहइं बहुयाइं उ.. ज ..
इय जीयंतकराइं, एस खमा सव्वसाहूणं ॥३॥
चइज्जइ चालेउ, महइ महावद्धमाण जिणचंदो। उव..
सहस्सेहिं वि, मेरु जहा वायगुंजाहिं ॥ ४ ॥
विणोय विणओ, पढम गणहरो समत्त शुयनाणो। जा
वि तमत्थं, विम्हिय हियओ सुणइ सव्वं ॥५॥
आणवेइ राया, पयइओ तं सिरेण इच्छन्ति। इअ
जण मुह भणियं, कयंजली उडेहिं सोयव्वं ॥ ६

जह सुरगणाण इंदो, गहगणा तारा गणाण जह चंदो। जहय पयाण नरिंदो, गणस्स वि गुरु तहाणंदो ॥ ७ ॥ बालुत्ति महीपालो, न पया परिहवइ एस गुरु उवमा। जं वा पुरओ काउं, विहरंति मुणि तहा सोवि ॥ ८ ॥ पडिरूवो तेहस्सि, जुगप्पहाणागमो महुरवक्को। गंभीरो धिइमंतो, उवएसपरोय आयरिओ ॥ ९ ॥ अपरिस्सावी सोमो, संगहसीलो अभिग्गहमई य। अविकत्थणो अचवलो, पसंतहियओ गुरू होई ॥ १० ॥ कइयावि जिणवरिंदा, पत्ता अयरामरं पहं दाउं। आयरिएहिं पवयणं, धारिज्जइ संपयं सयलं ॥ ११ ॥ अणुगम्मए भगवई, रायसुयज्जो सहस्स वंदेहिं। तहवि न करेइ माणं, परियच्छइ तं तहा नूणं ॥ १२ ॥ दिणदिक्खियस्स दमगस्स, अभिमुहा अज्जचंदणा अज्जा। नेच्छइ आसण गहणं, सो विणओ सव्व अज्जाणं ॥ १३ ॥ वरससय दिक्खियाए, अज्जाए अज्जदिक्खिओ साहु। अभिगमण वंदण नमंसणेण विणएण सो पुज्जो ॥ १४ ॥ धम्मो पुरिसप्पभवो, पुरिसवरदेसिओ पुरिसजिट्ठो। लोएवि पहू पुरिसो, किं पुण लोगुत्तमे धम्मे ॥ १५ ॥ संवाहणस्स

रण्णो, तइया वाणारसीइ नयरीए। कन्ना सहस्स महियं आसी किर रूपवंतीणं ॥ १६ ॥ तहविय सा रायसिरि, उल्लट्टन्ती न ताइया ताहिं। उयरट्ठिएण इक्केण ताइया अंगवीरेण ॥ १७ ॥ महिलाणसु वहुयाण वि मज्जाओ इह समत्तघर सारो। रायपुरिसेहिं निज्जइ, जणेवि पुरिसो जहिं नत्थि ॥ १८ ॥ किं परजण वहुजाणावणाहिं, वरमप्पसक्खियं सुकय। इह भरहचक्कवट्टी, पसन्नचन्दो य दिट्ठंता ॥ १६ ॥ वेसो वि अप्पमाणो, असंजमपएसु वट्टमाणस्स। किं परियत्तिय वेसं, विसं न मारेइ खज्जंत ॥ २० ॥ धम्मं रक्खइ वेसो, संकइ वेसेण दिक्खिओमि अहं। उम्मग्गेण पडंतं, रक्खइ राया जणवओ य ॥२१॥ अप्पा जाणइ अप्पा, जहट्ठिओ अप्पसक्खिओ धम्मो अप्पा करेइ तं तह, जह अप्पसुहावहं होइ ॥ २२ ॥ ज जं समयं जीवो, आविस्सइ जेण जेण भावेण। सो तम्मि समए, सुहासुहं बंधए कम्मं ॥ २३ ॥ धम्मो हुंतो, तो नवि सी-उण्ह वायविज्जडिओ। संवच्छर मणसीओ, बाहुबली तह किलिस्संतो ॥ २४ ॥ नियगमइ विगप्पिय चिंतिएण, सच्छंद-बुद्धि चरिएण। कत्तो

पारत्तहियं, कीरइ गुरु अणुवएसेणं ॥ २५ ॥ थद्धो निरोव यारी, अविणीओ गव्विओ निरवणामो। साहुजणस्स गरहिओ, जणे वि वयणिज्जयं लहइ ॥ २६ ॥ थोवेण वि सप्पुरिसा, सणंकुमारुव्व केइ बुज्झंति। देने खणपरिहाणि, जं किर देवेहिं से कहियं ॥ २७ ॥ जइता लवसत्तमसुर, विमाणवासो वि परिवडंति सुरा। चिंतिज्जंतं सेसं, ससारे सासयं कयरं ॥ २८ ॥ कह तं भण्णइ सुक्खं-सुचिरेण वि जस्स दुक्खमल्लि हियए। जं च मरणावसाणे, भव संसाराणुवंधि च ॥ २९ ॥ उवएस सहस्सेहि बाहिज्जंतो न बुज्झई कोई। जह वंभदत्तराया, उदाइ निवमारओ चेव ॥ ३० ॥ गयकन्न चंचलाए, अपरिच्चत्ताई रायलच्छीए। जीवासककम्म कलिमल, भरिय भरातो पडंति अहे ॥ ३१ ॥ वोत्तूण वि जीवाणं, सुदुक्करा इति पावचरियाइं। भयवं जा सा सासा, पच्चाएसो हु इणमो ते ॥ ३२ ॥ पडिवज्जिजऊण दोसे, नियए सम्मं च पाय वडियाए। तो किर मिगावइए, उप्पन्नं केवलं नाणं ॥ ३३ ॥ इति ॥

इस प्रकार सज्झाय कहकर एक नवकार गिने।

पश्चात् गुर्वादिक विद्यमान हो तो विधिपूर्वक उनकी वंदना करे। तदनन्तर पच्चक्खाण करके बहुवेलका आदेश लेवे। पीछे देव-दर्शन करने के लिये जिनमंदिर में जावे।

जिसने पोसह किया हो, वह यदि देवदर्शन न करे तो दो या पाँच उपवास के प्रायश्चित का भागी होता है।)

मंदिर में इरियावहियं पूर्वक विधि से चैत्यवंदन करके पच्चक्खाण करे। मंदिर और उपाश्रय से निकलते समय तीन वार "आवस्सही" कहे। और प्रवेश करते समय तीन वार "निस्सीही" कहे। अब उपाश्रय आकर 'इरियावहियं' पडिक्कमे। पीछे धर्मध्यान करे, पढे गुने या व्याख्यान सुने। लघुनीति और बड़ी नीति पर० हो तो पहले "अणूजाणह जस्सगो' कहे और पीछे तीन वार "वोसिरे" कहे। और 'इरियावहियं' पडिक्कमे जब पौन पौरसी (प्रहर) दिन बीत जाय तो पोरसी या बहु पडिपुन्ना पोरसी भणावे। यथा 'इच्छामि० इच्छा० उग्घाडा पोरसी ? इच्छं,' क 'इच्छामि० इच्छा० इरियावहियं० तस्स उत्तरी अन्नत्थ० कहकर, एक लोगस्स काउस्सग्ग करे। पी

प्रकट लोगस्स कहकर, 'इच्छामि० इच्छा० उग्घाडा पोरसी मुहपत्ति संदिसाहुँ ? इच्छं' 'इच्छामि० इच्छा० उग्घाडा पोरसी मुहपत्ति पडिलेहुँ ? इच्छं'। कहकर मुहपत्ति पडिलेहे। अनन्तर उपधानवाही भोजन-पात्र पडिलेही रखे। पीछे सज्झाय ध्यान करे। जब कालवेला हो तब मंदिर या उपाश्रय में जाकर नीचे लिखी हुई विधि के अनुसार पाँच शक्रस्तव से देव-वंदन करे।

देव-वंदन विधि

'इच्छामि० इच्छा० चैत्यवंदन करूं ? इच्छं'। कहकर चैत्यवंदन ओर नमोत्थुणं० कहे। पश्चात् खमासमण देकर इरियावहियं० तस्स उत्तरी० अन्नत्थ० कहकर एक लोगस्स का काउस्सग्ग करके प्रकट लोगस्स कहें। पीछे 'इच्छामि० इच्छा० चैत्यवंदन करूं ? इच्छं, कहकर चैत्यवंदन करे इसके बाद ज किंचि० नमोत्थुणं० कहकर खड़े हो जाय। पश्चात् अरिहंत-चेइआणं०। अन्नत्थ० कहकर एक नवकार का काउस्सग्ग करना, पीछे 'नमो अरिहंताणं' कहता हुआ काउ-स्सग्ग पारकर 'नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः'

कहकर पहली थुई कहे । इसके बाद लोगस्स० सव्वलोए अन्नत्थ० कहकर एक नवकार का काउस्सग्ग दूसरी थुई कहे । पीछे 'पुक्खरवरदीवड्ढे० सुअस्स भग वओ० अन्नत्थ०' कहकर एक नवकार का क... करके तीसरी थुई कहे । पश्चात् सिद्धाणं बुद्धाणं० वे वच्चगराणं० अन्नत्थ० कहकर एक नवकार का काउस्सग्ग करके नमोऽर्हत्० कहकर चोथी थुई कहे । अ नीचे बैठकर 'नमोत्थुणं०' कहे, अनन्तर खड़े होकर अरिहंतचेइआणं० अन्नत्थ० एक नवकार का का... पार कर नमोऽर्हत्० कह कर पहली थुई कहे । लोगस्स० सव्वलोए० अन्नत्थ० कहकर एक नवक का काउस्सग्ग पारकर दूसरी थुई कहे । पीछे ...वर दीवड्ढे० सुअस्स भगवओ० अन्नत्थ० एक नवक का काउस्सग्ग करके तीसरी थुई कहे । पश्चात् ... बुद्धाणं० वेयावच्चगराणं० अन्नत्थ० एक नवकार काउस्सग्ग करके नमोऽर्हत्० कहकर चौथी थुई कहे अब नीचे बैठकर नमोऽत्थुणं० जावंतिचेइआइं० । के वि साहू० नमोऽर्हत्० उवसग्गहर० या कोई

कहकर जयवीयराय कहे पश्चात् नमोत्थुणं कहे ।।इति।।

ऊपर मुजब देव-वंदन करने के बाद सज्झाय ध्यान करे। जल आदि पीने की इच्छा हो तो नीचे लिखी विधि के अनुसार पच्चक्खाण पारकर जल आदि लेवे।

पच्चक्खाण पारने की विधि

खमासमण पूर्वक इरियावहियं० तस्स उत्तरी० अन्नत्थ० कहकर एक लोगस्स का काउस्सग्ग करे। पश्चात् प्रकट लोगस्स कहकर 'इच्छामि० इच्छा० पच्चक्खाण पारने को मुहपत्ति पडिलेहुं ? खच्छं'। कहकर खमासमण देकर मुहपत्ति पडिलेहे। पीछे 'इच्छामि० इच्छा० पच्चक्खाण पारूं ? यथाशक्ति' कहकर, फिर 'इच्छामि० इच्छा० पच्चक्खाण पारेमि ? तहत्ति' कह कर मुट्ठी बन्द कर एक नवकार गिने। पीछे जो पच्चक्खाण किया हो उस पच्चक्खाण का नाम लेकर "पच्चक्खाण फासियं, पालियं, सोहियं, तीरियं, किट्टियं आराहियं जं च न आराहियं तस्स मिच्छामि दुक्कडं" बोलकर एक नवकार गिने। पश्चात् खमासमण देकर

यावहियं' पडिकमे। अनन्तर खमासमण पूर्वक 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! पसाय करी पडिलेहन पडिलेहावोजी ? इच्छं' कहकर स्थापनाचार्यजी की 'शुद्धस्वरूपधारें' के पाठ पूर्वक पडिलेहन करके उच्च स्थान पर रक्खें। पीछे 'इच्छामि० इच्छा० उपधि मुहपत्ति पडिलेहुं ? पीछे इच्छं' कहकर खमासमण देकर मुहपत्ति पडिलेहे! पीछे इच्छामि० इच्छा० सज्झाय संदिसाहु ? इच्छं' 'इच्छामि० इच्छा० सज्झाय करूं ? इच्छं' कहकर एक नवकार गिनकर उपदेशमाला की सज्झाय कहे। बाद एक नवकार गिने। पीछे पच्चक्खाण करे। यदि उपधानवाहीने आहार किया हो तो दो वांदणा देकर पीछे 'इच्छामि० इच्छा० उपधि थंडिला पडिलेहन संदिसाहुं ? इच्छं' इच्छामि० इच्छा० उपधि थंडिला पडिलेहन करूं ? इच्छं'। 'इच्छामि० इच्छा० वेसणे संदिसाहुँ ? इच्छं'। 'इच्छामि० इच्छा० बेसणे ठाउं ? इच्छं,' कहकर बैठ जाय और वस्त्र, कंबल, चरघला आदि पडिलेहे। यदि उपवासी हो तो यहाँ पर वस्त्रादिककी पडिलेहन कर कटिसूत्र और धोती का फिर से पडिलेहन करे! पीछे उच्चार प्रश्रवण के २४ थंडिलो को पडिलेहन करे।

चौविस थंडिला पडिलेहण—पाठ।

१ आगाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अणहियासे। २ आगाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अणहियासे। ३ अगाढे दूरे उच्चारे पासवणे अणहियासे। ४ अगाढे आसन्ने पासवणे अणहियासे। ५ आगाढे मज्झे पासवणे अण हियासे। ६ आगाढे दूरे पासवणे अणहियासे। ७ आगाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अहियासे। ८ आगाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अहियासे। ९ आगाढे दूरे उच्चारे पासवणे अहियासे। १० आगाढे आसन्ने पासवणे अहियासे। ११ आगाढे मज्झे पासवणे अहियासे। १२ आगाढे दूरे पासवणे अहियासे। १३ अणागाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अणहियासे। १४ अणागाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अणहियासे। १५ अणागाढे दूरे उच्चारे पासवणे अणहियासे। १६ आणागाढे आसन्ने पासवणे अणहियासे। १७ अणागाढे मज्झे पासवणे अणहियासे। १८ अणागाढे दूरे पासवणे अणहियासे। १९ अणागाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अहियासे। २० आणागाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अहियासे। २१ अणागाढे दूरे

उच्चारे पासवणे अहियासे। २२ अणागाढ़े आसन्ने पासवणे अहियासे। २३ अणागाढे मज्झे पासवणे अहियासे। २४ अणागाढे दूरे पासवणे अहियासे। इन चौवीस थंडिलों में से ६ थंडिले शय्या के दो तरफ यानी दाहिने ३ और बाँए ३ पडिलेहे। ६ थंडिले दरवाजे के भीतर दाहिने ३ और बाँए ३ पडिलेहे। ६ थंडिला दरवाजे के बाहर दोनो तरफ पडिलेहे और ६ थंडिले उच्चार प्रश्रवण की जगह हो वहाँ पर दोनो तरफ पडिलेहे ॥ इति ॥

अब प्रतिक्रमण का समय हो गया हो तो प्रतिक्रमण करें। प्रतिक्रमण में 'आज के चार प्रहर' पाठ की जगह नीचे लिखा हुआ ठाणेकमणे का पाठ बोले।

ठाणेकमणे चंकमणे, आउत्ते, अणाउत्ते, हरियक्काय संघट्टे बीयकाय संघट्टे, थावकाय संघट्टे, छप्पइया संघट्टे, सव्वस्स वि देवसिय, दुच्चितिय, दुब्भासिय, दुच्चिट्ठिय, इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! इच्छं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

और खुद्दोवद्दव का काउस्सग्ग किये बाद 'इच्छामि०

इच्छा० सज्झाय संदिसाहुं ? इच्छं' इच्छामि० इच्छा० सज्झाय करूं ? इच्छं' ऐसा कहकर बैठजाय और तीन नवकार आदि सज्झाय ध्यान करे। प्रतिक्रमण करने के बाद गुरु आदि की वैयावच्च करे। प्रहर रात तक सज्झाय ध्यान करे। यदि लघुनीति आदि करना हो तो जयणा पूर्वक थंडिल के स्थान जाकर लघुशंका करे। वापस आकर 'भगवन् ! बहुपडिपुन्ना पोरसी ?' ऐसा बोलकर खमासमणपूर्वक इरियावहियं० पडिक्कमे। पीछे रात्रि संथारा का समय हो तब नीचे लिखी विधि के अनुसार रात्रि संथारा करे।

रात्रि-संथारा-विधि

खमासमण पूर्वक 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन ! "बहुपडिपुण्णा पोरसी" ? इच्छं' कहकर इच्छामि० इच्छा० इरियावहियं० तस्स उत्तरी० अन्नत्थ कहकर एक लोगस्स का काउस्सग्ग करे। पश्चात् प्रकट लोगस्स कहे। अनन्तर 'इच्छामि० इच्छा० राइसथारा मुहपत्ति पडिलेहुं ?' कहकर मुहपति पडिलेहे। इसके बाद 'इच्छामि० इच्छा० राइसंथारा संदिसाहुं इच्छं'।

'इच्छामि० इच्छा० राइसंथारा ठाऊं ? इच्छं' कहे फिर इच्छामि० इच्छा० चैत्यवन्दन करू ? इच्छं' ऐसा कहकर चउक्कसाय० नमोत्थुणं जावंति चेइआइं जावंत केवि साहू० नमोऽर्हत्० उवसग्गहर० जय वीयराय० तक चैत्यवन्दन करे। पश्चात् भूमि प्रमार्जन करके संथारा बिछावे। पीछे शरीर प्रमार्जन करके संथारे पर बैठकर राइसंथारे का नीचे लिखा पाठ पढ़े।

निसीहि निसीहि निसीहि णमो खमासमणाणं गोयमाइणं महामुणिणं।

(इतना पाठ कहकर तीन 'नवकार' और तीन 'करेमि भंते!' कहे। इसके बाद नीचे का पाठ बोलें)।

अणुजाणह जिट्ठिज्जा! अणुजाणह परमगुरु। गुणगण रयणेहिं मंडिअसरीरा बहुपडिपुन्ना पोरसी, राइसंथारए ठामि ॥१॥ अणुजाणह संथारं, बाहुवहाणेण वामपासेण। कुक्कुडिपायपसारणं, अंतरं तु पमज्जए भूमिं ॥ २ ॥ संकोइय संडासं, उवट्टंते अ कायपडिलेहा। दव्वाई उवआगं, ऊसास निरुंभणालोए ॥ ३ ॥ जइ मे हुज्ज

पमाओ, इमस्स देहस्सिमाइ रयणीए। आहार मुवहिदेहं, सव्वं तिविहेण वोसिरियं ॥ ४ ॥ आसव-कसाय-बंधण, कलहा-भक्खाण-परपरिवाओ। अरइरई पेसुन्नं, माया-मोसं च मिच्छत्तं ॥ ५ ॥ वोसिरिसु इमाइं, मुक्खमग्ग-संसग्गविग्घभूआइं। दुग्गइनिबंधणाइं, अट्ठारसपावठाणाइं ॥६॥ एगोहं नत्थि मे कोइ, नाहमन्नस्स कस्सवि। एवं अदीणमणसो, अप्पाणमणुसासए ॥ ७ ॥ एगो मे सासओ अप्पा, नाणदंसणसंजुओ। सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे सजोगलक्खणा ॥ ८ ॥ संजोगमूला जीवेण, पत्ता दुक्ख-परम्परा। तम्हा संजोगसंबंध, सव्वं तिविहेण वोसिरे ॥ ९ ॥ अरिहंतो मह-देवो, जावज्जीव सुसाहुणो गुरुणो। जिणपन्नत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहिय ॥ १० ॥ चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं साहू मंगलं, केवलीपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलीपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि शरणं पवज्जामि, अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि। केवलीपण्णतं

धम्मं सरणं पवज्जामि। अरिहन्ता मंगलं मज्झ, अरिहन्ता मज्झ देवया। अरिहंता कित्तिअत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ १ ॥ सिद्धा य मंगलं मज्झ, सिद्धा य मज्झ देवया। सिद्धा य कित्तिअत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ २ ॥ आयरिया मगलं मज्झ, आयरिया मज्झ देवया। आयरिया कित्तिअत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ ३ ॥ उवज्झाया मंगलं मज्झ, उवज्झाया मज्झ देवया। उवज्झाया कित्तिअत्ताणं, वोसिरामित्ति पावगं ॥ ४ ॥ साहूणो मंगलं मज्झ, साहूणो मज्झ देवया। साहूणो कित्तिअत्ताणं, वोसिरामित्ति. पावगं ॥ ५ ॥ पुढवि-दग-अगणि-मारुय इक्विक्के सत्त जोणिलक्खाओ। वणपत्तेय-अणंते दस चउद्दस जोणि-लक्खाओ ॥ १ ॥ विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो य नारय-सुरेसु। तिरिएसु हुंति चउरो चउद्दस लक्खा य मणुएसु ॥ २ ॥ खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे। मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणइ ॥ ३ ॥ एवमहं आलोइअ, निंदिअ गरहिअ दुगंछिअं सम्मं। तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिणे

चउव्वीसं ॥ ४ ॥ [illegible]
जीवनिकाय । [illegible]
भाय ॥ ५ ॥ [illegible]
ते मइं सव्व [illegible]

यह पाठ [illegible]
हुआ शयन करे, [illegible]
करे। पिछली रात्रि को [illegible]
पश्चात् [illegible]
अन्नत्थ० कहकर एक [illegible]
प्रकट लोगस्स कहे। पीछे [illegible]
दुसुमिण" का काउस्सग्ग करे [illegible]
दुसुमिण" का काउस्सग्ग पहले करे [illegible]
करे)। तदनन्तर राइअतिक्क[illegible]
की जगह नीचे का पाठ [illegible]

संथारा उवट्टणकी, [illegible]
रणकी, छप्पइआ [illegible]
सव्वस्स वि राइय [illegible]
इच्छाकारेण संदिस्सह [illegible]
दुक्कडं।

प्रतिक्रमण पूरा होने के बाद प्रभात को पडिलेहन विधि के अनुसार पडिलेहन करे। पोसहशाला में से कचरा निकालकर इरियावहियं पडिकमे। पश्चात् दो खमासमण पूर्वक सज्झाय संदिसाहुं ? सज्झाय करूँ ? आदेश मांगकर उपदेशमाला की सज्झाय करे। पीछे पोसह पारे।

पोसह—पारने की विधि

खमासमण पूर्वक इरियावहियं० तस्स उत्तरी० अन्नत्थ० कहकर एक लोगस्स का काउस्सग्ग करके प्रकट लोगस्स कहे। पीछे 'इच्छामि० इच्छा० पोसह पारूं यथाशक्ति।' 'इच्छामि० इच्छा० पोसह पारेमि ? तहत्ति' कहकर दहिना हाथ नीचे रखकर तीन नवकार गिने। पीछे खमासमण देकर मुहपत्ति पडिलेवे। पीछे 'इच्छामि० इच्छा० सामायिक पारूं ? यथाशक्ति फिर 'इच्छामि० इच्छा० सामायिक पारेमि ? तहत्ति कहकर खमासमण पूर्वक आधा अंग नमाकर तीन नवकार गिने। पीछे घुटने टेक कर शिर नमाकर दाहिना हाथ नीचे रखकर 'भयवंदसण्णभद्दो' का पाठ बोले। इस

प्रकार पोसह पारकर पोसह के उपगरण लेकर, देवदर्शन करके घर आकर अतिथिसंविभाग व्रत आचरण करता हुआ आहार करे। इति आठपुहरी पौषध विधि।

दिन संबंधी चउपुहरी-पौसह-विधि।

आगे जो आठ प्रहर पौषध लेने की विधि लिखी है, उसी प्रकार चार प्रहर पौषध लेने की विधि है, किंतु पोसह दंडक उच्चरते-समय 'जाव अहोरत्तिं पज्जुवासामि' पाठ है, उस जगह 'जावदिवसं पज्जुवासामि' ऐसा पाठ बोलना चाहिये। इसके बाद पूर्ववत् सामायिक लेवे। यदि प्रतिक्रमण गुरु के साथ न किया हो तो गुरु के पास आकर के पौषध और सामायिक की पूर्ववत् सब विधि करे। पीछे आलोयण खमासमणादि निमित्ते मुहपत्ति पडिलेहें और दो वांदना देवे। बाद में 'इच्छा० सं० भ० राइअं आलोउं ? इच्छं, आलोएमि जो मे राइओ अइआरो०' इत्यादि पाठ से राइं आलोवे। फिर एक खमासमण देकर 'इच्छाका० सं० भ० अब्भुट्ठिओमि अब्भिंतर राइयं खामेउं ? इच्छं खामेमि राइअं जं किंचि०' इत्यादि पाठ से राई खामे, अर्थात् विधि-

पूर्वक गुरुवंदन करे। पश्चात् गुरु के समक्ष उपवास आदि का पच्चक्खाण करे। बाद दो खमासमण से बहुवेल संदिसावे। पडिलेहन पहले किया हो तो भी आदेश लेना—'इच्छामि० इच्छा० पडिलेहन संदिसाहुँ, ? इच्छं' 'इच्छामि० इच्छा० पडिलेहन करूं ? इच्छं कहकर मुहपत्ति पडिलेहना। पीछे फिर 'इच्छामि० इच्छा० अङ्गपडिलेहन करूं ? इच्छं' कहकर मुहपत्ति पडिलेहे। पीछे 'इच्छामि० इच्छाकारेण संदिसह भगवन् पसाय करी पडिलेहण पडिलेहावोजी ? इच्छं। बाद इच्छामि० इच्छा० उपधि मुहपत्ति पडिलेहुं ? इच्छं' कहकर कोई वस्त्र बिना पडिलेहन किये रखा हो तो पडिलेहे, नहीं तो फिर सिर्फ आसन पडिलेहे। बाद दो खमासमण पूर्वक सज्झाय संदिसाहुँ और सज्झाय करूं कहकर उपदेशमाला की सज्झाय कहे। और पिछले पहर पच्चक्खाण करने के बाद दो खमासमण पूर्वक उपधि पडिलेहन संदिसाहुँ ? और उपधि पडिलेहन करूं ? ऐसा कहकर पडिलेहन करे, परन्तु थंडिला पद

न कहे और थंडिला पडिलेहे भी नहीं। बाकी सब विधि आठ प्रहर पौषध विधि की तरह समझना ॥इति॥

रात्रि सम्बन्धी चउपुहरी पोसह विधि

जिसने दिनका चउपुहरी पोसह लिया हो, उसे यदि रात्रि पोसह का भाव हुआ हो तो वह संध्याका पडिलेहन और पच्चक्खाण करनेके बाद, दो खमासमण पूर्वक पोसहमुहपत्ति पडिलेहन करे, पश्चात् दो खमासमण पूर्वक पोसह का आदेश मांगकर, तीन नवकार गिनकर तीन वार पोसह-दंडक उच्चरे, इसमें 'जाव-अहोरत्तं पज्जुवासामि' पाठकी जगह 'जावरत्ति पज्जुवासामि' ऐसा पाठ उच्चरे। इसके बाद सामायिक मुहपत्ति पडिलेहन कर जो पहिले विधि लिखी है उसी तरह सब विधि करे।

यदि कारण विशेष दिनका पौषध न कर सके और रात्रिका पौषध लेनेकी इच्छा हुई हो तो—पहिले सब उपगरणका पडिलेहन कर इरियावहियं० पडिकमे। पाछे चउविहार पच्चक्खाण करके दो खमासमण पूर्वक पोसह-मुहपत्ति पडिलेहे। पश्चात् दो खमासमण पूर्वक

पोसह का आदेश मांगकर तीन नवकार गिनकर तीन बार पोसह-दंडक उच्चरे। इसमें संध्यासमय हो तो 'जावरत्ति पज्जुवासामि' ऐसा पाठ बोले। इसके बाद सामायिक मुहपत्ति पडिलेहन कर जो पहले विधि लिखी है उसी तरह सब विधि करे। अन्तमें पडिलेहन का आदेश मांगनेके बाद स्थानक शून्यता मिटानेके लिये सिर्फ एक आसन पडिलेहे, परन्तु पहले पडिलेहन न किया हो तो सब उपधि पडिलेहे। और उच्चार प्रस्र-वणके चौवीस थंडिलो की भी पडिलेहन करे। बाकी सारी विधि पहलेकी तरह समझना ॥ इति ॥

देसावगासिक लेने और पारने की विधि

देसावगासिक लेनेकी विधि पोसह लेनेकी विधि के अनुसार है, परन्तु पोसह लेनेके आदेश में देसाव-गासिक का आदेश लेना चाहिये, जैसे—'देसावगासिक मुहपत्ति पडिलेहुँ ? देसावगासिक संदिस्साहुँ ? देसाव-गासिक ठाउं ? देसावगासिक दंडक उच्चारावोजी ?" इस प्रकार खमासमण पूर्वक आदेश मांगकर देसाव-गासिक का पच्चक्खान तीन बार उच्चरे।

देसावगासिक का पच्चक्खाण

अहं ण भंते ! तुम्हाणं समीवे देसावगासियं पच्च-क्खामि। दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ। दव्वओ, णं देसावगासियं, खित्तओणं इत्थ वा, अन्नत्थ वा, कालओ णं जाव धारणा, भावओ णं जाव गहेणं न गहेज्जामि, छलेणं न छलेज्जामि, अन्नेण केणवि रोगायंकेण वा एस मे परिणामो न परिवज्जइ ताव अभिग्गहो, अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरा-गारेणं, सव्व-समाहि वत्तियागारेणं वोसिरइ।

इस प्रकार देसावगासिकका पच्चक्खाण तीन वार उच्चरे। और इसमें बहुवेल का आदेश लेवे नहीं। देशावगासिक जघन्य से तीन सामायिक और उत्कृष्ट से १५ सामायिक का होता है। देशावगासिक पराने की विधि पोसह पारने की विधिके अनुसार समझना जैसे मुहपत्ति पडिलेहन कर "देशावगासिक पारूँ ? पारेसि ? इत्यादि दो खमासमणापूर्वक आदेश मांगकर पारने का सूत्र "भयवं दसण्णभद्दो०" की चौथी गाथा में "सामाइय पोसहसंठियस्स" की जगह सामाइय देसावगासियं संठियस्स ? इत्यादि पाठ कहे ॥ इति ॥

॥ सप्त स्मरणानि ॥

श्री अजितशांति स्तवन

अजिअं जिअसव्वभयं, संतिं च पसंतसव्वगयपावं। जय गुरु संतिगुणकरे, दो वि जिणवरे पणिवयामि ॥१॥ गाहा। ववगयमंगुल भावे, ते हं विउलतवनिम्मलसहावे। निरुवमहप्पभावे, थोसामि सुदिट्ठसब्भावे ॥२॥ गाहा। सव्वदुक्खप्पसंतीणं, सव्वपावप्पसंतीणं सया अजिअसंतीणं, नमो अजिअसंतीणं ॥ ३ ॥ सिलोगो ॥ अजियजिण सुहप्पवत्तणं, तव पुरिसुत्तम ! नामकित्तणं। तहय धिइ मइ प्पवत्तणं, तव य जिणुत्तम ! संति कित्तणं ॥ ४ ॥ मागहिआ ॥ किरिआ विहिसंचिअकम्मकिलेसविमुक्खयरं, अजिअं निचिअं च गुणेहिं महामुणि-सिद्धि-गयं। अजि-अस्स य संति-महा-मुणिणोवि अ संतिकरं, सययं मम निव्वुइ-कारणयं च नमंसणयं ॥५॥ आलिंगणयं ॥ पुरिसा ! जइ दुक्खवारणं, जइ अ विमग्गह सुक्ख-कारणं। अजिअं संतिं च भावओ, अभयकरे सरणं पवज्जहा ॥ ६ ॥ मागहिआ ॥ अरइ-रइ-तिमिर-विरहिअमुवरयजर मरणं, सुर-असुर गरुल भुअगवइ-पयय-पणिवइअं। अजिअमहमवि

अ सुनय-नय-निउणमभयकरं, सरणमुवसरिअ भुवि-दिविज्ज-महिअं सययमुवणमे ॥ ७ ॥ संगययं ॥ तं च जिणुत्तम-मुत्तमनित्तम-सत्तधरं, अज्जव-मद्दव-खंति विमुत्ति-समाहि-निहिं । संतिकरं पणमामि दमुत्तमतित्थयरं, संति-मुणी मम संति-समाहिवरं दिसउ ॥८॥ सोवाणयं ॥ सावत्थि-पुव्वपत्थिवं च वरहत्थि मत्थयपसत्थ-विच्छिन्न-संथिअं, थिर-सरिच्छ-वच्छं मयगललीलायमाणवर-गंध-हत्थि पत्थाण-पत्थियं संथवारिहं हत्थि हत्थ-बाहु-धंत-कणग-रुअग-निरुवहय-पिंजरं, पवर-लक्खणोवचिअसोम-चारु-रूवं, सुइ-सुहमणाभिराम परम रमणिज्ज-वरदेव-दुंदुहि-निनाय-महुरयर-सुह गिरं ॥६॥ वेड्ढओ ॥ अजिअं जिआरि-गणं, जिअ-सव्वभयं भवोह-रिउं । पणमामि अहं पयओ, पावं पसमेउ मे भयवं ॥१०॥ रासालुद्धओ ॥ कुरु-जणवय-हत्थिणाउरनरीसरो पढमं तओ मह-चक्कवट्टि-भोए मह-प्पभावो, जो बावत्तरि-पुर-वर सहस्स-वरणगर-णिगम-जणवयवई, बत्तीसा रायवर-सहस्साणुयाय-मग्गो चउदस-वर-रयण-नव-महानिहि चउसट्ठि-सहस्स-पवर-जुवईण सुंदर-वई, चुलसी-हय-गय-रह-सयसहस्स-सामी

छन्नवइ-गाम-कोडि-सामी आसि जो भारहम्मि भयवं ॥११॥ वेड्ढओ ॥ तं संतिं संतिकरं, संतिण्णं सव्वभया। संतिं थुणामि जिणं, संतिं विहेउ मे ॥१२॥ रासानंदियं ॥ इक्खागविदेह-नरीसर! नरवसहा! मुणि-वसहा! नव-सारयससि-सकलाणण! विगय तमा! विहुअ-रया! अजिउत्तम! तेअगुणेहिं महा-मुणि! अमिय-बला! विउल-कुला!, पणमामि ते भव-भय-मूरण! जग-सरणा! मम-सरणं ॥ १३ ॥ चित्तलेहा ॥ देव-दाणविंद-चंद-सूर-वंद! हट्ठ-तुट्ठ-जिट्ठ-परम। लट्ठ-रूव! धंत-रुप्प-पट्ट-सेअ सुद्ध-निद्ध-धवल, दंत-पंति! संति! सत्ति कित्ति मुत्ति जुत्ति गुत्ति पवर! दित्ततेअ! वंदधेअ! सव्वलोअ-भाविअ-प्पभाव णेय!। पइस मे समाहिं ॥ १४ ॥ नारायओ ॥ विमल-ससि कलाइरेअ सोमं, वितिमिर सूर कराइरे अतेअं। तिअसवइगणाइरेअ-रूवं, धरणिधर प्पवरा-इरेअ-सारं ॥ १५ ॥ कुसुमलया ॥ सत्ते असया अजिअं, सारीरे अ बले अजिअं। तव संजमे अ अजिअं, एस थुणामि जिण मजिअं ॥ १६ ॥ भुअगपरिरिंगियं ॥ सोमगुणेहिं पावइ

न तं नवसरयससी, तेअ गुणेहिं पावइ न तं नवसरयरवी, रूवगुणेहिं पावइ न तं तिअसगणवई, सारगुणेहिं पावइ न तं धरणि-धर-वइ ॥ १७ ॥ खिज्जिअयं ॥ तित्थ वर पवत्तयं तमरयरहिअं, धीर जण थुअच्चिअं चुअकलि कलुसं । संति सुह प्पवत्तयं ति गरण पयओ, संतिमहं महामुणिं सरणमुवणमे ॥ १८ ॥ ललिअयं ॥ विणओणय-सिरि-रइअंजलि-रिसि-गण-संथुअं थिमिअं, विबुहाहिव धणवइ नरवइ-थुअ-महिअच्चियं बहुसो । अइरुग्गय सरय दिवायर समहिअ सप्पभं तवसा, गयणं गण विअरण समुइयचारण वंदिअ सिरसा ॥ १९ ॥ किसलयमाला ॥ असुर गरुल परिवंदिअं, किन्नरोरगण-मंसिअं । देव कोडि सय संथुअं, समणसंघपरिवंदिअं ॥ २० ॥ सुमुहं ॥ अभयं अणहं, अरयं अरुयं । अजिअं अजिअं, पयओ पणमे ॥ २१ ॥ विज्जुविलसिअं ॥ आगया वरविमाण-दिव्व-कणग-रह-तुरय-पहकर सएहिं हुलिअं । ससंभमोअरण खुभिअ-लुलिय-चल-कुण्डलंगय तिरीड-सोहंत-मउलि-माला ॥ २२ ॥ वेड्डुओ ॥ जं सुर-संघा सासुर संवा, वेर-विउत्ता, भत्ति-सुजुत्ता,

आयर - भूसिअ-संभव-पिंडिअ-सुट्ठु सुविम्हिय सव्व बलोघा। उत्तम कंचण रयण परूविअ भासुर भूसण भासुरिअंगा, गाय समोणयु भत्ति वसागय पंजलि पेसिअ सीसपणामा ॥ २३ ॥ रयणमाला ॥ वंदिऊण थोऊण तो जिणं तिगुणमेव य पुणो पयाहिणं। पणमिउण य जिणं सुरासुरा, पमुइआ सभवणाइं तो गया ॥ २४॥ खित्तयं ॥ तं महामुणि महंपि पंजलि, राग-दोस-भय-मोह-वज्जिअं। देव-दाणव-नरिंद-वंदिअं, संति मुत्तमंमहात-वंनमे ॥ २५ ॥ खित्तयं ॥ अंबरंतर वियारणीआहिं, ललिअ हंस वहूगामिणिआहिं। पीण सोणिथण सालिणिआहिं, सकल-कमल-दल लोअणिआहिं ॥२६॥ दीवयं ॥ पीण-निरंतर-थण-भर-विणमिअ-गाय-लयाहिं, मणि-कंचण-पसि-ढिल-मेहल-सोहिअ-सोणि—तडाहिं। वर-खिखिणि-नेउर-सतिलय-वलय-विभूसणियाहिं, रइकर-चउर-मणोहर-सुन्दर-दंसणिआहिं ॥ २७ ॥ चित्तखरा ॥ देव-सुन्दरीहिं पाय-वंदिआहिं, वंदआ य जस्स ते सुविक्कमा कमा, अप्पणो निडालएहिं मंडणोड्डण-पगारएणिं, केहिंकेहिं वि अवंग-तिलय-पत्त-लेहनामएहिं

चिल्लएहिं संगयं-गयाहिं, भत्तिसन्नि-विट्ठ-वंदणा-गयाहिं, हुंति ते वंदिआ पुणो पुणो ॥२८॥ नारायओ ॥ तमहं जिणचंदं, अजिअं जिअ-मोहं। धुअसव्व-किलेसं, पयओ पणमामि ॥२९॥ नंदिअयं ॥ थुअवंदिअस्सा रिसि-गणदेव गणेहिं, तो देव-वहुहिं पयओपण-मिअस्सा। जस्सजगुत्तम-सासणअस्सा, भत्ति-वसागय-पिंडिआहिं। देव-वरच्छ-रसा-बहुआहिं, सुर-वर-रइ-गुण-पंडिआहिं ॥३०॥ भासुरयं ॥ वंस-सद्द-संति-ताल-मेलिए, तिउ-क्करामिराम-सद्द मीसए कए अ, सुइ-समाणणे अ सिद्धसज्ज-गीअ पाय-जाल धंटिआहिं, वलय मेहला-कलाव-नेउरामिराम सद्द-मी सए कए य देव-नट्टिआहिं हाव-भाव-विब्भम-प्पगारएहिं, नच्चिऊण-अंग-हारएहिं वंदिआ य जस्स ते सुविक्कमा कमा, तयं तिलोय-सव्व-सत्त-संति-कारयं, पसंत सव्व पाव-दोसमेस हं नामामि संतिमुत्तमं जिणं ॥३१॥ नारायओ ॥ छत्त-चामर-पडाग-जूअ-मंडिआ, झय-वर-मगरतुरय-सिरिवच्छ-सुलंछणा। दीव-समुद्द-मंदर-दिसा-गय-सोहिआ, सत्थिय-वसह-सीह-रह-चक्क-वरंकिया ॥३२॥ ललिअयं ॥ सहाव-लट्ठा सम-प्पइट्ठा अदोस-दुट्ठा

जिट्ठा। पसाय-सिट्ठा तवेण पुट्ठा, सिरीहिं इट्ठा रिसीहिं जुट्ठा ॥३३॥ वाणवासिआ ॥ ते तवेण धुअ सव्व-पावया, सव्व-लोअहिअ मूल-पावया। संथुआ अजिय-संति-पायया, हुँतु मे सिव-सुहाण दायया ॥३४॥ अपरान्तिका एवं-तवबल-विउलं, थुअं मए अजिअ संति-जिण-जुअलं। ववगयकम्मरय-मलं, गइं गयं सासयं विउलं ॥३५॥गाहा॥ तं बहु-गुण-प्पसायं, मुक्ख-सुहेण परमेण अविसायं। नासेउ मे विसायं, कुणउ अ परिसावि अ पसायं ॥३६॥ गाहा ॥ तं मोएउ अ नंदिं, पावेउ अ नंदिसेणमभिनन्दिं परिसा वि अ सुअनंदिं, मम य दिसउ संजमे नंदिं ॥३७॥ गाहा ॥ पक्खिअ चाउम्मासिअ, संवच्छरिएअ अवस्स-भणिअव्वो। सोअव्वो सव्वेहिं, उवसग्ग - निवारणो एसो ॥३८॥ जो पढइ जो अ निसुणइ, उभओ कालंपि अजिय संति-थयं। न हु हुंति तस्स रोगा, पुव्वुप्पन्ना विनासंति ॥३९॥ जइ इच्छह परमपयं, अहवा कित्ति सुवित्थडं भुवणे। ता तुलुक्कुद्धरणे, जिण वयणे आयरं कुणह ॥४०॥ गाहा ॥

इति बृहदजितशान्तिस्तवनं प्रथमं स्मरणम्।

(२) द्वितीय लघु-अजितशान्तिस्मरणम्

उल्लासि-क्कम-णक्ख णिग्गय-पहा-दण्ड-च्छलेणंगिणं, चंदारूण दिसंतइव्व पयडं निव्वाणमग्गावलिं। कुंदिंदुज्ज-लदंतकंति-मिसओ नीहंतनाणकुरु-क्केरे दोवि दुइज्ज-सोलस-जिणे थोसामि खेमंकरे ॥१॥ चरम-जलहि-नीरं जो मिणिज्जऽजलीहिं खय-समय-समीरं जो जिणिज्जा गईए। सयल-नहयलं वा लंघए जो पएहिं, अजियमहव संति सो समत्थो थुणेउं ॥२॥ तहवि हु बहु-माणल्लासि-भत्ति-ब्भरेण, गुणकणमिव कित्तिहामि चिंतामणि व्व। अलमहव अचिंताणंत-सामत्थओ सिं, फलिहइ लहु सव्वं वंछिअं णिच्छिअं से ॥३॥ सयलजय-हिआणं नाम-मित्तेण जाणं, विहडइ लहु, दुट्ठानिट्ठदो-घट्टथट्टं। नमिर-सुर-किरीडुग्घिट्ठ-पायारविंदे, सययमजिअ-संती ते जिणिंदेभिवंदे ॥ ४ ॥ पसरइ वर-कित्ती वड्ढए देह-दित्ती, विलसइ भुवि मित्ती जायए सुप्पवित्ती। फुरइ परमतित्ती होइ संसार-छित्ती, जिण-जुअ-पय-भत्ती ही अचिंतोरु सत्ती ॥५॥ ललिअ-पय-पयारं भूरिदिव्वंग-हारं, फुडघणरस-भावो-दार-सिंगार-सारं। ...

रमणीजदं सणच्छेअ - भीया, इव पणमण - मंदा कासिनट्ठोवयारं ॥ ६ ॥ थुणह अजिअ - संती ते कया-सेस-संती, कणय - रयपिसंगा छज्जए जाण मुत्ती । सरभस-परिरंभारंभि-निव्वाण-लच्छी, घण-थण-घुसिणिचक्कुप्पंक-पिंगीकयव्व ॥ ७ ॥ बहुविह-नय-भंगं वत्थु णिच्चं अणिच्चं, सदसणभिलप्पालप्पमेगं अणेगं । इय कुनयविरुद्धं सुप्पसिद्धं च जेसिं, वयणमवयणिज्जं ते जिणे संभरामि ॥ ८ ॥ पसरइ तिय-लोए ताव मोहंधयारं, भमइ जयमसण्णं ताव मिच्छत्त-छण्णं । फुरइ फुड-फलंताणंत-णाणंसुपूरो, पयड-मजिय-संतीज्झाण-सूरो न जाव ॥ ९ ॥ अरि-करि-हरि तिण्हुण्हंबु-चोराहि-वाही, समर-डमर-मारीरुद्द-खुद्दोवसग्गा । पल-यमजिअ-संती-कित्तणे झत्ति जंती, निविडतरतमोहा भक्खरालुंखिअव्व ॥ १० ॥ निचिअ-दुरिअ-दारु-दित्त-झाणग्गिजाला, परिगयमिव गोरं चिंतिअं जाण रूवं । कणय-निहसरेहा-कंति-चोरं करिज्जा, चिरथिरमिह लच्छिं गाढ़-संथंमियव्व ॥ ११ ॥ अडविनिवडियाणं पत्थिबुत्तासिआणं, जलहि-लहरि-हीरंताण गुत्ति-ट्ठियाणं । जलिअजलण-

जालालिंगिआणं च झाणं, जणयइ लहु संतिं, संति नाहाजिआणं ॥ १२ ॥ हरि-करि परिकिण्णं पक्कपाइक्क-पुन्नं, सयल-पुहवि रज्जं छड्डिउं आणसज्जं। तणमिव पडिलग्गं जे जिणा मुत्तिमग्गं, चरणमणुपवन्ना हुंतु ते मे पसन्ना ॥ १३ ॥ छण-ससि-वयणाहिं फुल्ल-नित्तुप्पलाहिं, थण-भर-नमिरीहिं मुट्ठि-गिज्झोदरीहिं। ललिअ-भुअल-याहिं पीण-सोणि-त्थलाहिं, सय-सुर रमणीहिं वंदिआ जेसि पाया ॥ १४ ॥ अरिस-किडिभ-कुट्ठ-ग्गंठि कासाइ-सार-क्खय-जर-वण-लूआ-साससोसोदराणि। नह-मुह-दसणच्छी-कुच्छिकण्णाइरोगे, मह जिण जुअ-पाआ सुप्प-साया हरंतु ॥१५॥ इअ गुरु-दुह-तासे पक्खिए चाउमासे, जिणवरदुम–थुत्तं वच्छरे वा पवित्तं। पढह सुणह सिज्झा-एह झाएह चित्ते, कुणह मुणह विग्घं जेण घाएह सिग्घं ॥१६॥ इय विजयाजिअसत्तु-पुत्त ! सिरिअजिअ-जिणेसर। तह अइरा-विससेण-तणय ! पंचम-चक्कीसर !। तित्थंकर ! सोलसम ! संति ! जिणवल्लह–संथुअ !, कुरु मंगल मम हरसु दुरियमखिलंपि थुणतह ॥१७॥

इति श्री लघु अजितशान्तिस्तवनं द्वतीयं स्मरणम्।

(३) नमिऊणनामकं तृतीयं स्मरणम् ।

नमिऊण पणय-सुर-गण-चूड़ामणि-किरणरंजिअं मुणिणो । चलण-जुअलं महाभय, पणासणं संथवं वुच्छं ।१। सडियक्कर-चरण नह-मुह-निबुड्ड-नासा विवन्नलावण्णा । कुट्ठ-महारोगा-नल-फुलिंग-निद्दड्ढ-सव्वंगा ॥२॥ ते तुह चलणाराहणसलिलं जलि-सेअ-वुड्ढिअ-च्छाया । वण दव-दड्ढा गिरि-पायवव्व पत्ता पुणो लच्छि ॥३॥ दुव्वाय खुभिय-जलनिहि, उब्भड कल्लोल-भीसणारावे । संभंत-भय-विसंठुलनिज्जामय-मुक्कवावारे ॥ ४ ॥ अविदलिय जाणवत्ता, खणेण पावंति इच्छिअं कूलं । पासजिण-चलण-जुअल, निच्चं चिअ जे नमंति नरा ॥५॥ खर-पवणुद्धुय-वणदव-जालावलि-मिलिय-सयल दुमगहणे । डज्झंत मुद्धमिय वहु-भीसण-रव भीसणम्मि वणे ॥ ६ ॥ जगगुरुणो कम-जुअलं, निव्वावियसयल-तिहुअणाभोअं । जे संभरंति-मणुआ न कुणइ जलणो भयं तेसिं ॥७॥ विलसंत-भोग-भीसण, फुरिआरुण-नयण-तरल-जीहालं । उग्ग-भुअंगं नव जलय, सत्थहं भीपणायारं ॥८॥ नन्नंति कीडसरिसं, दूर-परि-च्छूढ-विसमविस वेगा । तुह नामक्खर-फुड-

सिद्ध-मंत गुरुआ नरा लोए ॥९॥ अडवीसु भिल्ल-तक्कर-पुलिंदसद्दूल-सद्दभी-मासु। भय-विह लवुन्न-कायर-उल्लूअ पहिअ-सत्थासु॥१०॥ अविलुत्तवि हवसारा, तुह नाह! पणाम-मत्त वावारा। वव-गयविग्घा सिग्घं, पत्ता हिअ-इच्छियं ठाणं॥११॥ पञ्जलिआ-नलनयणं, दुर-विआरिय मुहं महाकायं। नह-कुलिस धाय-विअलिअ-गइंद-कुंभ-त्थलाभोअं॥ १२ ॥ पणय-ससंभम-पत्थिव, नह-मणिमा-णिक्क-पडिअ-पडिमस्स। तुह वयण-पहरणधरा, सीहं कुद्धंपि न गणंति॥ १३ ॥ ससिधवल-दंतमुसलं, दीहकरु-ल्लाल-वुड्ढिउच्छाहं। महु-पिंग नयण-जुअलं, ससलिल नव जलहरारावं॥ १४ ॥ भीम महा-गइंदं, अच्चासन्नंपि ते नवि गणंति। जे तुम्ह चलण-जुअलं मुणिवइ! तुंगं सम-ल्लीणा॥१५॥ समरम्मि तिक्ख-खग्गाभिग्घाय-पविद्धउद्धुय कवधे। कुंत-विणिभिन्नकरि-कलह-मुक्क-सिक्कार-पउरम्मि॥१६॥ निज्जियदप्पुद्धररिउ-नरिंद-निवहाभडा जसं धवलं। पावंति पावपसमिण! पासजिण। तुह प्पभावेण॥१७॥ रोग-जल जलण-विसहर-चोरारि-मइंदगय-रण-भयाइं। पास-जिणनाम-संकित्तणेण पसमंति सव्वाइं॥ १८ ॥ एवं महाभयहरं पास-जिणिस्स संथवमु

भविय-जणाणंदयरं, कल्लाण-परंपर-निहाणं ॥ १६ ॥ राय भयजक्ख रक्खस, कुसुमिण-दुस्सउण-रिक्ख-पीडासु । संझासु दोसु पंथे, उवसग्गे तह य रयणीसु ॥ २० ॥ जो पढइ जो अ निसुणइ, ताणं कइणो य माण-तुंगस्स । पासो पावं पससेउ, सयल-भुवणच्चिअ-चलणो ॥ २१ ॥

इति श्रीपार्श्वजिनस्तवनं तृतीयं स्मरणम् ।

४ गणधरदेव-स्तुतिरूपं-चतुर्थं-स्मरणम् ।

तं जयउ जए तित्थं, जमित्थ तित्थाहिवेण वीरेण । सम्मं पवत्तियं भव्व-सत्त-संताण-सुहजणयं ॥१॥ नासिय-सयल-किलेसा निहय-कुलेसा-पसत्थ सुह-लेस्सा । सिरि-वद्धमाणतित्थस्स, मंगलं दिंतु ते अरिहा ॥ २ ॥ दिट्ठ-कम्मवीआ वीआ परमेट्ठिणो गुण-समिद्धा । सिद्धा तिजय पसिद्धा, हणंतु दुत्थाणि तित्थस्स ॥ ३ ॥ आयार-मायरंता, पंच-पयारं सया पयासंता । आयरिआ तह तित्थं, निहय-कुतित्थं पयासंतु ॥४॥ सम्म-सुअ-वायगा वायगायसि-अवाय-वायगा वाए । पवयण-पडिणीय-कए-ऽवणिंतु सव्वसि संघस्स ॥५॥ निव्वाण-साहणुज्जुय-साहूणं जणिय-सव्व-साहज्जा । तित्थप्पभावगा ते हवंतु परमेट्ठिणो

जइणो ॥ ६ ॥ जेणाणुगयं णाणं निव्वाण-फलं च चरण-मवि हवइ। तित्थस्स दंसणं तं, मंगलमवणेउ सिद्धियरं ॥७॥ निच्छम्मो सुअधम्मो, समग्ग-भव्वगि-वग्ग-कय-सम्मो। गुण-सुट्ठिअस्स संघस्स, मंगलं सम्ममिह दिसउ ॥ ८ ॥ रम्मो चरित्तधम्मो, संपाविअ-भव्व-सत्त-सिव-सम्मो। नीसेस-किलेसहरो, हवउ सया सयल-संघस्स ॥ ६ ॥ गुण-गण-गुरुणोगुरुणो, सिव-सुह-मइणो कुणंतु तित्थस्स। सिरि-वद्धमाण-पहु पयडि अस्स कुसलं सम ग्गस्स ॥ १० ॥ जिय-पडिवक्खा जक्खा, गोमुह-मायंग-गयमुह-पमुक्खा। सिरि बंभसतिसहिआ, कय-नय-रक्खा सिवं दिंतु ॥११॥ अंबा पडिहयडिंबा, सिद्धा सिद्धाइया पवयणस्स। चक्केसरि-वइरुट्टा, संति सुरा दिसउ सुक्खाणि ॥ १२ ॥ सोलस विज्जा-देवीउ, दिंतु संघस्स मगलं विउलं। अच्छुत्ता सहिआओ, विस्सुअसुयदेवयाइ समं ॥ १३ ॥ जिण-सासण-कयरक्खा, जक्खा चउवीस-सासण सुरावि। सुहभावा संतावं, तित्थस्स सया पणा-संतु ॥ १४ ॥ जिण-पवयणम्मि निरया, विरया कुप-हाउ सव्वहा सव्वे। वेयावच्चकरावि अ, तित्थस्स -

संतिकरा ॥ १५ ॥ जिण-समय-सिद्ध-सुमग्ग-वहिय—भव्वाण जणिय-साहज्जो । गोयरइ गीअजसो, सपरिवारो सिवं दिसउ ॥ १६ ॥ गिह-गुत्त-खित्त-जल-थल-थल-वण-पव्वयवासी देव-देवीओ । जिण-सासण-ट्ठिआणं दुहाणि सव्वाणि निहणंतु ॥ १७ ॥ दस-दिसि-पाला-स-क्खित्त-पालया नवग्गहा सनक्खत्ता । जोइणि-राहु-गह-काल-पास-कुलि-अद्ध-पहरेहिं ॥ १८ ॥ सह काल-कंटएहिं, सविट्ठि-वच्छेहिं कालवेलाहिं । सव्वे सव्वत्थ सुहं, दिसंतु सव्वस्स संघस्स ॥ १९ ॥ भवणवइ-वाणमंतर, जोइस-वेमाणिआ य जे देवा । धरणिंद-सक्कसहिआ, दलंतु दुरियाइं तित्थस्स ॥२०॥ चक्कं जस्स जलंतं, गच्छइ पुरओ पणा-सिय-तमोहं । तं तित्थस्स भगवओ, नमो नमो वद्धमाणस्स ॥२१॥ जो जयउ जिणो वीरो, जस्सज्जवि सासणं जए जयइ । सिद्धि-पह-सासणं-कुपह-नासणं सव्व भय-महण ॥ २२ ॥ सिरि-उसभसेण-पमुहा, हय-भय-निवहा दिसंतु तित्थस्स । सव्व जिणाणं गणहारिणोऽणहं वंछियं सव्वं ॥ २३ ॥ सिरिवद्धमाण-तित्थाहिवेण, तित्थं समप्पियं जस्स । सम्मं सुहम्म-सामी, दिसउ सुहं

सयल संघस्स ॥ २४ ॥ पयईए भद्दिया जे, भद्दाणि दिसंतु सयल-संघस्स। इयर-सुरा वि हु सम्मं, जिण गणहर-कहिय-कारिस्स ॥ २५ ॥ इय जो पढइ तिसंझं, दुस्संज्झं तस्स नत्थि किंपि जए। जिणदत्ताण ठिओसो, सुनिट्ठि-अट्ठो सुही होई ॥२६॥

इति श्रीगणधरदेव-स्तुति-नामकं-चतुर्थं स्मरणम्।

५ गुरुपारतन्त्र्यनामकं-पञ्चम्-स्मरणम्।

मयरहियं गुण-गण-रयण,-सायरं सायरं पणमिऊण। सुगुरु-जण-पारतंतं, उयहिव्व थुणामि तं चेव ॥ १ ॥ निम्महियमोह-जोहा, निहय-विरोहा पणट्ठ-संदेहा। पणयंगि-वग्गदाविअसुह-संदोहा सुगुण-गेहा ॥ २ ॥ पत्त-सुजइत्त-सोहा, समत्थपरतित्थ-जणिय-संखोहा। पडि-भग्ग-लोह-जोहा, दंसिअ-सुमहत्थसत्थोहा ॥ ३ ॥ परि-हरिअ सत्थ-वाहा, हय-दुहदाहा सिवंव-तरु-साहा। संपाविअ-सुह-लाहा, खीरोदहिणुव्व अग्गाहा ॥ ४ ॥ सुगुण-जण-जणिय-पुज्जा, सज्जो निर-वज्ज-गहिय पव्वज्जा। सिवसुह-साहणसज्जा, भव-गुरु-गिरि-चूरणे वज्जा ॥ ५ ॥ अज्जसु-हम्म-प्पमुहा, गुण-गण-निवहा

सुरिंद-विहिअमहा। ताण तिसंझं नामं नामं न पणासइ जियाणं ॥ ६ ॥ पडिवज्जिअजिण-देवो, देवायरिओ दुरंत-भवहारी। सिरि-नेमिचन्द-सूरि उज्जो-अण-सूरिणो सुगुरू ॥ ७ ॥ सिरि वद्धमाणसूरि पयडीकयसूरि-मंत-माहप्पो। पडिहयकसाय-पसरो, सरय-ससंकुव्व सुहजणओ ॥ ८ ॥ सुह-सील-चोर-चप्परण-पच्चलो निच्चलो जिण-मयम्मि। जुगपवर-सुद्ध-सिद्धंत-जाणओ पणयसुगुण-जणो ॥९॥ पुरओ दुल्लह-महिव-ल्लहस्स अणहिल्लवाडए पयडं। मुक्का विआरि-ऊणं, सीहेण व दव्वलिंगि-गया ॥१०॥ दसमच्छेरय-निसि विप्फु-रंत-सच्छन्द-सूरि-मय-तिमिरं। सूरेण व सूरि-जिणे-सरेण हय-महिअ-दोसेण ॥११॥ सुकइत्त पत्त-कित्ती, पयडिय-गुत्ती पसंत-सुहमुत्ती। पहय-परवाइ-दित्ती, जिणचंद-जईसरो मंती ॥१२॥ पय-डिअनवंग-सुत्तत्थ,—रयणकोसो पणासिअ-पओसो। भव-भीअ-भविअजण-मण, कय-संतोसो विगय-दोसो ॥१३॥ जुग-पवरागम-सार-प्परूवणा-करणबंधुरो धणिअं। सिरी अभयदेव-सूरि, मुणि-पवरो परम-पसम-घरो ॥ १४ ॥ कय-सावय-सत्तासो, हरिव्व सारंग-भग्ग-संदेहो। गय-

समय-दप्पदलणो आसाइय-पवर-कव्वरसो ॥ १५ ॥
भीम भव-काणणम्मि अ, दसिअ-गुरु-वयण-रयण-संदोहो। नीसेस-सत्त-गुरुओ, सूरी जिणवल्लहो जयइ ॥१६॥ उवरि-ट्ठिअ-सच्चरणो, चउरणुओगप्पहार-सच्चरणो। असम-मयराय-महणो, उड्डमुहो सहइ जस्स करो ॥१७॥ दंसिअ-निम्मलनिच्चल, दंत-गणोगणिअ-सावओत्थ-भओ। गुरु-गिरि-गरुओ सरहुव्व सूरि जिणवल्लहो होत्था ॥१८॥ जुग-पवरागम-पीउसपाणपीणिय-मणा कया भव्वा। जेण जिण-वल्लहेणं, गुरुणा तं सव्वह वंदे ॥ १९ ॥ विप्फुरिय-पवरपवयण,-सिरोमणी वूढ-दुव्वहा-खमो य। जो सेसाणं सेसुव्व, सहइ सत्ताण ताणकरो ॥ २० ॥ सच्चरिआण-महीणं, सुगुरूणं पारतंतमुव्वहइ। जयइ जिणदत्त-सूरि-सिरि-निलओ पणय-मुणि-तिलओ ॥२१॥

इति श्रीगुरूपार-तन्त्र्यनामकं-पंचमं-स्मरणम्।

६—षष्ठं 'सिग्घमवहरउ' नामकं-स्मरणम्

सिग्घमवहरउ विग्घं, जिण-वीराणाणुगामिसंघस्स।
सिरिपास-जिणो थंभण-पुर-ट्ठिओ निट्ठिआनिट्ठो ॥ १ ॥
गोयम-सुहम्म-पमुहा, गणवइणो विहिअ-भव्व-सत्त-सुहा।

सिरि-वद्धमाण-जिण-तत्थ-सुत्थयं ते कुणंतु सया ॥ २ ॥
सक्काइणो सुरा जे, जिण-वेयावच्च-कारिणो संति । अव-
हरिय-विग्घ-संघा, हवंतु ते संघ-संतिकरा ॥ ३ ॥ सिरि-
थंभणयट्ठिय-पास-सामि-पय-पउय-पणय-पाणीणं । निद्द-
लिय-दुरिय-विंदो, धरणिंदो हरउ दुरियाइं ॥ ४ ॥
गोमुहपमुक्ख जक्खा, पडिहयपडिवक्ख-पक्ख-लक्खा ते ।
कय-सगुण-संघ-रक्खा । हवंतु संपत्त सिवसुक्खा ॥ ५ ॥
अप्पडिचक्कापमुहा, जिण-सासण-देवया य जिण-पणया ।
सिद्धाइया-समेया, हवंतु संघस्स विग्घहरा ॥ ६ ॥ सक्का-
एसा सच्चउर-पुरट्ठिओ वद्धमाण-जिणभत्तो । सिरि-
बंभसंति-जक्खा, रक्खउ संघं पयत्तेण ॥७॥ खित्त-गुह-
गुत्त-संताण-देस-देवाहि-देवया ताओ । निव्वुइ-पुर-पहि-
आणं, भव्वाण कुणंतु सुक्खाणि ॥८॥ चक्केसरि-चक्क-
धरा, विहि-पहरिउच्छिण्ण-कंधरा धणियं । सिव-सरणी-
लग्ग-संघस्स, सव्वहा हरउ विग्घाणि ॥ ९ ॥ तित्थवइ
वद्धमाणो, जिणेसरो संगओ सुसंघेण । जिणचन्दोऽभय-
देवो, रक्खउ जिणवल्लहो पहू मं ॥ १० ॥ सो जयउ
वद्धमाणो, जिणेसरो णेसरु व्व हय-तिमिरो । जिण-
चंदाऽभयदेवा, पहुणो जिणवल्लहा जे अ ॥ ११ ॥ गुरु

जिणवल्लह-पाए,ऽभयदेवपहुत्त-दायगे वंदे । जिणचंद जिणेसर-वद्धमाण-तित्थस्स वुड्ढि-कए ॥ १२ ॥ जिण-दत्ताणं सम्मं, मन्नंति कुणंति जे य कारिंति । मणसा वयसा वउसा, जयंतु साहम्मिआ ते वि ॥१३॥ जिणदत्त-गुणे नाणाइणो, सया जे धरति धारिंति । दंसिअ-सिअवाय-पए, नमामि साहम्मिआ ते वि ॥ १४ ॥

इति षष्ठं स्मरणम् ।

७—उवसग्गहरं-नामकं-सतमं-स्मरणम् ।

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं । विस-हरविस-निन्नासं, मंगलकल्लाण-आवासं ॥ १ ॥ विसहर-फुलिंग-मंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ । तस्स गह-रोग-मारी, दुट्ठ जग जंति उवसामं ॥ २ ॥ चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहु-फलो होइ । नर-तिरिएसु वि जीवा पावंति न दुक्ख-दोहग्गं ॥ ३ ॥ तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणि कप्प-पायवब्भहिए । पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं ॥ ४ ॥ इअ संथुओ महायस !, भत्ति-ब्भर-निब्भरेण हिअएण । ता देव ! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पास ! जिणचंद ! ॥ ५

इति श्री पार्श्वजिनस्तवनं सप्तमं स्मरणम्

श्री भद्रबाहुस्वामिविरचिता। ग्रहशांतिः

जगद्गुरुं नमस्कृत्य, श्रुत्वा सद्गुरुभाषितम्। ग्रह-शान्तिं प्रवक्ष्यामि, लोकानां सुखहेतवे ॥ १ ॥ जिनेन्द्रैः खेचराः ज्ञेयाः, पूजनीया विधिक्रमात्। पुष्पैर्विलेपनैर्धूपै र्नैवेद्यैस्तुष्टि-हेतवे ॥ २ ॥ पद्मप्रभस्य मार्त्तण्ड-श्चन्द्रश्च-न्द्रप्रभस्य च। वासुपूज्ये भूमिपुत्रो, बुधोऽप्यष्टजिनेषु च ॥ ३॥ विमला-नन्तधर्माराः शान्तिः कुन्थुर्नमिस्तथा। वर्धमानस्तथैतेषां, पादपद्मै बुधंन्यसेत् ॥ ४ ॥ ऋषभाऽ-जितसुपार्श्वा-श्चाभि-नन्दनशीतलौ। सुमतिः संभव-स्वामी, श्रेयांसश्चैषुगीष्पतिः ॥ ५ ॥ सुविधेः कथितः शुक्रः, सुव्रतस्य शनैश्चरः। नेमिनाथे भवेद्राहुः, केतुः श्रीमल्लिपार्श्वयोः ॥ ६ ॥ जनांल्लग्ने च राशौ च, यदा पीडयन्ति खेचराः। तदा सम्पूजयेद्धीमान्, खेचरैः सहितान् जिनान् ॥ ७ ॥

अथ नवग्रहपूजा।

पद्मभजिनेन्द्रस्य, नामोच्चारेण भास्कर। शान्तिं तुष्टिं च पुष्टिं च, रक्षां कुरु कुरु श्रियम् ॥ ८ ॥ इति

श्रीसूर्यपूजा ॥ चन्द्रप्रभजिनेन्द्रस्य, नाम्ना तारागणाधिप।
प्रसन्नो भव शान्ति च, रक्षां कुरु जयं ध्रुवम् ॥ ९ ॥
इति श्रीचन्द्रपूजा ॥ सर्वदा वासुपूज्यस्य, नाम्ना शान्ति
जयश्रियम्। रक्षां कुरु धरासूनो, अशुभोऽपि शुभो भव
॥ १० ॥ इति श्रीभौमपूजा ॥ विमलानन्तधर्माराः,
शान्तिः कुन्थुनमिस्तथा। महावीरश्च तन्नाम्ना, शुभो
भूयाः सदा बुधः ॥ ११ ॥ इति श्रीबुधपूजा ॥ ऋषभा-
जितसुपार्श्व-श्चाभिनन्दनशीतलौ। सुमतिः संभव-
स्वामी, श्रेयांसश्च जिनोत्तमः ॥ १२ ॥ एतत्तीर्थकृता
नाम्ना, पूज्योऽशुभः शुभो भव ॥ शांतिं तुष्टिं च पुष्टिं
च, कुरु देवगणार्चित ॥१३॥ इति श्रीगुरुपूजा ॥ पुष्प-
दन्त-जिनेन्द्रस्य, नाम्ना दैत्यगणार्चित। प्रसन्नो भव
शान्ति च, रक्षां कुरु कुरु श्रियम् ॥ १४ ॥ इति श्रीशुक्र
पूजा॥ श्रीसुव्रत-जिनेन्द्रस्य, नाम्नासूर्यांगसंभव। प्रसन्नो
भव शांतिं च, रक्षां कुरु कुरु श्रियम् ॥ १५ ॥ इति
श्रीशनैश्चरपूजा ॥ श्रीनेमिनाथतीर्थेश,-नामतः सिंहिका-
सुत। प्रसन्मो भव शांतिं च, रक्षां कुरु कुरु श्रियम् ॥१६॥
इति श्रीराहुपूजा ॥ राहो सप्तमराशिस्य, कारेण दृश्य-

संवरे । श्रीमल्लिपार्श्वयोर्नाम्ना, केतोः शांतिं जयश्रियम् ॥ १७ ॥ इति श्री केतुपूजा ॥ इति भणित्वा स्वस्ववर्ण-कुसुमांजलिक्षेपजिनग्रह पूजा कार्या, तेन सर्वपीडायाः शान्तिर्भवति । अथ सर्वेषां वा ग्रहाणामेकदा पीडायामयं विधिः-नव-कोष्टकमालेख्यं, मण्डलं चतुरस्रकम् । ग्रहास्तत्र प्रतिष्ठाप्या, वक्ष्यमाणाः क्रमेण तु ॥ १८ ॥ मध्ये हि भास्करः स्थाप्यः, पूर्व-दक्षिणतः शशी । दक्षिणस्यां धरासूनु-बुधः पूर्वोत्तरेण च ॥ १९ ॥ उत्तरस्यां सुराचार्यः पूर्वस्यां भृगुनन्दनः पश्चिमायां शनिः स्थाप्यो, राहु-र्दक्षिणपश्चिमे ॥२०॥ पश्चिमोत्तरतः केतु,-रिति स्थाप्या क्रमाद् ग्रहाः । पट्टे स्थालेऽथ वाग्नेय्यां, ईशान्यां तु सदा बुधैः ॥ २१ ॥ आर्या ॥ आदित्यसोममंगलबुध-गुरु शुक्राः शनैश्चरो राहुः । केतुप्रमुखाःखेटा, जिनपति-पुरतोऽवतिष्ठन्तु ॥ २२ ॥ इति भणित्वा पंचवर्णकुसुमांज-लिक्षेपश्च जिनपूजा च कार्या । पुष्पगन्धादिभिर्धूपैः—नैवेद्यैः फलसंयुतैः । वर्णसदृशदानैश्च, वस्त्रैश्च दक्षिणा-न्वितैः ॥ २३ ॥ जिननामकृतोच्चारा, देशनक्षत्रवर्णकैः । पूजिताः संस्तुता भक्त्या, ग्रहाः सन्तु सुखावहाः ॥२४॥

जिनानामग्रतः स्थित्वा, ग्रहाणां शान्तिहेतवे। नमस्कार-शतं भक्त्या, जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ २५ ॥ एवं यथानाम-कृताभिषेकै-रालेपनैर्धूपनपूजनैश्च। फलैश्च नैवेद्यवरैर्जिनानां नाम्ना ग्रहेन्द्रा वरदा भवन्तु ॥ २६ ॥ साधुभ्यो दीयते दानं, महोत्साहो जिनालये। चतुर्विधस्य सङ्घस्य, बहुमानेन पूजनम् ॥ २७ ॥ भद्रबाहुरुवाचेदं पंचमः श्रुतकेवली। विद्याप्रवादतः पूर्वात्, ग्रहशान्तिरुदीरिता ॥ २८ ॥ इति श्री भद्रबाहुस्वामिविरचिता बृहद्ग्रह-शान्तिः समाप्ता।

कस्मिन् रिष्टग्रहे कस्य जिनस्य कया रीत्या पूजा कार्या तदाख्याति। रविपीडायाम् रक्त पुष्पैः श्रीपद्मप्रभपूजा कार्या, ॐ ह्रीं नमो सिद्धाणं तस्य अष्टोत्तरशत-जपः कार्यः। चन्द्रपीडायाम्—चन्द्रप्रभपूजा कार्या ॐ ह्रीं नमो आयरियाणं तस्य अष्टोत्तरशतजपः कार्यः। भौमपीडायाम्—कुंकुमेन च रक्तपुष्पैः श्रीवासुपूज्यपूजा विधेया। ॐ ह्री नमो सिद्धाणं तस्य अष्टोत्तरशत जपः कार्यः। बुधपीडायाम्—दुग्धस्नाननैवेद्यफलादितः श्रीशान्तिनाथपूजा कर्त्तव्या, ॐ ह्रीं नमो आयरि

तस्य अष्टोत्तरशतजपः कार्यः। गुरुपीडायाम्—दधि-भोजनजम्बीरादिफलेन च चन्दनादिविलेपनेन श्रीआदि नाथपूजा करणीया, ॐह्रीं नमो आयरियाणं तस्य अष्टो-त्तरशतजपः कर्त्तव्यः। शुक्रपीडायाम्—श्वेतपुष्पैश्चन्दना-दिना श्रीसुविधिनाथपूजा कार्या, चैत्ये घृतदानं कार्यं, ॐ ह्रीं नमो अरिहंताणं तस्य अष्टोत्तरशतजपः कार्यः। शनिश्चर-पीडायाम्—नीलपुष्पैः श्रीमुनिसुव्रतपूजाकार्या, तैलस्नानदाने कर्त्तव्ये, ॐ ह्रीं नमो लोए सव्वसाहूणं तस्य अष्टोत्तरशतजपः कार्यः। राहुपीडायाम्—नील-पुष्पैः श्रीनेमिनाथपूजा करणीया, ॐह्रीं नमो लोए सव्व-साहूणं तस्य अष्टोत्तरशतजपः कार्यः। केतुपीडायाम्-दाडिमादिपुष्पैः श्रीपार्श्वनाथपूजा कार्या, ॐ ह्रीं नमो लोए सव्वसाहूणं तस्य अष्टोत्तरशतजपः कार्यः। इति नवग्रहपूजाविधिः। सर्वग्रह-पीडायाम्-श्रीसूर्यसोमांगार-कबुधबृहस्पति-शुक्रशनिश्चरराहुकेतवः सर्वे ग्रहा मम सानुग्रहा भवन्तु स्वाहा। ॐ ह्रीं अ सि आ उ साय नमः स्वाहा। अस्य मंत्रस्य अष्टोत्तरशतजपः कार्यः, तेन नवग्रह पीडोपशान्तिः स्यात्। इति नवग्रहपूजाप्रकारः।

रिद्र याप्तसमाश्रिते । अपुत्रत्वे
ते ॥२०॥ डाकिनी शाकिनी
नद्यु त्तारेऽध्ववैषम्ये, व्यसने
प्रातरेव समुत्थाय, यः स्मरे-
केश्चिद्भयं नास्ति लभते सुख-
पञ्जरनामेदं, यः स्मरेदनुवासरम् ।
यं स लभते नरः ॥ २३ ॥ प्रातः
ा, यः स्तोत्रमेतज्जिनपञ्जराख्यम् ।
भाख्यं, लक्ष्मी मनोवाञ्छितपूरणाय
रेण्यगच्छे, देवप्रभाचार्यपदाब्ज-
जैनो, जीयाद् गुरुः श्रीकम-
।

ऱ-स्तोत्रम् ।

॥ यत् स्थितम् ।
न्वत ॥ १ ॥ अग्नि-
कम् । देदीप्यमानं
॥ अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म
सद्बीजं, सर्वतः

॥ ६ ॥ पश्चिमाशां जगन्नाथो, वायव्यां परमेश्वरः । उत्तरां तीर्थकृत्सर्वा-मीशानेऽपि निरंजनः ॥ १० ॥ पातालं भगवानर्ह-न्नाकाशं पुरुषोत्तमः । रोहिणीप्रमुखा देव्यो, रक्षन्तु सकलं कुलम् ॥ ११॥ ऋषभो मस्तकं रक्षेद्, अजितोऽपि विलोचने । संभवः कर्ण-युगलेऽभि-नन्दनस्तु नासिके ॥ १२ ॥ ओष्ठौ श्रीसुमती रक्षेद्, दन्तान् पद्मप्रभो विभुः । जिह्वां सुपार्श्वदेवोऽयं, तालु चन्द्र-प्रभाभिधः ॥१३॥ कण्ठं श्रीसुविधी रक्षेद्, हृदयं श्री सुशीतलः । श्रेयांसो बाहुयुगलं, वासुपूज्यः करद्वयम् ॥ १४ ॥ अंगुलीर्विमलो रक्षेद्, अनन्तोऽसौ स्तनावपि । श्रीधर्मोऽप्युदरास्थीनि, श्रीशान्तिर्नाभिमण्डलम् ॥ १५ ॥ श्रीकुन्थुर्गुह्यकं रक्षेद्, अरो रोमकटीतटम् । मल्लिरूरुपृ-ष्ठवंशं, जंघे च मुनिसुव्रतः ॥ १६ ॥ पदांगुलीर्नमी रक्षेत् श्रीनेमिश्चरणद्वयम् । श्रीपार्श्वनाथः सर्वांगं, वर्द्धमा-नश्चिदात्मकम् ॥ १७ ॥ पृथ्वी-जलतेजस्क, वाय्वाका-शमयं जगत् । रक्षेदशेषपापेभ्यो, वीतरागो निरञ्जनः ॥ १८ ॥ राजद्वारे श्मशाने च संग्रामे शत्रुसंकटे । व्याघ्रचौराग्निसर्पादि—भूतप्रेतभयाश्रिते ॥ १६ ॥

परिसकारान्तं, बीजमध्यास्य सर्वगम् । नमामि बिम्ब-
मार्हन्त्यं, ललाटस्थं निरंजनम् ॥ १३ ॥ अक्षयं निर्मलं
शान्तं, बहुलं जाड्यतोज्झितम् । निरीहं निरहंकारं,
सारं सारतरं घनम् ॥ १४ ॥ अनुद्धतं शुभं स्फीतं,
सात्विकं राजसं मतम् । तामसं चिरसम्बुद्धं, तैजसं
शर्वरीसमम् ॥ १५ ॥ साकारं च निराकारं, सरसं विरसं
परम् । परापरं परातीतं, परम्परपरापरम् ॥ १६ ॥
एकवर्णं द्विवर्णं च, त्रिवर्णं तुर्यवर्णकम् । पंचवर्णं महावर्णं
सपरं च परापरम् ॥ १७ ॥ सकलं निष्कलं तुष्टं, निर्वृतं
भ्रान्तिवर्जितम् । निरंजनं निराकारं, निर्लेपं वीतसं-
श्रयम् ॥ १८ ॥ ईश्वरं ब्रह्मसम्बुद्धं, बुद्धं सिद्धं मतं
गुरुम् । ज्योतिरूपं महादेवं, लोकालोकप्रकाशकम्
॥ १६ ॥ अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः, सरेफो बिन्दुमण्डितः ।
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नाद मालितः ॥ २० ॥
अस्मिन् बीजे स्थिताः सर्वे, ऋषभाद्या जिनोत्तमाः ।
वर्णैर्निजैर्युक्ता, ध्यातव्यास्तत्र सङ्गताः ॥ २१ ॥
नादश्चन्द्रसमाकारो, बिन्दुर्नीलसमप्रभः । कलारुणसमा-
।न्त:, स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ॥ २२ ॥ शिरः संलीन

प्रणिदध्महे ॥ ३ ॥ ॐ नमोऽर्हद्भ्य ईशेभ्य, ॐ सिद्धेभ्यो नमोनमः । ॐ नमः सर्वसूरिभ्य, उपाध्यायेभ्यः ॐ नमः ॥ ४ ॥ ॐ नमः सर्वसाधुभ्य, ॐ ज्ञानेभ्यो नमोनमः । ॐ नमस्तत्वदृष्टिभ्य-चारित्रेभ्यस्तु ॐ नमः ॥ ५ ॥ श्रेयसेऽस्तु श्रियेस्त्वेत-दर्हदाद्यष्टकं शुभम् । स्थानेष्वष्टसु विन्यस्तंपृथग् बीजसमन्वितम् ॥ ६ ॥ आद्यं पदं शिखां रक्षेत्, परं रक्षेत् तु मस्तकम् । तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे, तुर्यं रक्षेच्च नासिकम् ॥ ७ ॥ पञ्चमं तु मुखं रक्षेत्, षष्ठं रक्षेच्च घण्टिकाम । नाभ्यन्तं सप्तमं रक्षेद्, रक्षेत् पादान्तमष्टमम् ॥ ८ ॥ पूर्वप्रणवतः सान्तः, सरेफो द्व्यब्धिपञ्चषान् । सप्ताष्टदशसूर्याङ्कान्, श्रितो बिन्दुस्वरान् पृथक् ॥ ९ ॥ पूज्यनामाक्षरा आद्याः, पंचैते ज्ञानदर्शने । चरित्रेभ्यो नमो मध्ये, ह्रीं सान्तःसमलंकृतः ॥ १०॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा ज्ञानदर्शनचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः । जम्बूवृक्षधरो द्वीपः, क्षारोदधिसमावृतः । अर्हदाद्यष्टकैरष्ट-काष्ठाधिष्ठैरलङ्कृतः ॥११ ॥ तन्मध्येसङ्गतो मेरुः, कूटलक्षैरलङ्कृतः । उच्चैरुच्चैस्तरस्तार-स्तारामण्डलमण्डितः ॥१२॥ तस्यो-

परिसकारान्तं, बीजमध्यास्य सर्वगम्। नमामि बिम्ब-
मार्हन्त्यं, ललाटस्थं निरंजनम् ॥ १३ ॥ अक्षयं निर्मलं
शान्तं, बहुलं जाड्यतोज्झितम्। निरीहं निरहंकारं,
सारं सारतरं घनम् ॥ १४ ॥ अनुद्धतं शुभं स्फीतं,
सात्त्विकं राजसं मतम्। तामसं चिरसम्बुद्धं, तैजसं
शर्वरीसमम् ॥ १५ ॥ साकारं च निराकारं, सरसं विरसं
परम्। परापरं परातीतं, परम्परपरापरम् ॥ १६ ॥
एकवर्णं द्विवर्णं च, त्रिवर्णं तुर्यवर्णकम्। पंचवर्णं महावर्णं
सपरं च परापरम् ॥ १७ ॥ सकलं निष्कलं तुष्टं, निर्वृतं
भ्रान्तिवर्जितम्। निरंजनं निराकार, निर्लेपं वीतसं-
श्रयम् ॥ १८ ॥ ईश्वरं ब्रह्मसम्बुद्धं, बुद्धं सिद्ध मतं
गुरुम्। ज्योतिरूपं महादेवं, लोकालोकप्रकाशकम्
॥ १६ ॥ अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः, सरेफो बिन्दुमण्डितः।
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नाद मालितः ॥ २० ॥
अस्मिन् बीजे स्थिताः सर्वे, ऋषभाद्या जिनोत्तमाः।
वर्णैर्निजैर्युक्ता, ध्यातव्यास्तत्र सङ्गताः ॥ २१ ॥
नादश्चन्द्रसमाकारो, बिन्दुर्नीलसमप्रभः। कलारुणसमा-
सान्तः, स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ॥ २२ ॥ शिरः संलीन

ईकारो, विनीलो वर्णतः स्मृतः वर्णानुसारसंलीनं, तीर्थ-कृन्मंडल स्तुमः ॥ २३ ॥ चन्द्रप्रभपुष्पदन्तौ, नादस्थि-तिसमाश्रितौ। बिन्दुमध्यगतौ नेमि, सुव्रतौ जिनस-त्तमौ ॥ २४ ॥ पद्मप्रभवासुपूज्यौ, कलापदमधिष्ठितौ। शिरइस्थितिसंलीनौ, पार्श्वमल्ली जिनोत्तमौ ॥ २५ ॥ शेषास्तीर्थंकराः सर्वे, हरस्थाने नियोजिताः। मायाबी-जाक्षरं प्राप्ता-श्चतुर्विंशतिरर्हताम् ॥ २६ ॥ गतरागद्वे-षमोहाः, सर्वपापविवर्जिताः। सर्वदा सर्वकालेषु ते भवन्तु जिनोत्तमाः ॥२७॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वाङ्गं, मा मां हिनस्तु डाकिनी ॥ २८ ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादित सर्वांगं, मा मां हिनस्तु राकिनी ॥२९॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादित सर्वांगं, मा मां हिनस्तु लाकिनी ॥ ३० ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वाङ्गं, मा मां हिनस्तु काकिनी ॥ ३१ ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वाङ्गं, मा मां हिनस्तु शाकिनी ॥ ३२ ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य

चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिनस्तु हाकिनी ॥ ३३ ॥ देवदेवस्य यच्चक्र, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिनस्तु याकिनी ॥ ३४ ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिन्सतु पन्नगाः ॥ ३५ ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिंसन्तु हस्तिनः ॥ ३६ ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिंसन्तु राक्षसाः ॥३७॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिंसन्तु वह्नयः ॥३८॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिंसन्तु सिंहकाः ॥ ३९ ॥ देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांग, मा मां हिंसन्तु दुर्ज्जनाः ॥ ४० ॥ देवदेवस्य यच्चक्र, तस्य चक्रस्य या विभा। तयाच्छादितसर्वांगं, मा मां हिंसन्तु भूमिपाः ॥ ४१ ॥ श्रीगौतमस्य या मुद्रा तस्या या भुवि लब्धयः। ताभिरभ्युद्यतज्योति-रहं सर्वनिधीश्वरः ॥४२॥ पातालवासिनो देवा, देवा भूपीठवासिनः।

स्वर्वासिनोऽपि ये देवाः, सर्वेरक्षन्तु मामितः ॥ ४३ ॥ येऽवधिलब्धयो ये तु, परमावधिलब्धयः । ते सर्वे मुनयो देवाः, मां संरक्षन्तु सर्वदाः ॥ ४४ ॥ दुर्जना भूतवेतालाः, पिशाचा मुद्गलास्तथा । ते सर्वेऽप्युपशाम्यन्तु, देवदेव प्रभावतः ॥ ४५॥ ॐ ह्रीं श्रीश्च धृतिर्लक्ष्मी-गौरी चण्डी सरस्वती । जयाम्बा विजया नित्या, क्लिन्नाऽजिता मद-द्रवा ॥ ४६॥ कामाङ्गा कामबाणा च, सानन्दा नन्दमा-लिनी । माया मायाविनी रौद्री, कला काली कलिप्रिया ॥ ४७ ॥ एताः सर्वा महादेव्यो, वर्तन्ते या जगत्त्रये । मह्यं सर्वाः प्रयच्छन्तु, कान्ति कीर्तिं धृतिं मतिम् ॥४८॥ दिव्यो गोप्य सुदुष्प्राप्य, श्रीऋषिमण्डलस्तवः । भाषित-स्तोर्थनाथेन, जगत्त्राणकृतोऽनघः ॥४९॥ रणे राजकुले वह्नौ, जले दुर्गे गजे हरौ । श्मशाने विपिने घोरे, स्मृतो रक्षति मानवम् ॥ ५० ॥ राज्यभ्रष्टा निजं राज्यं, पद-भ्रष्टा निजं पदम् । लक्ष्मीभ्रष्टा निजां लक्ष्मीं, प्राप्नुवन्ति न संशयः ॥ ५१॥ भार्यार्थी लभते भार्यां, पुत्रार्थी लभते सुतम् । वित्तार्थी लभते वित्तं, नरः स्मरणमात्रतः ॥५२॥ स्वर्णे रूप्ये पटे कांस्ये, लिखित्वा यस्तु पूजयेत् । तस्यैवा-ष्टमहासिद्धि—गृहे वसति शाश्वती ॥ ५३ ॥ भूर्जपत्रे

लिखित्वेदं, गलके मूर्ध्नि वा भुजे। धारितं सर्वदा दिव्यं, सर्वभीति-विनाशकम् ॥ ५४॥ भूतैः प्रेतैर्ग्रहैर्यक्षैः, पिशाचैर्मुद्गलैर्मलैः। वातपित्तकफोद्रेकै-मुच्यते नात्र संशयः ॥ ५५ ॥ भुर्भुवः स्वस्त्रयीपीठ वर्त्तिनः शाश्वता जिनाः। तैः स्तुतैर्वन्दितैर्दृष्टैर्यत्फल तत्फलं श्रुतौ ॥५६॥ एतद्गोप्यं महास्तोत्रं, न देयं यस्य कस्यचित्। मिथ्यात्ववासिने दत्ते, बालहत्या पदे पदे ॥ ५७ ॥ आचाम्लादि तपः कृत्वा, पूजयित्वा जिनावलीम्। अष्टसाहस्रिको जापः, कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ॥५८॥ शतमष्टोत्तरं प्रात-र्ये पठन्ति दिने दिने। तेषां न व्याधयो देहे, प्रभवन्ति न चापदः ॥ ५९ ॥ अष्टमासावधिं यावत्, प्रातः प्रातस्तु यः पठेत्। स्तोत्रमेतद् महातेजो, जिनबिम्बं स पश्यति ॥ ६० ॥ दृष्टे सत्यर्हतो बिम्बे, भवे सप्तमके ध्रुवम्। पदं प्राप्नोति शुद्धात्मा, परमानन्दनन्दितः ॥ ६१ ॥ विश्ववन्द्यो भवेद्ध्याता, कल्याणानि सोऽश्नुते। गत्वा स्थानं परं सोऽपि, भूयस्तु न निवर्त्तते ॥ ६२ ॥ इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं स्तुतीनामुत्तमं परम्। पठनात् स्मरणाज्जापाल्लभ्यते पदमुत्तमम् ॥ ६३ ॥ इति श्रीऋषिमण्डलस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

तिजयपहुत्त-नामकं-स्त्रोत्रम् ।

तिजय-पहुत्त पयासय, अट्ठ-महापाडिहेरजुत्ताणं,
समय-क्खित्त-ठिआणं, सरेमि चक्कं जिणंदाणं ॥ १ ॥
पणवीसा य असीआ, पनरस पन्नास जिणवरसमूहो ।
नासेउ सयल दुरिअं, भविआणं भत्ति-जुत्ताणं ॥ २ ॥
वीसा पणयाला वि य, तीसा पन्नत्तरी जिणवरिंदा ।
गह-भूअ-रक्ख-साइणि,-घोरु-वसग्गं पणासेउ ॥ ३ ॥
सित्तरि पणतीसा वि य, सट्ठी पंचेव जिणगणो एसो ।
वाहिजरुजलणहरिकरि,-चोरारिमहाभयं हरउ ॥ ४ ॥
पणपन्ना य दसेव य. पन्नट्ठी तहय चेव चालीसा ।
रक्खन्तु मे सरीरं, देवासुरपणमिआ सिद्धा ॥ ५ ॥ ॐ
हरहुंहः सरसुंसः, हरहुंहः तह य चेव सरसुंसः । आलिहिय
नाम-गब्भं, चक्कं किर सव्वओभद्दं ॥ ६ ॥ ॐ रोहिणी
पन्नत्ती, वज्जसिंखला तह य वज्जअंकुसिआ । चक्केसरि
नरदत्ता, कालि महाकालि तह गोरी ॥ ७ ॥ गन्धारी
महाज्वाला, माणवी वइरुट्ट तह य अच्छुत्ता । माणसि
महामाणसिआ, विज्जादेवीओ रक्खन्तु ॥ ८ ॥ पंचदस-
कम्मभूमिसु. उप्पन्नं सत्तरिं जिणाण सयं । विविहरय-

णाढवन्तो- [illegible]

अहमय- [illegible] ।

गयमोहा, [illegible]

संखविद्दु [illegible] ं, पंचानुत्तरसीम-

लिणाणं- [illegible] येनप्रोज्ज्वलपंचमी-

वाणवंत, [illegible] चाननलांच्छनः स

देशा, [illegible] पंचाश्रवरोधसाधन-

कथूवणं, [illegible] सुव्रतविधिप्रज्ञापना-

मुत्र, [illegible] ॥१३॥ [illegible] यथो प्राप्ता गतिं

लंतं, [illegible] तीर्थकरा शंकराः

निव्वुदं [illegible] ॥ १४ ॥ इति [illegible] संस्तूत्रितं, पंचज्ञान-

दामानुवत्सा इव सर्वदेशा, यदीयपादा [illegible] ॥ दीपाभं गुरुपंच-

[illegible] ज्यादिफलप्रकाशनपटुं

[illegible] परमेष्ठिनां स्थिरतया

[illegible] गृहेषु बहुशो या

न योगी न च योगिनां [illegible]

नो देवानांप्रियानां [illegible]

नो मार्गं न [illegible]

यत्ने श्रीजिन [illegible]

१. पंच

स्तुति स्तवन संग्रह

द्वितीया की स्तुति।

मन शुद्ध वंदो भावे भवियण श्रीसीमंधर रायाजी, पांचसें धनुष प्रमाण विराजित कंचन वरणी कायाजी। श्रेयांस नरपति सत्यकि नन्दन वृषभ लंछन सुखदायाजी, विजय भली पुखलावइ विचरे सेवे सुरनर पायाजी ॥१॥ काल अतीत जे जिनवर हुआ, होस्ये जेह अनन्ताजी, संप्रतिकाले पंचविदेहे वरते वीस विख्याताजी। अतिशय-वंत अनन्त गुणाकर जगबंधव जगत्राताजी, ध्यायक ध्येय स्वरूप जे ध्यावे, पावे शिव सुख शाताजी ॥ २ ॥ अर्थे श्रीअरिहन्त प्रकाशी सूत्रे गणधरआणीजी, मोह मिथ्या-त्व तिमिर भर नाशन अभिनव सूर समाणीजी। भवोदधि तरणी मोक्षनीसरणी नयनिक्षेप सोहाणीजी, ए जिन-वाणी अमिय समाणी आराधो भवि प्राणीजी ॥ ३॥ शासनदेवी सुरनर सेवी श्रीपंचांगुली माईजी, विघन विडारिणी संपत्ति कारिणी, सेवक जन सुखदाईजी। त्रिभुवनमोहिनी अंतरयामिनी जग जन ज्योति सवाईजी, सान्निध्यकारी संघ ने होज्यो श्रीजिनहर्ष सुहाईजी ॥४॥

पंचमी की स्तुतिः ।

पंचानंतकसुप्रपंचपरमानंदप्रदानक्षमं, पंचानुत्तरसीम-
दिव्यपदवीवश्याय मन्त्रोत्तमम् ॥ येनप्रोज्ज्वलपंचमी-
वरतपो व्याहारि तत्कारिणां, श्रीपंचाननलांच्छनः स
तनुतां श्रीवर्द्धमानः श्रियम् ॥१॥ ये पंचाश्रवरोधसाधन-
पराः पंचप्रमादीहरा, पंचाणुव्रतपंचसुव्रतविधिप्रज्ञापना-
सादराः ॥ कृत्वा पंचहृषीकनिर्जयमथो प्राप्ता गतिं
पंचमीं, तेऽमी संतु सुपंचमीव्रतभृतां तीर्थंकरा शंकराः
॥२॥ पंचाचारधुरीण पंचमगणाधीशेन संद्धत्रितं, पंचज्ञान-
विचार सारकलितं पंचेषु पंचत्वदम् ॥ दीपाभं गुरुपंच-
मारतिमिरेष्वेकादसी रोहिणी, पंचम्यादिफलप्रकाशनपटुं
ध्यायामि जैनागमम् ॥३॥ पंचानां परमेष्ठिनां स्थिरतया
श्रीपंचमेरुश्रियां, भक्तानां भविनां गृहेषु बहुशो या पंच-
दिव्यं व्यधात् । प्रह्वे पंचजने मनोमतकृतौ स्वारत्नपंचा-
लिका, पंचम्यादितपोवतां भवतु सा सिद्धायिका त्रायिका
॥४॥ इति श्रीज्ञानपंचमी स्तुतिः ॥

अष्टमी की स्तुति ।

चउवीशे जिनवर प्रणमुं हूँ नितमेव, आठम दिन करिये चन्द्रप्रभुजीनी सेव । मूरति मन मोहे जाणे पूनमचंद, दीठां दुःख जावे पामे परमानंद ॥ १ ॥ मिल चोसठ इंद्र पूजे प्रभुजीना पाय, इन्द्राणी अपच्छरा कर जोड़ी गुण गाय । नंदीसर द्वीपे मिल सुरवरनी कोड, अट्ठाई महोच्छव करतां होडा होड ॥ २ ॥ शत्रुञ्जय शिखरे जाणी लाभ अपार, चौमासे रहिया गणधर मुनि परिवार । भवियणने तारे देई धरम उपदेश, दूध साकरथी पिण वाणी अधिक विशेष ॥ ३ ॥ पोसह पडिक्कमणो करिये व्रत पच्चक्खाण, आठम तप करतां आठ करमनी हाण । आठ मंगल थाये दिन दिन कोड कल्याण, जिनसुखसूरि कहे शासनदेवी सुजाण ॥४॥

मौनैकादशी की स्तुतिः ।

अरस्य प्रव्रज्या नमि जिनपतेर्ज्ञानमतुलं, तथा मल्लेर्जन्म व्रतमपमलं केवलमलं ॥ वलक्षैकादश्यां सहसि लसदुद्दाममहसि, क्षितौ कल्याणानां क्षपति विपदः पंचकमदः ॥१॥ सुपर्वेन्द्रश्रेण्यागमनगमनैर्भूमिवलयं, सदा

स्वर्गत्येवा-हमहमिकया यत्र सलयं ॥ जिनानामप्यायुः क्षणमतिसुखं नारकसदः, क्षितौ० ॥ २ ॥ जिना एवं यानि प्राणिजगदुरात्मीयसमये, फलं यत्कर्त्तॄणामिति च विदितं शुद्धसमये ॥ अनिष्टारिष्टानां क्षितिरनुभवेयुर्बहुमुदः, क्षि० ॥३॥ सुराः सेंद्राः सर्वे सकलजिन-चंद्रप्रमुदिता-स्तथा च ज्योतिष्काखिलभवननाथाः समुदिताः ॥ तपो यत्कर्तॄणां विदधति सुखं विस्मितहृदः, क्षितौ० ॥४॥ इति मौनैकादशी स्तुतिः ॥

॥ अथ पार्श्वजिनस्तुति ॥ हरिगीत छंदः ॥

द्रेंद्रेंकि धपमप, धुधुमि धोंधों, ध्रस कि धर धपधोरवं ॥ दोदोंकि दोदों, दाग्डिदि दाग्डिदिकि, द्रमकि द्रणरण, द्रेणवं ॥ झझिझ्रूंकिझ्रूंझ्रूं, झणणरणरण, निजकि निजजन, रंजनं ॥ सुरशैल शिखरे, भवतु सुखदं, पार्श्वजिनपतिमज्जनं ॥ १ ॥ कटरेंगिनि थोगिनि, किटति गिग्डदां, धुधुकि धुटनट, पाटवं ॥ गुणगुणण गुणगण, रणकि णेंणें, गुणणगुणगण गौरवं ॥ झझि झेंकि झ्रूंझ्रूं, झगण रणरण, निजकि निजजन, सज्जना ॥ कलयंति कमला, कलितकलमल, मुकुल मीश, महेजिनाः ॥२॥

ठकि ठ्रैंकि ठ्रैंठ्रैं, ठहि्क ठहि्क, ठहि्पट्टा, ताड्यते॥ तललोंकि लोंलों, त्रैंपि त्रैंपिनि, डेंपिडेंपिनि वाद्यते,॥ उँ उँ कि उँ उँ, थुंगि थुंगिनि, धोंगिधोंगिनि, कलरवे॥ जिनमतमनंतं, महिम तनुतां, नमति सुरनर मुच्छवे॥३॥ पुँदांकि पुंदां पुपुड्दि पुँदां पुपुड्दि दोदों अंबरे॥ चाचपट चचपट, रणकि णें णें, डणण डेंडें डंबरे॥ तिहां सरगमपधुनि, निधपमगरस, ससस सस सुरसेवता॥ जिननाट्यरंगे कुशलमुनिशं, दिशतु शासन देवता॥ इति श्रीजिनकुशलसूरिजीकृत पार्श्वजिन स्तुतिः॥

आंबिल की स्तुतिः।

निरुपम सुखदायक जगनायक लायक शिव गतिगामीजी,
करुणासागर निजगुण आगर शुभ समता रस धामी जी॥
श्रीसिद्धचक्र शिरोमणि जिनवर ध्यावे जे मन रंगे जी,
ते मानव श्रीपालतणी परें पामे सुख सुर संगेजी॥१॥
अरिहन्त सिद्ध आचारिज पाठक, साधु महा गुणवंता जी,
दरिसण नाण चरण तप उत्तम, नव-पद जग जयवंताजी॥
एहनुं ध्यान धरंतां लहियें, अविचल पद अविनाशी जी,
ते सघला जिननायक नमियें, जिणए नीति प्रकाशीजी॥२॥

आसूमास मनोहर तिम वलि, चैत्रक मास जगीशेजी ॥
उजवाली सातमथी करियें, नव आंबिल नव दिवसेजी ॥
तेर सहस वलि गुणियें गुणणूं, नवपद केरो सारोजी ॥
इण परि निर्मलतप आदरियें, आगम साख उदारोजी ॥३॥
विमल कमलदल लोयण सुन्दर, श्री चक्केसरि देवीजी ॥
नवपद सेवक भविजन केरा, विघ्न हरो सुर सेवीजी ॥
श्रीखरतर गच्छनायक सद्गुरु, श्रीजिनभक्ति मुणिंदाजी ॥
तासु पसायें इणपरि पभणे, श्रीजिनलाभसूरिंदाजी ॥४॥

श्री नेमिनाथजी की स्तुतिः

सुर असुर वंदिय पाय पंकज मयणमल्ल अक्षोभित, घन-सघनश्याम शरीर सुंदर शंख लंछन शोभितं ॥ शिवादेवि नंदन त्रिजग वंदन भविक कमल दिनेश्वरं, गिरनार गिरवर शिखर वंदूं, नेमिनाथ जिनेश्वरम् ॥१॥ अष्टापदें श्री आदिजिनवर, वीर जिन पावापुरें, वासुपूज्य चंपापुरिय सीधा, नेमि रेवयगिरि वरे ॥ समेतशिखरे वीस जिनवर, मुगति पहुता मुनिवरू, चउवीस जिणवर नित्य वंदूं सयल संघे सुखकरू ॥२॥ इग्यार अंग उपांग बारे दश पयन्ना जाणियें, छच्छेद ग्रन्थ पसत्य अत्था

चार मूल वखाणियें ॥ अनुयोगद्वार उदार नंदीसूत्र जिनमत गाइयें, एह वृत्ति चूर्णी भाष्य पैंतालीश आगम ध्याइए ॥३॥ दुहुँ दिसें वालक दोय जेहने सदा भवियण सुखकरू, दुख हरे अम्बा लुंब सुन्दर दुरिय दोहग अप हरू ॥ गिरनार मंडण नेमि जिनवर चरणपंकज सेवियें, श्री संघसहुने सदा मंगल करो अम्बा देवियें ॥ ४ ॥ इति गिरनारमंडण श्रीनेमि० ॥

॥ अथ दीपमालिका स्तुतिः ॥

पापायां पुरि चारुषष्ठतपसा पर्यंकपर्यासनः, क्ष्मापालप्रभुहस्तिपालविपुल श्रीशुल्कशालामनु ॥ गोसे कार्त्तिकदर्शनागकरणे तूर्यारकांते शुभे, स्वातौ यः शिवमाप पापरहितं संस्तौमि वीरप्रभुम् ॥१॥ यद्गर्भागमनोद्भवव्रतवरज्ञानाक्षरासिक्षणे, संभूयाशु सुपर्वसंततिरहोचक्रे महस्तत् क्षणात्॥ श्रीमन्नाभिभवादिवीरचरमास्ते श्रीजिनाधीश्वराः संघाया नघ चेतसे विदधतां श्रेयांस्यनेनांसि च ॥ २ ॥ अर्थात्पूर्वमिदं जगाद जिनपः श्रीवर्द्धमानाभिध-स्ततपश्चाद् गणनायका विरचयांचक्रुस्तरां सूत्रतः ॥ श्रीमत्तीर्थसमर्थनैकसमये सम्यग्दृशांभूस्पृशां भूयाद्भावुककारकप्रवचनं

चेतश्चमत्कारियत् ॥ ३ ॥ श्रीतीर्थाधिप तीर्थभावनपरा सिद्धायिका देवता, चंचच्चक्रधरा सुरा सुरनता पायादपायादसौ । अर्हन् श्रीजिनचंद्रगीस्सुमतिनो भव्यात्मनः प्राणिनोः, या चक्रेऽत्रमकष्टहस्तिनिधने शार्दूलविक्रीडितम् ॥४॥ इति दीपमालिकास्तुतिः ॥

अथ श्री महावीर स्वामी की थुई ।

बालापणै डावो पाय चांप्यो, जाणै सहू थर हर मेरु कांप्यो । इसुं महावीरतणुं चरित्र, हूं सांभली जन्म करुं पवित्र ॥ १॥ जेणं हण्या हेलै कर्मअठ, तीखे कुहाडे जिम खीर कठ । मिली करे चौसठि इन्द्र सेवा, ते देव चौवीसै मे नमेवा ॥ २ ॥ मीठो जिसो खीरसमुद्र पाणी, मीठी जिसी वीर जिनेन्द्रवांणी । जे आदरे मूके मान मेलि, तियांतणी वांधे पुण्यवेलि ॥ ३ ॥ जे पंथीया तीरथ पंथ ध्यावे, ते उत्तरी संकट कर पावे । सिद्धायिका जे मन मांहि आणे, तिहांतणा चिंत्याकाज चढे प्रमाणे ॥ ४ ॥

अथ श्री आदिनाथजीनी स्तुतिः ।

भरहेसर कारिअ देवहरे, अट्ठावय पव्वय सोह करे ॥ १ ॥
निअवन्नपमाण सरीर धरे, चउवीसे वंदु तित्थयरे ॥ २ ॥

केवल दंसण नाणधरा, बहू पंकक्कुबंक कलंकहरा ॥ ३ ॥ अरिहंत सभागम देवगणा, विगणं तुअणु तदहंसगुणा ॥४॥ श्री आदिनाथजीनी थुई संपूर्णः ॥

पर्युषणकी स्तुति ।

वलि वलि हुं ध्यावुं, गाउं जिनवर वीर । जिनपर्व पजुसण, दाख्या धर्मनी सीर । आषाढ़ चौमासे हुंतीदिन पच्चास । पडिक्कमणुं संवच्छरी, करिये त्रण उपवास ॥१॥ चउवीसे जिनवर पूजा सत्तर प्रकार, करिये भले भावे भरिये पुण्य भंडार । वलि चैत्यप्रवाडे फिरतां लाभ अनंत, इम परव पजुसण सहुमें महिमावंत ॥ २ ॥ पुस्तक पूजावी नव वांचनाये वंचाय, श्री कल्पसूत्र जिहां सुणतां पाप पुलाय । प्रतिदिन परभावना धूप अगर उखेव, इम भवियण प्राणी परव पजुसण सेव ॥३॥ वलि साहम्मीवच्छल करिये वारं वार, केई भावना भावे केई तपसी शीलधार । अड दीह पजुसण एम सेवंत आणंद, सुयदेवी सानिध्य कहे जिनलाभसूरिंद ॥४॥

नवपद चैत्यवंदन ।

श्री अरिहंत उदार कान्ति, अति सुन्दर रूप । सेवो सिद्ध अनन्त शान्त, आतम गुण भूप ॥ १ ॥ आचारज उवज्झाय साधु, समतारस धाम । जिनभाषित सिद्धान्त शुद्ध, अनुभव अभिराम ॥ २ ॥ बोधवीज गुण संपदाए, नाण चरण तव शुद्ध । ध्यावो परमानन्द पद, ए नवपद अविरुद्ध ॥३॥ इह परभव आनंदकंद, जगमांही प्रसिद्धो । चिन्तामणि सम जास जोग बहु पुण्ये लद्धो ॥४॥ तिहुअण सार अपार एह, महिमा मन धारो । परिहर पर जंजाल जाल, नित एह संभारो ॥ ५ ॥ सिद्धचक्र पद सेवतां, सहजानंद स्वरूप । अमृतमय कल्याणनिधि, प्रकटे चेतन भूप ॥६॥

पंचमी का वड़ा स्तवन ।

प्रणमुं श्रीगुरु पाय, निर्मल ज्ञान उपाय । पंचमी तप भणूंए, जन्म सफल गिणुंए ॥ १॥ चउवीसमो जिनचंद, केवलज्ञान दिणंद । त्रिगडे गहगह्यो ए, भवियणने कह्यो ए ॥ २ ॥ ज्ञान वडूं ससार, ज्ञान मुगति दातार । ज्ञान दीवो कह्यो ए, साचो सद्दह्यो ए ॥ ३ ॥ ज्ञान

लोचन सुविलास, लोकालोक प्रकाश। ज्ञान विना पशु ए, नर जाणे किस्युं ए ॥ ४ ॥ अधिक आराधक जाण भगवती सूत्र प्रमाण। ज्ञानी सर्वतु ए, किरिया देशतु ए ॥ ५ ॥ ज्ञानी श्वासोश्वास, करम करे जे नास। नारकीने सही ए, कोड वरस कही ए ॥ ६ ॥ ज्ञान तणो अधिकार, बोल्या सूत्र मझार। किरिया छै सही ए, पण पाछे कही ए ॥ ७ ॥ किरिया सहित जो ज्ञान, हुवे तो अति परधान। सोनाने सूरो ए, शंख दूधे भर्यो ए ॥८॥ महानिशीथ मझार, पंचमी अक्षर सार। भगवंत भाखियो ए, गणधर साखियो ए ॥९॥

ढाल दुसरी—कालहराकी देशी।

पंचमी तपविधि सांभलो, जिम पामो भव पारोरे। श्री अरिहंत इम उपदिशे, भवियणने हितकारो रे ॥पं०॥ ॥१॥ मिगसर माह फागुण भला, जेठ आषाढ़ वैशाखो रे। इण षट मासे लीजिये, शुभ दिन सद्गुरु शाखो रे ॥ पं० ॥ २ ॥ देव जुहारी देहरे, गीतारथ गुरु वंदीरे। पोथी पूजो ज्ञाननी, सगति हुवे तो नंदीरे ॥ पं० ॥३॥ बेकर जोड़ी भावसुं, गुरुमुख करो उपवासो रे। पंचमी

पडिक्कमणो करो, पढ़ो पंडित गुरु पासो रे ।।पं० ।।४।।
जिण दिन पंचमी तप करो, तिण दिन आरंभ टालो रे।
पंचमी स्तवन थुई कहो, ब्रह्मचारिज गिण पालो रे ।।पं० ।। ५ ।। पांच मास लघु पञ्चमी, जीवजीव उत्कृष्टी रे। पांच वरस पांच मासनी, पचमी करो शुभ दृष्टि रे ।। पं० ।। ६ ।।

ढाल तीसरी—उल्लालेकी देशी।

हवे भवियण रे पंचमी ऊजमणो सुणो, घर मारू रे वारू धन खरचो घणो। ए अवसर रे आवंता वलि दोहिलो, पुण्य जोगे रे धन पामंता सोहिलो ।।.उल्लालो) सोहिलो वलिय धन पामंता पण धर्मकाज किहां वली, पंचमी दिन गुरु पास आवी कीजिये काउस्सग रली। त्रण ज्ञान दरिसण चरण टीकी देई पुस्तक पूजिये, थापना पहिली पूज केसर सुगुरु सेवा कीजिये ।। १ ।। (ढाल)—सिद्धान्तनी रे पाँच परत वीटांगणां, पाँच पूठारे मुखमल सूत्र प्रमुख तणां। पाँच डोरारे लेखण पाँच मजीसणा, वासकूंपारे कांवी वारूवतरणा ।। (उल्लालो)—वतरणा वारू वलि य कमली पाँच झिलमिल अतिभली, स्थाप-

नाचारिज पाँच ठवणी मुहपत्ती पडपाटली। पटसूत्र पाटी पंच कोथली पंच नवकार-वालियाँ, इण परे श्रावक करे पंचमी ऊजमणुं उजवालियाँ ॥ २ ॥ (ढाल)—वलि देहरेरे स्नात्र महोत्सव कीजिये, घर सारूरे दान वलि तिहाँ दीजिए। प्रतिमाजीनेरे आगल ढोवणुं ढोइए, पूजानाँरे जे जे उपगरण जोइये ॥ (उल्लालो)—जोइये उपकरण देवपूजा काज कलश भृंगार ए, आरती मंगल थाल दीवो धूपधाणुं सार ए। घनसार केशर अगर सुखड अंगलूहणो दीसए, पंच पंच सघली वस्तु ढोवो सगतिसुं पचवीश ए ॥ ३ ॥ (ढाल)—पंचमीतारे साहम्मी सर्व जिमाडियें, रात्रि जोगेरे गीत रसाल गवाडियें। इण करणीरे करतां ज्ञान आराधियें, ज्ञान दरिसणरे उत्तम मारग साधियें ॥ (उल्लालो)—साधियें मारग एह करणी ज्ञान लहिये निरमलो, सुरलोक ने नरलोकमाँहे ज्ञानवंत ते आगलो। अनुक्रमे केवलज्ञान पामी शाश्वता सुख जे लहे, जे करे पंचमी तप अखंडित वीर जिणवर इम कहे ॥ ४ ॥ (कलश)— एम पंचमी तप फल प्ररूपक वर्द्धमान जिणेसरो, मैं थुण्यो श्री अरिहंत भगवंत अतुल वल अलवेसरो। जयवंत श्रीजिनचन्द-

सूरिज सकलचंद नमंसियो। वाचनाचारिज समयसुन्दर भगति भाव प्रशंसियो ॥५॥ इति ॥

॥ पंचमी का लघु स्तवन ॥

पंचमी तप तुमे करोरे प्राणी, निर्मल पामो ज्ञानरे। पहिलूं ज्ञान ने पीछे किरिया, नहीं कोई ज्ञान समानरे ॥ पं० ॥ १ ॥ नंदीसूत्र में ज्ञान वखाण्युं, ज्ञानना पंच प्रकाररे। मति श्रुति अवधि अने मनःपर्यव, केवलज्ञान श्रीकाररे ॥ पं० ॥ २ ॥ मति अठ्ठावीस श्रुत चउदे वीश, अवधि छे असंख्य प्रकाररे। दोय भेदे मनःपर्यव दाख्युं केवल एक प्रकाररे ॥ पं० ॥ ३ ॥ चंद्र सूरज ग्रह नक्षत्र तारा, तेस्युं तेज आकाशरे। केवलज्ञान समो नहीं कोई, लोकालोक प्रकाशरे ॥पं०॥४॥ पारसनाथ प्रसाद करीने महारी पूरो उमेदरे। समयसुन्दर कहे हुंपण पामुं, ज्ञाननो पांचमो भेदरे ॥ पं० ॥ ५ ॥

॥ अथ पार्श्वजिनस्तवनम् ॥

अमल कमल जिम धवल विराजे, गाजे गोडी पास। सेवा सारे जेहनी, सुर नर मन धरिय उल्लास ॥ १ ॥ सोभागी साहिब मेरा वे, अरिहाँ सुग्यानी पास जिणंदा

वे ।।आंकणी ।।सुन्दर सूरति मूरति सोहे, मो मन अधिक सुहाय । पलक पलकमें पेखतां मानुं, नव नवि छबिय देखाय ।। २ ।। सोभा० ।। अ० ।। भव दुःखभंजन जन-मनोरंजन, खंजन नयन सुरंग । श्रवण सुणी गुण ताहरा, माहरा विकस्या अंगो अंग ।। ३ ।। सो० ।। अ० ।। दूर-थकी हुँ आयो वहिने, देव लह्यो दीदार । प्रारथियां पहिडे नहिं, साहिबा एह उत्तम आचार ।।४ ।। सो० ।। अ० ।। प्रभु मुखचंद विलोकित हरखित, नाचत नयन चकोर । कमल हसे रवि देखीने, जिम जलधर आगम मोर ।।५।। ।। सो० ।। अ० ।। किसके हरिहर किसके ब्रह्मा, किसके दिल में राम । मेरे मनमें तूं वसे, साहिब शिवसुखनो ही ठाम ।। ६ ।। सो० ।। अ० ।। माता वामा धन्य पिता जसु, श्री अश्वसेन नरेश । जनमपुरी वणारसी, धन धन काशीनो देश ।। ७ ।। सो० ।। अ० ।। संवत सतरेशे बावीसें, बदी वैशाख वखाण । आठम दिन भले भावशुं, मारी जात्र चढी परिमाण ।।८।। सो० ।। अ०।। सान्निध्य कारी विघ्ननिवारी, परउपकारीपास । श्रीजिनचंदजुहा-रतां, मोरी सफल फली सहु आश ।।९ ।। सो० ।। अ० ।।

॥ एकादशी का बड़ा स्तवन ॥

समवसरण बेठा भगवंत, धरम प्रकाशे श्री अरिहंत। बारे परषदा बैठी जुडी, मिगसिर शुदि इग्यारस बड़ी ॥१॥ मल्लिनाथना तीन कल्याण, जन्म दीक्षा ने केवलज्ञान। अर दीक्षा लीधी रूवडी ॥ मि० ॥ २ ॥ नमिने उपनुं केवलज्ञान, पाँच कल्याणक अति परधान। ए तिथिनी महिमा एवडी ॥ मि० ॥ ३ ॥ पाँच भरत ऐरवत इमहीज, पाँच कल्याणक हुवे तिमहीज। पंचासनी संख्या परगडी ॥ मि० ॥ ४ ॥ अतीत अनागत गणतां एम, दोढसौ कल्याणक थाये तेम। कुण तिथि छे ए तिथि जेवडी ॥ मि० ॥ ५ ॥ अनन्त चोवीसी इणपरें गिणो, लाभ अनन्त उपवासाँ तणो। ए तिथि सहु तिथि शिर राखडी ॥ मि० ॥ ६ ॥ मौनपणे रह्या श्री मल्लिनाथ, एक दिवस संयम व्रत साथ। मौनतणी प्रवृत्ति इम पडी ॥ मि० ॥ ७ ॥ अठ पुहरी पोसह लीजिये, चौविहार विधिसुं कीजिये। पण परमाद न कीजे घड़ी ॥ मि० ॥ ८ ॥ वरस इग्यार कीजे उपवास, जावज्जीव पण अधिक उल्हास। ए तिथि मोक्ष तणी पावडी

॥ मि० ॥ ९ ॥ उजमणुं कीजे श्रीकार, ज्ञाननां उपगरण इग्यारे इग्यार। करो काउस्सग गुरु पाये पडी ॥ मि०॥ ॥ १०॥ देहरे स्नात्र करीजे वली, पोथी पूजीजे मनरली। मुगतिपुरी कीजे ढुकडी ॥ मि० ॥ ११ ॥ मौन इग्यारस महोटुं पर्व, आराध्यां सुख लहिये सर्व। व्रत पच्चक्खाण करो आखडी ॥ मि० ॥ १२ ॥ जेसल सोल इक्याशी समे, कीधुं स्तवन सहु मन गमे; समयसुन्दर कहे करो द्यावडी ॥ मि० ॥ १३ ॥

श्रीवीरजिन विनतिरूप—अमावस कास्तवन ॥

वीर सुणो मोरी विनती, कर जोडी हो कहुं मननी बात। बालकनी परे विनवुं, मोरा स्वामी हो तुमे त्रिभुवन तात ॥ वीर० ॥ १ ॥ तुम दरशण विण हुं भम्यो, भवामांहेहो स्वामी समुद्र मझार। दुःख अनंता मैं सह्या, ते कहेतां हो किम आवे पार ॥ वी० ॥ २ ॥ पर उपकारी तूं प्रभु, दुःख भांजे हो जग दीनदयाल। तिण तोरे चरणे हुं आवीयो, स्वामी मुजने हो निज नयण निहाल ॥ वी० ॥ ६ ॥ अपराधी पिण उद्धर्या, तें कीधी हो करुणा मोरा स्वाम। परम भगत हुं ताहरो, तेने

तारो हो नही ढीलनो काम ॥ वी ॥ ४ ॥ शूलपाणि प्रतिबूझव्या, जिण कीधा हो तुझने उपसर्ग। डंक दीयो चण्डकोसीये, तैं दीधो हो तसु आठमो स्वर्ग॥ ॥ वी० ॥ ५ ॥ गोशालो गुण हीनडो, जींणे बोल्या हो तोरा अवरणवाद । ते बलतो तैं राखियो, शीतल लेश्या हो मूकी सुप्रसाद ॥ वी० ॥ ६ ॥ ए कुण छे इन्द्रजा-लीयो, इम कहितां हो आयो तुम तीर । ते गौतमने तैं कीयो, पोतानो हो प्रभुतानो वजीर ॥ वी० ॥ ७ ॥ वचन उथाप्या ताहरा, जे झगड्या हो तुझ साथ जमाल। तेहने पिण पनरे भवे, शिवगामी हो तैं कीधो कृपाल ॥ ॥ वी ॥ ८ ॥ ऐमतो ऋषि जे रम्यो, जल मांहे हो बांधी माटीनी पाल । तिरतो मूकी काचली, तैं तार्यो हो तेहने तत्काल ॥ वी० ॥ ९ ॥ मेघकुमर ऋषि दुहव्यो, चित्त चूका हो चारित्रथी अपार । एकावतारी तेहने, तैं कीधो हो करुणा—भंडार ॥ वी० ॥ १० ॥ बारे वरस वेश्या घरे रह्यो, मूका हो संयमनो भार। नंदिषेण पिण उद्धर्यो, सुर पदवी हो दीधी अति सार ॥ वी० ११ ॥ पञ्च महाव्रत परिहरी, गृहवासे हो वसियो वरस चौवीस। ते पण आर्द्रकुमारने, तैं तार्यो हो तोरी एह जगीस ॥

वी० ॥ १२ ॥ राय श्रेणिक राणी चेलणा, रूप देखी हो चित्त चूका जेह। समवसरण साधु साधवी, तें कीधा हो आराधक तेह ॥ वी० ॥ १३ ॥ व्रत नहीं नहीं आखडी, नहीं पोसह हो नहीं आदर दोख। ते पिण श्रेणिक रायने तें कीधो हो स्वामी आप सरीख ॥ वी० ॥ १४ ॥ इम अनेक तें उद्धर्या, कहुं तोरा हो केता अवदात। सार करो हवे माहरी, मनमांहे हो आणो मोरडी वात ॥ वी० ॥ १५ ॥ सूधो संजम नवि पले, नहीं तेहवो हो मुझ दरसन नाण। पिण आधार छ एटलो, एक तोरो हो धरूं निश्चल ध्यान ॥ वी० ॥ १६ ॥ मेह महीतल वरसतो, नवि जोवे हो सम विषमी ठाम। गिरुआ सहिजे गुणकरे, स्वामी सारो हो मोरा वांछित काम ॥ वी० ॥ १७ ॥ तुम नामे सुखसंपदा, तुम नामे हो दुख जावे दूर। तुम नामे वांछित फले, तुम नामे हो मुझ आणंदपूर ॥ वी० ॥१८॥ (कलश)—इम नगर जेसलमेर मंडण तीर्थंकर चौवीसमो, शासनाधीश्वर सिंह लंछन सेवतां सुरतरु समो। जिनचन्द त्रिशला मात नन्दन सकलचन्द कलानिलो, वाचनाचारिज समयसुन्दर संथुण्यो त्रिभुवनतिलो ॥ १९ ॥ इति ॥

पूर्णिमा का स्तवन ।

श्रीसिद्धाचल मंडण स्वामीरे, जगजीवन अंतरजामी-रे। एतो प्रणमुॅ हुं शिरनामी, जात्रीडा जाणा नवाणुं करियेरे-एतो करिये तो भवजल तरिये ॥ जा० ॥ १ ॥ श्रीऋषभ जिनेश्वर रायारे, जिहां पूर्व नवाणुं आयारे। प्रभु समवसर्या सुखदाया ॥ जा० ॥ २ ॥ चैत्री पूनम दिन वखाणुरे, पांच कोडीसुं पुडरीक जाणुंरे। जे पाम्या पद निरवाणुं ॥ जा० ॥ ३ ॥ नमि विनमि राजा सुखसाते रे, वे वे कोडी साधु संघातेरे। एतो पहोता पद लोकांते ॥ जा० ॥ ४ ॥ काति पूनमें कर्मने तोडीरे, जिहां सिद्धा मुनि दश कोडीरे। ते तो वंदो वेकर जोडी ॥ जा० ॥ ५ ॥ इम भरतेसरने पाटेरे, असख्याता मुनि थिर थाटेरे। पाम्या मुगति रमणी ए वाटे ॥ जा० ॥ ६ ॥ दोय सहस मुनि परिवाररे, थावच्चासुत सुखकाररे। सयपंच सैलग अणगार ॥ जा० ॥ ७ ॥ वली देवकी सुत सुजगीसरे, सिद्धा वहु जादव वंशरे। ते प्रणमुॅ रे मन हंस ॥ जा० ॥ ८ ॥ पांचे पांडव एणे गिरि आयारे, सिद्धा नव नारद ऋषि रायारे। वली सांब प्रद्युम्न कहाया ॥

जा० ॥ ६ ॥ ए तीरथ महिमावंतरे, जिहां सिद्धा साधु अनन्तरे। इम भाषे श्रीभगवंत ॥ जा० ॥ १० ॥ उज्ज्वलगिरि समो नहीं कोयरे, तीरथ सघला मैं जोयरे। जे फरस्यां पावन होय ॥ जा० ॥ ११ ॥ एकल आहारी सचित्त परिहारीरे, पदचारी ने भूमिसंथारीरे। शुद्ध समकित ने ब्रह्मचारी ॥ जा० ॥ १२ ॥ एम छहरी जे नर पालेरे, बहु दान सुपात्रे आलेरे। ते जनम मरण भय टाले ॥ जा० ॥ १३ ॥ धन धन ते नर ने नारीरे, भेटे विमलाचल एक तारीरे। जाउं तेहनी हुं वलिहारी ॥ जा० ॥ १४ ॥ श्री जिनचन्दसूरि सुपसायेरे, जिनहर्ष हिए हुलसायेरे। इम विमलाचल गुण गाये ॥ जा० ॥ १५ ॥ इति ॥

दादा श्रीजिनदत्तसूरिजी का स्तवन ।

सिरि सुयदेव पसाय करी, गुरु श्रीजिनदत्तसूरि। वंदिसु खरतर गच्छरयण, सूरि जेम गुणपूरि ॥१॥ संवत इग्यारइ वरसइ, बत्तीसइ जसु जम्म। वाछिग मंत्रि पिता जणणी, बाहडदेवि सुरम्म ॥ २ ॥ इकतालइ जिन वइ गहिय, गुणहत्तरइ जसु पाटि। वइसाखा वदि छट्ठि दिणि,

पय पणमी-सुर थाटि ॥ ३ ॥ अंबड सावइ कर लिहिय, सोवन अक्षर अंब । जुगप्पहाण जगि वयदीयउए, सिरि सोहमपडिबिंब ॥ ४ ॥ जिणि चउसट्ठि जोगिण जिणिय, खित्तवाल बावन्न । साइणि डाइणि विज्जुलिय, पुवबइ नामि न अन्न ॥ ५ ॥ सूरिमन्त बल करि सहिय, साहिय जिण धरणिंद । सावय साविय लक्ख इग, पडिबोहिय जिणबिंब ॥ ६ ॥ अरि करि केसरि दुट्ठदल, चउविह देव निकाय । आण न लोपइ कोई अगह, जसु पणमइ नर राय ॥ ७ ॥ संवत बार इग्यार ममइ, अजयमेर पुरि ठाणि । इग्यारिसि आसाढ़ सुदि, सग्गिपत्तु सुह झाणि ॥ ८ ॥ श्रीजिनवल्लहसूरि पए, श्रीजिणदत्त मुणिंद । विग्घहरण मङ्गल करण, करउ पुण्य आणंद ॥६॥ इति ॥

दादा श्रीजिनकुशलसूरि का स्तवन ॥

रिसह जिनेसर सो जयो, मंगलकेलि निवास । वासव वंदिय पयकमल, जग सहु पूरइ आस ॥ १ ॥ (चउपइ)—चंदकुलंबर पूनिम चंद, वंदउ श्री जिनकुशल मुणिंद । नाम मंत्र जसु महिम निवास, जो समरइ तसु पूरे आस ॥ २ ॥ मरुमंडल समियाणो गांम,

धण कण कंचन अति अभिराम। जिहां वसइ जिल्हागर मंत्रि, जइतसिरी तसु घरणी पवित्र ॥३॥ जसु तेरे सइं-तीसइ जन्म, सइंतालइ सिरि संयम रम्म। पाटण सत-हत्तरइ जसु पाट, निव्यासिई तसु सुरगइ वाट ॥४॥ भूमं-डल सुरगइ पायाल, सचराचर जुग इण कलिकाल। प्रभु प्रताप नवि मानइ सोय, मइ नवि नयणे दीठो जोय ॥५॥ निरधन लहइ धन धन्न सुवन्न, पुन्नहीण पामइ बहु पुन्न। असुखी पामइ सुख संतान, एकमनइ करतां गुरु ध्यान ॥ ६ ॥ प्रभु समरण आपद सहु टलइ, सयल शांति सुख संपत्ति मिलइ। आधि व्याधि चिंता संताप, ते छंडी नवि मंडइ व्याप ॥७॥ पाप दोष नवि लागे तिहां, प्रभु दरसण उत्कंठा जिहां। सेवंतां सुरतरुनी छांहि, निश्चय दालिद्र मेटइ बांहि ॥ ८ ॥ विसहर विस नरविस नरनाह, भूत प्रेत ग्रह व्यन्तर राह। प्रभु नामइ जे न करइ पीड, भाजइ आवठ भव भय भीड ॥६ ॥ रोग सोग सवि नासइ दूर, अंधकारजिम उगइ सूर। मूरख फीटी पंडित थाय, प्रभु पसाय दुःख दुरिय पुलाय ॥ १० ॥ धन धन जिनशासन उद्योत, तिहां अच्छइ भवसायर पोत। सो सद्गुरु मइ भेटउ आज, रलीय रंग खीधा सवि काज ॥

॥ ११ ॥ (ढाल)—आज घर आंगण सुरतरु फलियो, चिंतामणि कर कमले मिलियो। उदयो परमाणंद धरे ॥१२॥ आज दीह मइ धन्ने गिणियो, जुगपवरागम जो मइ थुणियो। चन्द्रगच्छ महिमानिलोए ॥ १३ ॥ कांई करो पृथिवीपति सेवा, कांई मनावो देवी देवा। चिंतां आणो कांई मने ॥ १४ ॥ वार वार ए कवित भणीजइ, श्री जिनकुशलसूरि समरीजइ। सरइ काज आयास विण ॥ १५ ॥ संवत चउद इक्यासो वरसइ, मलिकवाहणपुर में मन हरसइ। अजिय जिणेसर वर भवणइ ॥ १६ ॥ कीयो कवित ए मंगल कारण, विघन हरण सहु पाप निवारण, कोई मत संसो धरो मनइ ॥१७॥ जिम जिम सेवइ सुर नर राया, श्री जिनकुशल मुनीसर पाया। जयसागर उवज्झाय थुणे ॥ १८ ॥ इम जो सद्गुरु गुण अभिनंदइ, ऋद्धि समृद्ध सो चिर नंदइ। मनवंछित फल मुझ हुवो ए ॥१९॥

गुरुदेव श्री जिनदत्तसूरिजी का स्तवन ॥

श्री जिनदत्तसुरिंदा, परम गुरु श्री जिनदत्तसूरिंदा परम दयाल दया कर दीजे, दरिसन परम आणंदा ॥प०

॥ श्री० ॥ १ ॥ जंगम सुरतरु वंछित दायक, सेवक जन सुखकंदा। सद्गुरु ध्यान नाम नित समरण, दूर हरण दुःख दंदा ॥प० श्री ॥२॥ जिनपद सेवक सांनिध्यकारी राखिये गुरु राजिंदा। कर जोडी विनय युत विनवे, श्री जिनहरख सूरिंदा ॥प० श्री० ॥३॥

गुरुदेव श्री जिनकुशलसूरिजी का स्तवन ॥

कुशल गुरु अब मोहि दरिसण दीजे ॥ अ० ॥ ऐसी भांति करो मेरे सद्गुरु, ज्युं मन मूढ पतीजे ॥ कु० ॥ १ ॥ जलदातार विरुद अमृतरस, श्रवण अंजिल भर पीजे। सुरतरु सम दरिसण विन देख्यां, कहो नयण किम रिझें ॥ कु० ॥२॥ परम दयाल कृपाल कृपानिधि, इतनी अरज सुणीजे। परम भगत जिनराज तुम्हारो, अपनो कर जाणीजे ॥ कु० ॥ ३ ॥

॥ दादा गुरु का सवइया ॥

षावन वीर किये अपणे वस, चौसठ जोगण पाय लगाई डाइण साइण व्यंतर खेचर, भूतरु प्रेत पिशाच पुलाई ॥ बीजतडक्क, कडक्क, भटक्क, अटक्क रहे जु

खटक्क न काई। कहे धर्मसिंह लंघे कुण लीह, दीये जिनदत्त का एक दुहाई ॥ १॥ राजे थुंभ ठोर ठोर एसो देव नहीं और, दादो दादो नामतें जगत्र जस्स गायो है। आपणे ही भाव आय पूजे लख लोक पाय, प्यासनकूं रान मांझ, पानी आन पायो है ॥ वाट घाट शत्रु थाट हाट पुरपाटण में, देह गेह नेहसुं कुशल वरतायो है। धर्म सिंह ध्यान धरे सेवकां कुशल करे, साचो श्रीजिनकुशल गुरु नाम युँ कहायो है ॥ २ ॥

श्रीगौडीपार्श्वजिन वृद्धस्तवनम् ॥

(दूहा)—वाणी ब्रह्मवादिनी, जागै जग विख्यात। पास तणा गुण गावतां, मुज मुख वसज्यो मात ॥ १ ॥ नारंगै अणहिलपुरें, अहमदावादें पास। गौडीनो धणी जागतो सहुनी पूरे आस ॥२॥ शुभ वेला शुभ दिन घड़ी, मुहुरत एकमंडाण ॥ प्रतिमा तें इह पासनी, थई प्रतिष्ठा जाण ॥ ३ ॥ (ढाल) —गुणहि विशाला मंगलिक माला वामानो सुत साचोजी। धण कण कंचण मणि माणक दे, गौडीनो धणी जाचौजी (गु०) ॥४॥ अणहिलपुर पाटण मांहे प्रतिमा, तुरक तणें घर हुंतीजी। अश्वनी भूमि

अश्वनी पीडा, अग्ननी वालि विगूतीजी (गु०) ॥ ५ ॥ जागंतो जक्ष जेहने कहिये, सुहणों तुरकनैं आपै जी। पास जिनेसर केरी प्रतिमा, सेवक तुज संतापै जी (गु०) ॥ ६ ॥ प्रह ऊठीने परगट करजे, मेघा गोठीने देजे जी। अधिक म लेजे ओछो म लेजे, टक्का पांचसै लेजे जी ॥ गु० ॥ ७ ॥ नहिं आपिस तो मारिस मुरडीस, मोरबंध बधास्ये जी। पुत्र कलत्र धन हय हाथी तुझ, लच्छी घणी घर जास्यैजी ॥ गु० ॥ ८ ॥ मारग पहिलो तुझनें मिलस्यै, सारथवाह जे गोठीजी। निलवट टीलो चोखा चेढ्या, वस्तु वहे तसु पोठीजी ॥ गु० ॥ ९ ॥ (दूहा) —मनसुं बीहनो तुरकडो, मानें वचन प्रमाण। बीबीनें सुहणा तणो, संभलावै सहीनाण ॥ १० ॥ बीबी बोले तुरकने, बडा देव हैं कोय। अबस ताब परगट करो, नहीं तर मारै सोय ॥ ११ ॥ पाछली रात परोडीयै, पहेली बांधै पाज। सुहणा माहें सेठने, सभलावै जक्षराज ॥ १२ ॥ (ढाल)—एम कही जक्ष आयो राते, सारथवाहने सुहणैं जी। पास तणी प्रतिमा तूँ लेजे, लेतो सिर मत धूणे जी ॥ एम० ॥ १३॥ पांचसै टक्का तेहने आपे,

अधिको म आपिस वारु जी। जतन करी पहुंचाडे थानिक, प्रतिमा गुण संभारु जी ॥ एस० ॥ १४ ॥ तुझने होमी बहु फलदायक, भाई गोठी सुणजे जी। पूजीस प्रणमीश तेहना पाया, प्रह उठीने थुणजे जी ॥ ए० ॥ १५ ॥ सुहणो देईने सुर चाल्यो, आपणे थानक पहुँतो जी। पाटण मांहें सारथवाहु, हींडे तुरकने जोतो जी ॥ ए० ॥ १६ ॥ तुरकें जातां दीठो, गोठी, चोखा तिलक लिलाडे जी। संकेत पहुतो साचो जाणी, बोलावें बहुलाडेजी ॥ ए० ॥ १७॥ मुझ घर प्रतिमा तुझने आपुं, पास जिणेसर केरीजी। पांचसें टका जो मुझ आपें, मोल न मांगु फेरी जी ॥ ए० १८ ॥ नाणो देई प्रतिमा लेई, थानक पहुंतो रंगे जी। केसर चंदन मृग-मद घोली, विधिसुं पूजा रंगे जी ॥ ए० ॥ १९ ॥ गादी रूडी रुनी कीधी, ते मांही प्रतिमा राखें जी। अनुक्रम आव्या परिकर माहें, श्री संघ ने सुर साखें जी ॥ ए० ॥ २० ॥ उच्छव दिन दिन अधिका थाये, सत्तर भेद सनात्रोंजो ॥ ठाम ठामना दरसण करवा, आवें लोक प्रभातो जी ॥ ए० ॥ २१॥ (दूहा)—इक दिन देखें अवधिसुं, परिकर-

पुरनो भङ्ग । जतन करूं प्रतिमा तणो, तीरथ अछै अभङ्ग ॥२२॥ सुहणो आपै सेठने, थल अटवी उज्जाड । महिमा थास्यै अति घणो, प्रतिमा तिहां पहुँचाड ॥ २३ ॥ कुशल खेम तिहां अछे, तुझनें मुझने जाणि । संका छोडी काम करि, करतो म करि संकाणि ॥२४॥ (-ढाल)—पास मनोरथ पूरा करै, वाहण एक वृषभ जोतरै । परिकरथी परियाणों करै, एक थल चढ़ि बीजो ऊतरै ॥ २५ ॥ बारै कोस आव्या जेतलै, प्रतिमा नवि चाले तेतलै । गोठी मनह विमासण थई, पास भुवन मंड़ावु सही ॥ २६ ॥ आ अटवी किम करूं प्रयाण, कटको कोइ न दीसै पाहाण । देवल पास जिनेसर तणो, मंडावु किम गरथें विणो ॥ २७ ॥ जल विन श्री संघ रहस्यै किहां, सिलावटो किम आवे इहां । चिन्तातुर थयो निद्रा लहै, यक्षराज आवीने कहैं ॥ २८ ॥ गुँहली ऊपर नाणो जिहां गरथ घणो जाणीजे तिहां । स्वस्तिक सोपारीने ठाणि, पाहण तणी उल्लटस्यै खाणि ॥ २६ ॥ श्रीफल सजल निहां किल जुओ, अमृत जल मीठरसी कूओ । खारा कुवा तणो इह सैनाण, भूमि

पड्यो छँ नीलो छाण ॥ ३० ॥ सिलावटो सोरोही वसं, कोढ पराभियो किसमिसे। तिहां थका तूं इहां आणजे, सत्य वचन माहरो मानजे ॥ ३१ ॥ गोठीनो मन थिर थापियो, सिलावटने सुहणो दियो। रोग गमीने पूरूं आस, पास तणो मंड आवास ॥ ३२ ॥ सुपन मांहे मान्यो से वैण, हेम वरण देख्यां नैंण। गोठी मनह मनोरथ हुवा, सिलावटने गया तेडवा ॥ ३३ ॥ सिलावटो आवें सूरमो, जिमें खीर खांड घृत चूरमो। घडें घाट करें कोरणी, लगन भलें पाया रोपणी ॥ ३४ ॥ थंभ थंभ कीधी पूतली, नाटक कौतुक करती रली। रङ्गमंडप रलियामणो रचें, जोतां मानवनो मन वसें ॥ ३५ ॥ नीपायो पूरो प्रासाद, स्वर्ग समो मंडें आवास। दिवस विचारी इंडो घड्यो, ततखिण देवल उपर चढ्यो ॥ ३६ ॥ शुभ लगन शुभ वेला वाम, पन्ना-मण वेठा श्री पास। महिमा मोटी मेरु समान, एकल-मिल वगडे रहेवान ॥ ३७ ॥ वात पुरानी मैं सांभली, स्तवन मांहि सूधो सांकली। गोठी तणा गोतरिया अछें, यात्रा करीने परणे पछें ॥ ३८ ॥ (दोहा)--त्रिभुवन

विडारन यक्ष जगि, तेहनो अकल सरूप। प्रीत करे श्री संघने, देखाडे निज रूप ॥ ३६ ॥ गिरुओ गोडी पास जिन, आपे अरथ भंडार। सांनिध करै श्री संघने, आसा पूरणहार ॥ ४० ॥ नील पलाणै नील हय, नीलो थई असवार। मारग चूका मानवी, वाट दिखावण हार ॥ ४१ ॥ (ढाल ॥)—वरण अढार तणो लहै भोग, विघन निवारे टालै रोग। पवित्र थई समरै जे जाप, टालै सगला पाप संताप ॥ ४२ ॥ निरधनने घरि धननो सुत, आपै अपुत्रीयाँ ने पुत्र। कायरने सूरापण धरैं, पार उतारैं लच्छी वरै ॥ ४३ ॥ दोभागीने दे सोभाग, पग विहूणाने आपै पग। ठाम नहीं तेहने द्यै ठाम, मन वंछित पूरे अभिराम ॥ ४४ ॥ निराधार ने द्ये आधार, भवसायर उतारे पार। आरतियानी आरत भंग, धरै ध्यान ते लहै सुरंग ॥४५॥ समर्या सहाय दीयें यक्षराज, तेहना मोटा अछै दिवाज। बुद्धिहीण ने बुधिप्रकाश, गूंगाने दे वचन विलास ॥ ४६ ॥ दुःखीयाने सुखनो दातार, भय भंजण रंजण अवतार। बंधन तूटे बेडी तणा, श्रीपार्श्व नाम अक्षर समरणा ॥ ४७ ॥ (दूहा)

श्री पार्श्वनाम अक्षर जपे, विश्वानर विकराल। हस्ति जूथ दूरे टलै, दुद्धर सिंह सियाल॥ ४८॥ चोर तणा भय चुकवे, विष अमृत उडकार। विषधरनो विष ऊतरे, संग्रामे जय जय कार॥ ४९॥ रोग सोग दालिद्र दुःख, दोहग दूर पलाय। परमेसर श्री पासनो, महिमा मन्त्र जपाय॥ ५०॥ (कडखानी चाल) उंजितु उंजितु उंज उपसम धरी, ॐ ह्रीं श्रीं श्री पार्श्व अक्षर जपतं। भूत ने प्रेत झोटिंग व्यंतर सुरा, उपसमे वार इक्वीस गुणंते (उ०)॥ ५१॥ दुद्धरा राग सोगा जरा जंतुने, ताव एकान्तरा दुत्तपंते। गर्भबन्धन व्रणं सर्प बिच्छु विष, चालिका बालमेवा भखंते (उं०)॥ ५२॥ साइणी डाइणी रोहिणी रंकणी, फोटका मोटका दोष हुंते। दाढ उंदरतणी कोल नोला तणी, स्वान सीयाल विकराल दंते (उं०)॥ ५३॥ धरणेंद्र पद्मावती समर शोभावती, वाट आघाट अटवी अटंतं। लखमी लोइ मिलै सुजस वेलाउलै, सयल आस्या फलै मन हसंतं (उं०)॥ ५४॥ अष्ट महाभय हरै कान पीडा टलै, उतरै शूल सीसग भणंते। वदत वर प्रीतसुं प्रीतिविमल

प्रभु, श्रीपास जिण नाम अभिराम मन्तैं (उं०)॥५५॥ कलश ॥ तपगच्छनायद सुक्खदायक श्री विजयसेनसूरीश्वरो। तसपाट उदयाचले उदयो विजयदेव सुहकरो ॥ इम थुण्यो गोड़ी पास जिनवर प्रीति विमल विजयकरो। भणे भणे भाविक शुद्ध भावे तस घर मंगल जयकारो ॥५६॥

॥श्री गौतमस्वामीजी का रास ॥

वीर जिनेसर चरणकमल, कमला कय वासो, पणमवि पभणिसुं सामीसाल, गोयम गुरु रासो। मण तणु वयण एकंत करिवि, निसुणहु भो भविया, जिम निवसे तुम देह गेह, गुण गण गहगहिया ॥ १ ॥ जंबुदीव सिरि भरह खित्त, खोणी तल मंडण, मगह देस सेणिय नरेस, रिऊ दल बल खंडण। धणवर गुव्वर गाम नाम, जिहां गुण गण सज्जा, विप्प वसे वसुभूइ तत्थ, तसु पुहवी भज्जा ॥ २ ॥ ताण पुत्त सिरि इन्दभूइ, भूवलय पसिद्धो, चउदह विज्जा विविह रूव, नारी रस लुद्धो। विनय विवेक विचार सार, गुण गणह मनोहर, सात हाथ सुप्रमाण देह, रूवहि रंभावर ॥ ३ ॥ नयण वयण कर चरण जिणवि, पंकज जल पाडिय, तेजहि तारा चन्द्र सूर,

आकाश भमाडिय। रूवहि मयण अनंग करवि, मेल्यो निरधाडिय, धीरम मेरु गंभीर सिंधु, चंगम चय चाडिय, ॥ ४ ॥ पेक्खवि निरूवम रूव जास, जण जंपे किंचिय, एकाकी किल भीत्त इत्थ, गुण मेल्या संचिय। अहवा निच्चय पुव्व जम्म, जिणवर इण अंचिय, रंभा पउमा गउरी गङ्ग, तिहां विधि वंचिय ॥ ५ ॥ नय बुध नय गुरु कविण कोय, जसु आगल रहियो, पच सयां गुण पात्र छात्र, हींडे परवरियो। करिय निरंतर यज्ञ करम, मिथ्यामति मोहिय, अणचल होसे चरम नाण, दंसणह विसोहिय ॥ ६ ॥ वस्तु ॥ जंबूदीव जंबूदीव भरह वासंमि, खोणीतल मंडण, मगह देस सेणिय नरेसर, वर गुव्वर गाम तिहां, विप्प वसे वसुभूइ सुन्दर, तसु पुव्वहि भज्जा, सयल गुण गण रूव निहाण, ताण पुत्त विज्जानिलो, गोयम अतिहि सुजाण ॥ ७ ॥ भास ॥ चरम जिणेसर केवलनाणी, चौविह संघ पइट्ठा जाणी। पावापुर सामी संपत्तो, चउविह देव निकायहिं जुत्तो ॥८॥ देवहि समवसरण तिहां कीजे, जिण दीठे मिथ्यामति छीजे। त्रिभुवन गुरु सिंहासन बइठा, ततखिण मोह दिगंत पइट्ठा

॥ ९ ॥ क्रोध मान माया मद पूरा, जाये नाठा जिम दिन चोरा। देवदुंदूभि आगासें वाजी, धरम नरेसर आव्यो गाजी ॥ १० ॥ कुसुम वृष्टि विरचे तिहां देवा, चउसठ इन्द्रज मांगे सेवा। चामर छत्र सिरोवरि सोहे, रूवहि जिनवर जग सहु मोहे ॥ ११ ॥ उपसम रसभर वर वरसंता, जोजन वाणि वखाण करंता। जाणवि वद्धमाण जिण पाया, सुर नर किन्नर आवइ राया ॥ १२ ॥ कंत समोहिय जलहलकंता, गयण विमाणहि रणरणकंता। पेक्खवि इन्द्रभूइ मन चिंते, सुर आवे अम यज्ञ हुवंते ॥ १३ ॥ तीर तरंडक जिम ते वहता, समवसरण पुहता गहगहता। तो अभिमानें गोयम जंपे, इण अवसर कोपे तणु कंपे ॥ १४ ॥ मुढा लोक अजाण्यूं बोले, सुर जाणंता इम कांइ डोले। मो आगल कोइ जाण भणीजे, मेरु अवर किम उपमा दीजे ॥ १५ ॥ वस्तु ॥ वीर जिणवर वीर जिणवर नाण संपन्न, पावापुर सुरमहिय, पत्त नाह संसार तारण, तिहिं देवहिं निम्महिय, समवसरण बहु सुक्ख कारण, जिणवर जग उज्जोय करैं, तेजहि कर दिनकार, सिंहासण सामी ठव्यो, हुओ

गुजय जयकार ॥ १६ ॥ भास ॥ तो चढियो घणमान गजे, इन्दभूइ भूदेव तो, हुंकारो कर संचरिय, कवणसु जिणवर देव तो। जोजन भूमि समोसरण, पेखवि प्रथमारंभ तो, दह दिस देखे विबुध वधू, आवंती सुररम्भ तो ॥ १७ ॥ मणिमय तोरणदंड ध्वज, कोसीसे नवघाट तो, वइर विवर्जित जंतुगण, प्रातिहारिज आठ तो। सुर नर किन्नर असुरवर, इंद्र इंद्राणि राय तो, चित्त चमक्किय चिंतवे ए, सेवतां प्रभु पाय तो ॥१८॥ सहस-किरण सम वीरजिण, पेखिअ रूप विशाल तो, एह असंभव संभवे ए, साचो ए इन्द्रजाल तो। तो बोलावइ त्रिजगगुरु, इन्द्रभूइ नामेण तो, श्रीमुख संशय सामी सवे, फेडे वेद पएण तो ॥ १९ ॥ मान मेलि मद ठेलि करी, भगतेंहि नाम्यो सीस तो, पंचसयांसुं व्रत लियो ए, गोयम पहिलो सीस तो। बंधव संजम सुणिवि करी, अगनिभूइ आवेय तो, नाम लेई आभास करे, ते पण प्रतिबोधेय तो ॥ २० ॥ इण अनुक्रम गणहर रयण, थाप्या वीर इग्यार तो, तो उपदेसे भुवन गुरु, संयम सुं व्रत बार तो। बिहुं उपवासे पारणो ए, आपण पे

विहरंत तो; गोयम संयम जग सयल, जय जयकार करंत तो ॥ २१ ॥ वस्तु ॥ इन्द्रभूइ इन्द्रभूइ चढियो बहुमान, हुंकारो करि कंपतो, समवसरण पहुतो तुरंतो ; जे जे संसासामि सवे, चरमनाह फेडे फुरंत तो; वोधिवीज सज्झाय मने, गोयम भवहि विरत्त; दिक्खा लेई सिक्खा सही, गणहर पय संपत्त ॥ २२ ॥ भास ॥ आज हुओ सुविहाण, आज पचेलिमा पुण्य भरो। दीठा गोयम साम, जो निय नयणे अमियझरो। समवसरण मझार, जे जे संसा ऊपजे ए; ते ते पर उपगार, कारण पूछे मुनि पवरो ॥ २३ ॥ जिहां जिहां दीजें दीख, तिहां तीहां केवल ऊपजे ए; आप कनें अणहूंत, गोयम दीजें दान इम । गुरू ऊपर गुरू भक्ति, सामी गोयम ऊपनिय; इणि छल केवलनाण, रागज राखे रंग भरे ॥ २४ ॥ जो अष्टापद सेल, वंदे चढ़ि चउवीस जिण। आतम लब्धि वसेण, चरमसरीरी सो य मुनि। इय देसणा निसुणेइ गोयम गणहर संचरिय, तापस पन्नरसएण, जो मुनि दीठो आवतो ए ॥ २५ ॥ तप सोसिय निय अंग, अम्हां सगति न ऊपजे ए। किम चढ़से दढ़काय, गज जिम दीसे

गाजतो ए। गिरुऔ ए अभिमान, तापस जो मन चिंतवेए। तो मुनि चढियो वेग, आलंबवि दिनकर किरण ॥ २६ ॥ कंचण मणि निष्फन्न दंडकलश धजवड सहिय, पेखवि परमाणन्द, जिणहर भरहेसर महिय। निय निय काय प्रमाण, चिहुँ दिसि संठिय जिणह बिंब; पणमवि मन उल्लास, गोयम गणहर तिहां वसिय ॥ २७ ॥ वयर—सामीनो जीव, तिर्यक्जृंभक देव तिहां, प्रतिबोध्या पुंडरीक, कंडरीक अध्ययन भणी। वलता गोयम सामि, सवि तापस प्रतिबोध करे, लेई आपण साथ, चाले जिम जूथाधिपति ॥ २८ ॥ खीर खांड घृत आण, अमिय वूठ अंगूठ ठवे, गोयम एकण पात्र, करावे पारणो सवे। पंच सयां शुभ भाव, उज्जल भरियो खीर मिसे। साचा गुरु संयोग, कवल ते केवलरूप हुआ ॥ २९ ॥ पञ्चसयां जिणनाह, समवसरण प्राकारत्रय। पेखवि केवलनाण, उप्पन्नो उज्जोय करे। जाणे जणवि पीयूष, गाजंती घन मेघ जिम। जिणवाणी निसुणेवि, नाणी हुआ पंचसया ॥ ३० ॥ वस्तु ॥ इण अनुक्रम इण अनुक्रम नाण संपन्न, पन्नरह सय परिवरिय। हरिय-

दुरिय जिणनाह वंदइ, जाणेवि जगगुरु वयण, तिहि नाण अप्पाण निंदइ। चरम जिनेसर इम भणे, गोयम म करिस खेव। छेह जाय आपण सही, होस्यां तुछा बेव ॥ ३१ ॥ भास॥ सामियो ए वीर जिणिन्द, पुनमचन्द जिम उल्लसिय, विहरियो ए भरहवासम्मि, वरस बहुत्तर संवसिय। ठवतो ए कणय पउमेण, पाय कमल संघे सहिय, आवियो ए नयणानन्द, नयर पावापुर सुरमहिय ॥३२॥ पेखियो ए गोयम सामि, देवसर्मा प्रतिबोध करे, आपणो ए तिसला देवि, नंदन पुहतो परमपए। वलतो ए देव आकाश, पेखवि जाण्यो जिण समे ए, तो मुनि ए मन विखवाद, नाद भेद जिम ऊपनो ए ॥ ३३ ॥ इण समे ए सामिय देखि, आप कनासुं टालियो ए, जाणंतो ए तिहुअण नाह, लोक विवहार न पालियो ए। अतिभलुं ए किधलुं सामि, जाण्युं केवल मांगसे ए, चिन्तव्युं ए बालक जेम, अहवा केड़े लागसे ए ॥ ३४ ॥ हुं किम ए वीर जिणिंद, भगतिहि भोले भोलव्यो ए, आपणो ए उंचलो नेह, नाह न संपइ साचव्यो ए। साचो ए वितराग, नेह न हेजें लालियो ए, तिण समे ए गोयम चित्त,

राग वैरागे वालियां ए ॥ ३५ ॥ आवतुं ए जो उल्हट्ट, रहितुं रागे साहियुं ए, केवल ए नाण उप्पन्न, गोयम सहिज उमाहियुं ए। तिहुअण ए जय जयकार, केवल महिमा सुर करे ए। गणधरु ए करय वखाण, भविया भव जिम निस्तरे ए ॥ ३६ ॥ वस्तु ॥ पढम गणहर पढम गणहर वरस पच्चास, गिहवासें संवसिय, तीस वरस संयम विभूसिय, सिरि केवल नाण पुण, बार वरस तिहु-अण नमसिय। राजगृही नयरी ठव्यां, बाणवइ वरसाउ। सामी गोयम गुणनीलो, होसे सिवपुर ठाउ ॥ ३७ ॥ भास ॥ जिम सहकारे कोयल टहुकें, जिम कुसुमावन परिमल महके, जिम चंदन सोगंध निधि। जिम गंगा-जल लहियां लहके, जिम कणयाचल तेजे झलके, तिम गोयम सोभाग निधि ॥ ३८ ॥ जिम मान सरोवर निवसे हंसा, जिम सुरतरु वर कणय वतंसा, जिम महु-यर राजीव वने। जिम रयणायर रयणे विलसे, जिम अंबर तारागण विकसे, तिम गोयम गुरु केवल धनें ॥ ३९ ॥ पूनम निसि जिम ससियर सोहे, सुरतरु महिमा जिम जग मोहे, पूरव दिसि जिम सहस करो। पञ्चानन

जिसि गिरिवर राजे, नरवइ घर जिम मयगल गाजे, तिम जिनशासन मुनि पवरो ॥ ४० ॥ जिम सुरतरुवर सोहे शाखा, जिम उत्तम मुख मधुरी भाषा, जिम वन केतकि महमहे ए। जिस भूमीपति भुयबल चमके, जिम जिन-मन्दिर घण्टा रणके, गोयस लब्धे गहगह्यो ए ॥ ४१॥ चिन्तामणि कर चढीयो आज, सुरतरु सारे वंछिय काज कामकुम्भ सहु वशि हुआए। कामगवी पूरे मन कामी, अष्ट महासिद्धि आवे धामी, सामी गोयम अणुसरो ए ॥ ४२ ॥ पणवक्खर पहिलो पभणीजें, माया बीजो श्रवण सुणीजें, श्रीमती सोभा संभवे ए। देवह धुरि अरिहंत नमीजे, विनयपहु उवझाय थुणीजे, इण मन्त्रे गोयस नमो ए ॥ ४३ ॥ परघर वसतां कांई करीजे, देस-देसांतर कांई भमीजे, कवण काज आयास करो। प्रह ऊठी गोयम समरीजे, काज समग्गल ततखिण सीजे, नव निधि विलसे तिहां घरे ए ॥ ४४ ॥ चउदह सय बारोत्तर वरसे, गोयम गणहर केवल दिवसे, कियो कवित्त उपगार परो। आदिहिं मंगल ए पभणीजे, परव महोच्छव पहिलो दीजे, रिद्धि वृद्धि कल्याण करो ॥ ४५ ॥ धन

माता जिण उयरे धरियो, धन्य पिता जिण कुल अवत-
रियो, धन्य सुगुरु जिण दीखियो ए। विनयवंत विद्या
भंडार, तसु गुण पुहवी न लब्भइ पार, वड जिम
साखा विस्तरो ए। गोयम सामीनो रास भणीजे,
चउविह संघ रलियाइत कीजे, रिद्धि वृद्धि कल्याण करो
॥ ४६ ॥ कुंकुम चंदन छडा दिवरावो, माणक मोतीना
चौक पुरावो, रयण सिंहासण वेसणो ए। तिहां. वैसी
गुरु देशना देसी, भविक जीवना काज सरेसी, नित
नित नित मंगल उदय करो ॥ ४७ ॥ समाप्त ॥

श्री शत्रुञ्जय गिरि-रास।

दोहा—श्री ऋषभेश्वर पाय नमी, आणी मन आणंद।
रास भणुं रलियामणो, शत्रुंजयनो सुखकंद ॥ १ ॥
संवत चार सत्तोतरे, हुवा धनेश्वरसूर। तिण शत्रुञ्जय
महातम किया, शीलादित्य हजुर ॥ २ ॥ वीरजिणन्द
समोसर्या, शत्रुञ्जय उपर जेम। इन्द्रादिक आगल कह्या,
शत्रुञ्जय महातम एम ॥ ३ ॥ शत्रुञ्जय तीरथ सारिखो
नहीं छे तीरथ कोय। स्वर्ग मृत्यु पाताल में, तीरथ
सघला जोय ॥ ४ ॥ नामे नवनिधि संपजे, दीठा

दुरित पलाय। भेटंतां भवभय टले, सेवंतां सुख थाय ॥ ५ ॥ जंबू नामे द्वीप ए, दक्षिण भरत मजार। सोरठ देश सुहासणो, तिहां छे तीरथ सार ॥ ६ ॥

ढाल पहिली—(राग-रामगिरि)

शत्रुञ्जय ने श्री पुण्डरीक, सिद्धक्षेत्र कहुँ तहतीक। विमलाचलने करूं परणाम, ए शत्रुञ्जयना इकवीस नाम ॥१॥ सुरगिरि ने महागिरि पुण्य रास, श्रीपद पर्वत इन्द्रप्रकास। महातीरथ पूरवे सुखकाम ॥ ए० ॥ २ ॥ शासतो पर्वत ने दृढ़शक्ति, मुक्तिनीलो तिणे किजे भक्ति। पुष्पदन्त महापदम सुठाम ॥ ए० ॥३॥ पृथ्वीपीठ सुभद्र कैलाश, पातालमूल अकर्मक वास। सर्व काम कीजे गुण-ग्राम ॥ ए० ॥ ४ ॥ ए शत्रुञ्जयना इकवीस नाम, जपेज बैठा अपणे ठाम। शत्रुञ्जय जात्रानो फल लहे, महावीर भगवंत इम कहे ॥५॥

दोहा—शेत्रुञ्जो पहिलेआरे, असी जोयण परमाण। पिहुलो मूल ऊंच पण, छव्वीस जोयण जाण ॥ १ ॥ सित्तर जोयण जाणवो, बीजे आरे विशाल। वीस जोयण ऊंचो कह्यो, मुझ वंदन त्रिकाल ॥ २ ॥ साठ

जोजन तीजे आरे, पिहुलो तीरथराय। सोल जोजण ऊंचो सही, ध्यान धरूं चित्त लाय ॥ ३ ॥ पचास जोयण पिहुल पण, चौथे आरे मझार। ऊंचो दस जोयण अचल, नित प्रणमे नरनार ॥ ४ ॥ बार जोयण पञ्चम आरे, मूल तणे विस्तार। दो जोयण ऊंचो अछे, सेत्रुञ्जो तीरथ सार ॥ ५ ॥ सात हाथ छट्ठे आरे, पिहुलो परवत एह। ऊंचो होस्ये सो धनुष्य, सासतो तीरथ एह ॥ ६॥

ढाल दूसरी—(जिनवर सू मेरो मन लीनो, ए राग)

केवलज्ञानी प्रमुख तीर्थंकर, अनन्त सिद्धा इण ठाम रे। अनन्त वली सीझसे इण ठामे, तिण करूं नित्य प्रणाम रे ॥ १ ॥ सेत्रुञ्जे साधु अनन्ता सिद्धा, सीझसी वलीय अनन्त रे। जिण सेत्रुञ्जो तीरथ नहीं भेट्या, ते गरभावास कहंत रे ॥ से० ॥ २ ॥ फागुन सुदि आठमने दिवसे, ऋषभदेव सुखकार रे। रायण रूंख समोसर्या स्वामी, पूरव निनाणु वार रे ॥ से० ॥ ३ ॥ भरतपुत्र चैत्री पूनम दिन, इण शत्रुञ्जय गिरि आय रे। पांच कोडीसुं पुण्डरीक सिद्धा, तिण पुण्डरीक कहाय रे

॥ से० ॥ ४ ॥ नमि विनमि राजा विद्याधर, बे बे कोडी संघात रे । फागण सुदि दशमी दिन सिद्धा, तिण प्रणमूं प्रभात रे ॥ से० ॥ ५ ॥ चैत्र मास वदि चउदशने दिन, नमी पुत्र चोसट्ठ रे । अणसण करी सेत्रुञ्ज गिरि ऊपर, ए सहु सिद्धा एकट्ठ रे ॥ से० ॥ ६ ॥ पोतरा प्रथम तीर्थंकर केरा, द्राविड ने वारिखिल्ल रे । काती सुदि पूनम दिन सिद्धा, दश कोडीसुँ मुनि सिल्ल रे ॥ से० ॥ ७ ॥ पांचे पांडव इण गिरि सिद्धा, नव नारद ऋषिराय रे । शांब प्रद्युम्न गया इहां मुगते, आठे करम खपाय रे ॥ से० ॥ ८ ॥ नेमि विना तेवीस तीर्थंकर, समोसर्या गिरिश्रृंग रे । अजित शांति तीर्थंकर बेउं, रह्या चोमासो रंग रे ॥ से० ॥ ९ ॥ सहस साधु परिवार संघाते, थावच्चा सुक साध रे । पांचसे साधु सुँ सेलग मुनिवर, सेत्रुञ्जे शिव सुख लाध रे ॥ से० ॥ १० ॥ असंख्याता मुनि सेत्रुञ्जे सिद्धा, भरतेश्वरने पाट रे । राम अने भरतादिक सिद्धा, मुक्ति तणी ए वाट रे ॥ से० ॥११॥ जाली मयाली ने उवयाली, प्रमुख साधुनी कोडी रे । साधुअनन्ता सेत्रुञ्जे सिद्धा, प्रणमुँ बे कर जोड़ी रे ॥से० २ ॥

ढाल तीसरी—(राग चौपाई)—सेत्रुञ्जना कहुं सोल उद्धार, ते सुणज्यो सहु को सुविचार । सुनतां आनंद अंग न माय, जनम जनमनां पातिक जाय ॥ १ ॥ ऋषभदेव अयोध्यापुरी, समवसर्या स्वामी हितकारी । भरत गयो वंदणने काज, ए उपदेश दियो जिनराज ॥ २ ॥ जगमांहे मोटा अरिहंत देव, चौसठ इन्द्र करे जसु सेव । तेहथी मोटो तीर्थ कहाय, जेहने प्रणमे जिनवर राय ॥३॥ तेहथी मोटा संघवी कह्यां, भरत सुणीने मन गहगह्यां । भरत कहे ते किम पामिये, प्रभु कहे सेत्रुञ्ज जात्रा किये ॥४॥ भरत कहे संघवी पद मुझ, थे आपो हूं अंगज तुझ । इन्द्रे आण्या अक्षतथाल, प्रभु आपे संघवी पद ताम ॥५॥ इन्द्रे तिण वेला ततकाल, भरत सुभद्रा पहिने माल । पहिरावी घर संप्रेटिया, सघल सोनाना रथ आविया ॥ ६ ॥ ऋषभदेवनी प्रतिमा रली, रत्न तणी दीठी मन रली । भरतने गणधर घर तेडिया, शान्तिक पौष्टिक सहु किया ॥७॥ बत्रीसा सहस सहु देश, भरत तेडाव्या सप अशेष । आवो सहु अयोध्यापुरी, प्रथम धर्मी सघ-[illegible] करी ॥ ८ ॥ स्वधर्मी पोषे अति घणा, सह

चलायो सेत्रुञ्जा भणी। गणधर बाहुबली केवली मुनिवर कोड़ी साथे लिया वली ॥ ६ ॥ चक्रवर्त्तिनी सघली रिद्धि, भरते साथे लीधी सिद्धि। हय गय रथ पायक परिवार, ते तो कहेतां नावे पार ॥ १० ॥ भरतेसर संघवी कहिवाय, मारग चैत्य उधरतो जाय। संघ आयो सेत्रुंजे पास, सहुनी पुगी मननी आस ॥ ११ ॥ नयणे निरख्यो शत्रुञ्जय राय, मणि माणिक्य मोत्यां सुॅ वधाय। तिण ठामेरही महोच्छव कियो, भरते आणंदपुर वासियो ॥ १२ ॥ संघ सेत्रुञ्जे ऊपर चढ्यो, फरसंता पातिक झड पड्यो। केवलज्ञानी पगला तिहाॅ, प्रणम्या रायण रूंख छे जिहाॅ ॥ १३ ॥ केवलज्ञानी स्नात्र निमित्त, ईशानेन्द्र आणी सुपवित्त। नदी शत्रुञ्जय सोहामणी, भरते दीठी कौतुक भणी ॥ १४॥ गणधर देव तणे उपदेश, इन्द्र वली दीधो आदेश। श्री आदिनाथ तणो देहरो, भरते करायो गिरि सेहरो ॥ १५ ॥ सोनानो प्रासाद उत्तंग, रतनतणी प्रतिमा मन रंग। भरते श्री आदीसरतणी, प्रतिमा थापी सोहामणी ॥ १६ ॥ मरुदेवीनी प्रतिमा भली, माही पूनम थापी रली। ब्राह्मी सुन्दरी प्रमुख प्रासाद, भरते

थाप्या नवले नाद ॥ १७ ॥ इम अनेक प्रतिमा प्रासाद, भरत कराया गुरु सुप्रसाद । भरत तणो पहिलो उद्धार, सगलो ही जाणे संसार ॥१८॥

ढाल चोथी—(राग-सिन्धुडो-आशावरी)

भरत तणे पाटे आठमे, दण्डवीरज थयो रायोजी । भरत तणी परे संघ कियो, शत्रुञ्जय संघवी कहायोजी ॥१॥ सेत्रुञ्जे उद्धार सांभलो, सोल मोटा श्रीकारोजी । असंख्यात वीजा वली, तेहनो कहुँ अधिकारोजी ॥ से० ॥२॥ चैत्य करायो रूपातणो, सोनानो विंब सारोजी । मूलगो विंब भडारियो, पश्चिम दिशि तिण वारोजी ॥ से० ॥ ॥ ३ ॥ सेत्रुञ्जेनी जात्रा करी, सफल कियो अवतारोजी । दंडवीरज राजातणो, ए वीजो उद्धारोजी ॥ से० ॥ ४ ॥ सो सागरोपम व्यतिक्रम्या, दडवीरजथी जिवारोजी । ईशानेन्द्र करावीयो, ए त्रीजो उद्धारोजी ॥ से० ॥ चौथा देवलोकनो धणी, महेन्द्र नाम उदारोजी । तिण सेत्रुञ्जेनो करावीयो, ए चोथो उद्धारोजी ॥ से० ॥ ६ ॥ पांचमा देवलोकनो धणी, ब्रह्मेन्द्र समकितधारोजी । तिण सेत्रुँजेनो करावियो, ए पांचमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ ७ ॥

भुवनपति इन्द्रतनो कियो ए छट्ठो उद्धारोजी । चक्रवर्ति सगर तणो कियो, ए सातमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ ८ ॥ अभिनन्दन पासे सुण्यो, सेत्रुंजेनो अधिकारोजी । व्यंतर इन्द्र कराविया, ए आठमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ ९ ॥ चन्द्रप्रभू स्वामीनो पोतरो, चन्द्रशेखर नांम मल्हारोजी । चन्द्रजस राय कराविया, ए नवमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ ॥ १० ॥ शान्तिनाथनी सुणी देशना, शान्तिनाथ सुत सुविचारोजी । चक्रधर राय कराविया, ए दशमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ ११ ॥ दशरथ सुत जगदीपतो, मुनिसुव्रत स्वामी वारोजी । श्रीरामचन्द्र कराविया, ए इग्यारमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ १२ ॥ पांडव कहे अम्हें पापीया, किम छूटां मोरी मायोजी । कहें कुन्ती सेत्रुञ्जतणी, जात्रा कियां पाप जायोजी ॥ से० ॥ १३ ॥ पांचे पाण्डव संघ करी, सेत्रुंजे भेट्या अपारोजी । काष्ट चैत्य विंब लेपना ए बारमो उद्धारोजा ॥ से० ॥ १४ ॥ मम्माणी पाषाणनी, प्रतिमा सुन्दर सरूपोजी । श्री सेत्रुंजेनो संघ करी, थापी सकल स्वरूपोजी ॥ से० ॥ १५ ॥ अष्टोत्तर सो वरसां गयां, विक्रम नृपथी जिवारोजी । पोरवाड़

जावड करावियो, ए तेरमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ १६ ॥ सवत बार तिडोत्तरे, श्रीमाली सुविचारोजी। बाहडदे मुहते करावियो, ए चौदमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ १७ ॥ सवत तेरे इकोत्तरे, देसलहर अधिकारोजी। समरेशाह करावियो, ए पनरमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ १८ ॥ संवत पन्नर सत्यासीये, वैशाख वदि शुभवारोजी। करमे डोसी करावियो, ए सोलमो उद्धारोजी ॥ से० ॥ १६ ॥ संप्रति काले सोलमो, ए वरते छे उद्धारोजी। नित नित कीजे वंदना, पामीजे भव पारोजी ॥ से० ॥ २० ॥

दोहा—वली सेत्रुञ्ज महातम कहुँ, सांभलो जिम छे तेम। सूरि धनेसर इम कहे, महावीर कह्यो एम ॥ १ ॥ जेहवो तेहवो दरसणी सेत्रुञ्जे पूजनीक। भगवतनो वेश वांदतां, लाभ हुवे तहतीक ॥ ३ ॥ श्रीसेत्रुञ्जा उपरे, चैत्य करावे जेह। दल परमाण समो लहे; पल्योपम सुख तेह ॥ ३ ॥ सेत्रुञ्जा ऊपर देहरो, नवो नीपावे कोय। जीर्णोद्धार करावतां, आठ गुणो फल होय ॥ ४ ॥ सिर ऊपर गागर धरी, स्नात्र करावे नार। चक्रवर्तिनी स्त्री थई, शिवसुख पामे सार ॥ ५ ॥ काती पूनम सेत्रुञ्जे,

चढीने करे उपवास। नारकी सो सागर समो, करे करमनो नाश ॥ ६ ॥ काती परव मोटो कह्यो, जिहाँ सिद्धा दश कोड़। ब्रह्म स्त्री बालक हत्या, पापथी नांखे छोड़ ॥ ७ ॥ सहस लाख श्रावण भणी, भोजन पुण्य विशेष। सेत्रुञ्जे साधु पडिलाभतां; अधिको तेहथी देख ॥८॥

ढाल पाँचमी—(धन २ अयवंती सुकुमालने; ए देशी) सेत्रुञ्जे गयाँ पाप छूटीये, लीजे आलोयण एमो जी। तप जप कीजे तिहाँ रही, तीर्थंकर कह्यो तेमो जी ॥से०॥ ॥ १ ॥ जिण सोनानी चोरी करी, ए आलोयण तासोजी। चैत्री दिन सेत्रुञ्जे चढ़ी, एक करे उपवासो जी ॥ से० ॥ २ ॥ वस्तु तणा चोरी करी, सात आँबिल शुद्ध थायोजी। कातो सात दिन तप कियाँ, रतन हरण पाप जायो जी ॥ से० ॥ ३ ॥ कांसी पीतल ताँबा रजत-नी, चोरी कीधी जेणो जी। सात दिवस पुरिमढ करे, तो छूटे गिरि एणो जी ॥ से० ॥ ४ ॥ मोती प्रवाला मूंगीया, जिण चोर्या नरनारो जी। आँबिल करी पूजा करे त्रण टंक शुद्ध आचारो जी ॥ से० ॥ ५ ॥ धान

पाणी रस चोग्गिया, जे भेटे सिद्धक्षेत्रो जी । सेत्रुंजे तल-हटी साधु ने, पडिलाभे शुधचित्तोजी ॥ से०॥६॥ वस्त्रा-भरण जिणे हर्या, ते छूटे इण मेलो जी । आदिनाथनी पूजा करे, प्रह ऊठी बहु वेलोजी ॥ से० ॥ ७ ॥ देव गुरुनो धन जे हरे, ते शुद्ध थाये एमोजी । अधिको द्रव्य खरचे तिहां, पात्र पोषे बहु प्रेमोजी ॥ से० ॥ ८ ॥ गाय भेंस घोड़ा मही, गजग्रह चोरण हारोजी । दीये ते वस्तु तीरथे, अरिहन्त ध्यान प्रकारोजी ॥ से० ॥ ९ ॥ पुस्तक देहरां पारकां, तिहाँ लिखे आपणो नामो जी । छूटे छम्मास तपी कियाँ, सामायिक तिण ठामो जी ॥ से० ॥ ॥ १० ॥ कुंवारी परिव्राजिका, सधव अधव गुरु नारोजी । व्रत भाँजे तिणने कह्यो, छम्मासी तप सारो जी ॥ से० ॥ ११ ॥ गौ विप्र स्त्री बालक ऋषि, एहनो घातक जेहो जो । प्रतिमा आगे आलोवताँ, छूटे तप करी तेहो जी ॥ से० ॥ १२ ॥

ढाल छट्ठी—(कुमर भले आवीयो, ए देशी)

संप्रति काले सोलमो ए, ए वरते छे उद्धार । सेत्रुञ्जे यात्रा करूं ए, सफल करूं अवतार ॥ से० ॥१॥ छह री

पालतॉ चालीये ए, सेत्रुन्जे केरी वाट । पालीताणे पहुँ-
चीये ए, संघ मील्या बहु थाट ॥से० ॥२॥ ललित सरोवर
पेखिये ए वलि सत्ता नी वात्र । तिहां विसरामो
लीजिये ए, वडने चोतरे आवि ॥ से० ॥ ३ ॥ पालीताणे
पाजडी ए, चढ़ीए ऊठी परभात । सेत्रुञ्ज नदीय सोहा-
मणी ए, दूर थकी देखात ॥ से० ॥ ४ ॥ चढ़िये हिंगु-
लाजने हडे ए, कलिकुंड नमीये पास । बारीसांहे पेसीये
ए, आणी अंग उल्लास ॥ से० ॥ ५ ॥ मरुदेवी टूंक
मनोहरु ए, गज चढ़ी मरुदेवी माय । शान्तिनाथ जिन
सोलमा ए, प्रणमीजे तसु पाय ॥ से० ॥ ६ ॥ वंश
पोरवाड़े परगडो ए, सोमजी शाह मल्हार। रूपजी संघवी
करावीयो ए, चौमुख मूल उद्धार ॥ से० ॥ ७ ॥ चौमुख
प्रतिमा चरचिये ए, भमतीमांहि भला बिंब । पांचे पांडव
पूजिये ए, अद्भुत आदि प्रलंब ॥ से० ॥ ८ ॥ खरतर
वसही खांतिसु ए, बिंब जुहारुं अनेक । नेमिनाथ चवरी
नमुं ए, टालुँ अलग उद्वेग ॥ से० ॥ ९ ॥ धरम दुवार
माहिं नीसरुं ए, कुगति करूं अति दूर । आवुं आदि-
नाथ देहरे ए, करम करूं चकचूर ॥ से० ॥ १० ॥ मूल-

नायक प्रणमुँ मुदा ए, आदिनाथ भगवंत। देव जुहारुं देहरे ए, भमतीमांहि भमंत ॥ से० ॥ ११ ॥ सेत्रुँजे उपर कीजिये ए, पाँचे ठाम सनात्र। कलश अट्ठोत्तर सौ करी ए, निरमल नीरसुं गात्र ॥ से०॥ १२ ॥ प्रथम आदीसर आगले ए, पुंडरीक गणधार। रायण तल पगला नमुं ए, शान्तिनाथ सुखकार ॥ से० ॥ १३ ॥ रायण तल पगला नमुँ ए, चोमुख प्रतिमा चार। बीजी भूमि बिंबावलि ए, पुंडरीक गणधार ॥ से० ॥१४॥ सूरज कुण्ड निहालिये ए, अति भली उलका झोल। चेलणा तलाई सिद्धशिला ए, अंग फासुं उल्लोल ॥ से० ॥ १५ ॥ आदिपुर पाजे ऊतरुं ए, सिद्ध-वड लहुं विसराम। चैत्य-प्रवाडी इणपरि करी ए, सीधा वंछित काम ॥ से० ॥ १६ ॥ जात्रा करी सेत्रुं-जातणी ए, सफल कियो अवतार कुशल खेमसुं आवियो ए, संघ सहु परिवार ॥से० ॥ १७ ॥ सेत्रुञ्जय-रास सोहामणो ए, सांभल्यो सहु कोय। घर बैठा भणे भावसुँ ए; तसु जात्रा फल होय ॥ से० ॥ १८ ॥ संवत सोल बयासीये ए, सावण वदि सुखकार। रास

भण्यो सेत्रुञ्जा तणो ए, नगर नागोर मझार ॥से०॥१९॥
गिरुवो गच्छ खरतरतणो ए, श्रीजिनचन्द्रसूरीस ॥
प्रथम शिष्य श्रीपूज्यना ए, सकलचन्द सुजगीस ॥ से०
॥ २० ॥ तास शिष्य जग जाणीयैं ए, समयसुन्दर उव-
ज्झाय। रास रच्यो तिण रूवडो ए, सुणतां आणंद थाय
॥ से० ॥२१ ॥ इति शत्रुञ्जय रास ॥

आलोयणा गर्भित शत्रुञ्जय स्तवन ।

बेकर जोड़ी विनवूंजी; सुण स्वामी सुविदीत ।
कूड कपट मूकी करीजी, बात कहुँ आपबीत ॥ १ ॥
कृपानाथ मुझ विनती अवधार ॥ टेर ॥
तुँ समरथ त्रिभुवन धणीजी, मुझने दुत्तर तार ॥कृ०॥२॥
भवसायर भमतां थकां जी, दीठां दुःख अनन्त ।
भाग संयोगे भेटीयाजी, भयभञ्जण भगवन्त ॥कृ०॥३॥
जे दुःख भांजे आपणो जी, तेहने कहिये दुःख ।
परदुःखभञ्जण तूँ सुण्योजी, सेवकने द्यो सुक्ख॥कृ०॥४॥
आलोयण लीधां विनाजी, जीव रुले संसार ।
रूपी लक्ष्मणी महासतीजी, एह सुण्यो अधिकार ॥कृ०॥५॥

दूषमकाले दोहिलोजी, सूधो गुरु संयोग ।
परमारथ प्रीछे नहींजी, गडरप्रवाही लोग ॥ कृ० ॥ ६ ॥
तिण तुझ आगल आपणांजी, पाप अलोऊं आज ।
माय बाप आगल बोलतांजी, बालक केही लाज ॥कृ०॥७॥
जिन धर्म जिन धर्म सहु कहेजी, थापे अपणी बात ।
समाचारी जुई जुईजी, शंसय पड्यां मिथ्यात ॥ कृ० ॥८॥
जाण अजाणपणे करीजी, बोल्या उत्सूत्र बोल ।
रतने काग उडावतांजी, हार्यो जन्म निटोल ॥कृ०॥६॥
भगवन्त भाष्यो ते किहांजी, किहां मुझ करणी एह ।
गज पाखर खर किम सहेजी, सबल विमासण तेह ।कृ०।१०।
आप परूप्यो आकरोजी, जाणे लोक महन्त ।
पिण न करूं परमादीयोजी, मासाहस दृष्टान्त ।कृ०।११।
काल अनन्ते मैं लह्याजी, तीन रतन श्रीकार ।
पिण परमादे पाडियाजी, किहां जई करूं पुकार ।कृ०१२।
जाणुॅ उत्कृष्टी करूं जी, उद्यत करूं रे विहार ।
धीरज जीव धरे नहींजी, पोते बहु संसार ॥ कृ० ॥१३ ॥
सहज पड्यो मुझ आकरोजी, न गमे रूडी बात ।
परनिंदा करतां थकांजी, जावे दिन ने रात ॥कृ०॥१४॥

किरिया करतां दोहिलीजी, आलस आणे जीव ।
धरम पखे धंधे पड़्योजी, नरके करस्ये रीव ॥कृ० ॥१५॥
अणहुॅतां गुण को कहेजी, तो हरखुँ निश-दीश ।
कोइ हितसीख भली कहेजी, तो मन आणु रीश॥कृ०१६॥
वाद भणी विद्या भणीजी, पररञ्जण उपदेश ।
मन संवेग धर्यो नहींजी, किम संसार तरेश ॥कृ०॥१७॥
सूत्र सिद्धान्त वखाणतांजी, सुणतां करम विपाक ।
खिण एक मनमांही ऊपजेजी, मुझ मरकट वैराग॥कृ०१८॥
त्रिविध त्रिविध करी ऊचरुंजी, भगवन्त तुम्ह हजूर ।
बारबार भांजु वलीजी, छुटक वारो दूर ॥कृ० ॥ १९ ॥
आप काज सुख राचतांजी, कीधा आरम्भ कोड़ ।
जयणा न करी जीवनीजी, देव दयापर छोड़ ॥कृ०२०॥
वचन दोषव्यापक कह्याजी, दाख्या अनरथदण्ड ।
कूड़ कपट बहु केलवीजी, व्रत कीधा शतखंड ॥कृ०२१॥
अणदीधो लीजे तृणोजी, तेही अदत्तादान ।
ते दूषण लागा घणाजी, गिणतां नावे ज्ञान ॥कृ० ॥२२॥
चंचल जीव रहे नहीं जी, राचे रमणी रूप ।
काम विटंबण सी कहुंजी, ते तूं जाणे स्वरूप ॥कृ०२३॥

माया ममता में पड्योजी, कीधो अधिको लोभ।
परिग्रह मेल्यो कारमोजी, न चढी संयम शोभ ॥कृ०२४॥
लागा मुझने लालचेजी, रात्रिभोजन दोष।
मैं मन मूक्यो माहरोजी, न धर्यो धरम संतोष ॥कृ०२५॥
इण भव पर-भव दूहव्याजी, जीव चौरासी लाख।
ते मुझ मिच्छामि दुक्कडंजी, भगवंत तोरी साख॥कृ०२६॥
करमादान पन्नरे कह्यांजी, प्रगट अठारे पाप।
जे मैं कीधां ते सहुजी, बगश २ माई बाप ॥कृ० ॥२७॥
मुझ आधार छे एतलोजी, सद्दहणा छै शुद्ध।
जिनधर्म मीठो जगतमेंजी, जिम साकर ने दूध ॥कृ०२८॥
ऋषभदेव तूं राजीयोजी, सेत्रुंजगिरि सिणगार।
पाप आलोया आपणांजी, कर प्रभु मोरी सार ।कृ०।२६।
मर्म एह जिनधर्मनोजी, पाप आलोयां जाय।
मनसुं मिच्छामि दुक्कडंजी, देतां दूर पलाय ।कृ०।३०।
तूं गति तूं मति तूं धणीजी, तूँ साहिब तूं देव।
आण धरूं सिर ताहरीजी, भव भव ताहरी सेव ।कृ०३१।
कलश-इम चढ़ीय सेत्रुञ्ज चरण भेट्या, नाभिनंदन जिनतणा।
कर जोडी आदि जिनंद आगे पाप आलोया आपणा ॥

श्रीपूज्य जिनचन्दसूरि सद्गुरु, प्रथम शिष्य सुजस घणे,
गणि सकलचन्द सुशिष्य वाचक समय सुंदर गणिभणै ।३२

पद्मावती आलोयणा ।

हिवे राणी पद्मावती, जीवराशि खमावे ।
जाणपणुं जग ते भलुं, इण वेला आवे ॥ १ ॥
ते मुझ मिच्छामि दुक्कडं, अरिहंतनी साख ।
जे मैं जीव विराधिया, चउरासी लाख ॥ ते० ॥ २ ॥
सात लाख पृथिवी तणां, साते अपकाय ।
सात लाख तेऊकायना, साते वली वाय ॥ ते० ॥ ३ ॥
दश प्रत्येक वनस्पति, चउदह साधारण ।
बिती चउरिंद्रिय जीवना, बे बे लाख विचार ॥ते० ॥४॥
देवता तिर्यंच नारकी, चार चार प्रकासी ।
चउदह लाख मनुष्यना, ए लाख चउरासी ॥ ते० ॥५ ॥
इण भव परभव सेवियां, जे पाप अढार ।
त्रिविध २ करी परिहरूं, दुरगति दातार ॥ ते० ॥ ६ ॥
हिंसा कीधी जीवनी, बोल्या मृषावाद ।
दोष अदत्तादानना, मैथुन उन्माद ॥ ते० ॥ ७ ॥

परिग्रह भेल्यो कारिमो, कीधो क्रोध विशेष ।
मान माया लोभ मैं किया, वली राग ने द्वेष ॥ते०॥८॥
कलह करी जीव दूहव्यां, दीना कूडा कलंक ।
निंदा कीधी पारकी, रति अरति निःशंक ॥ ते० ॥ ९ ॥
चाड़ी खाधी चोतरे, कीधो थापण मोसो ।
कुगुरु कुदेव कुधर्मनो, भलो आण्यो भरोसो ॥ते०॥१०॥
खाटकीने भवे मैं किया, जीवना वध घात ।
चिडीमार भवे चिडकलां, मार्या दिन रात ॥ ते० ॥११॥
माछीगर भवे माछलां, झाल्या जलवास ।
धीवर भील कोली भवे, मृग पाड्या पास ॥ ते० ॥१२॥
काजी मुल्लाने भवे, पढी मंत्र कठोर ।
जीव अनेक जभह किया, कीधा पाप अघोर ॥ते०॥१३॥
कोटवाल ने भवे मैं किया, आकरा कर दंड ।
बंदीवान मराविया, कोरड़ा छड़ी दंड ॥ ते० ॥ १४ ॥
परमाधामीने भवे, दीधां नारकी दुक्ख ।
छेदन भेदन वेदना, ताड़ना अति तिक्ख ॥ ते० ॥१५॥
कुंभारने भवे मैं किया, निम्भाह पचाव्या ।
तेली भव तिल पीलिया, पापे पेट भराव्या ॥ ते०॥१६॥

हालीने भव हल खेडिया, फाड्या पृथिवीना पेट ।
सूड निदाण घणां किया, दीधां बलध्र चपेट ॥ ते०॥१
मालीने भवे रोपियां, नानाविध वृक्ष ।
मूल पत्र फल फूलनां, लाग्या पाप ते लक्ष ॥ ते० ॥१
अधोवाइयाने भवे, भर्या अधिका भार ।
पोठी उँट कीडा पड्या, दया नावी लगार ॥ ते०१६
छीपाने भवे छेतर्यो, कीधां रांगणि पास ।
अग्नि आरम्भ किया घणा, धातुर्वाद अभ्यास ॥ते०२
सूरपणे रण झूझता, मार्या माणस वृंद ।
मदिरा मांस माखन भख्या, खाधा मूलाने कंद ॥ते०२१
खाण खणावी धातुनी, पाणी ऊलंच्या ।
आरम्भ कीधा अतिघणां, पोते पापज संच्या ॥ते० २
अंगारकर्म किया वली, धर मे दव दीधा ।
सुँस लेई वीतरागना, कूडा कोशज पीधा ॥ ते०॥ २
बिल्ली भव उंदर लिया, गीरोली हत्यारी ।
मूढ गमार तणे भवे, मैं जूं लीख मारी ॥ ते० ॥ २४
भाड़-भूँजा तणे भवे, एकेन्द्रिय जीव ।
ज्वारी चिणा गहुँ सेकियां, पाडन्ता रीव ॥ ते० ॥ २'

खाडण पीसण गारना, आरम्भ अनेक ।
रांधण इंधण आगिना, किया पाप उदेग ॥ ते० ॥२६॥
विकथा चार कीधी वली, सेव्यां पच प्रमाद ।
इष्ट वियोग पाड्या किया, रोदन विषवाद ॥ते०॥२७॥
साधु अने श्रावकतणां, व्रत लेई भाग्यां ।
मूल अने उत्तरतणा, दूषण मुझ लाग्या ॥ ते० ॥ २८ ॥
साप विच्छू सिंह चीतरा, शिकरा ने शमली ।
हिंसक जीव-तणे भवे, हिंसा कीधो सवली ॥ ते०॥२६॥
सूआवडी दूषण घणां, वली गरभ गलाव्या ।
जीवाणी ढोल्या घणां, शीलव्रत भंजाव्या ॥ ते०॥ ३० ॥
भव अनन्त भमतां थकां, कीया कुटुम्ब सम्बन्ध ।
त्रिविध त्रिविध करी वोसरू, तिणसुं प्रतिबन्ध ।ते०।३१।
भव अनत भमतां थकां, कीया देह संबध ।
त्रिविध त्रिविध करी वोसरुं, तिणसुं प्रतिबध ॥ते०।३२।
भव अनन्त भमतां थकां, किया परिग्रह सम्बन्ध ।
त्रिविध त्रिविध करी वोसरूं, तिणसुं प्रतिबध ॥ते० ३३॥
इणभव परभव इण परे, कीधां पाप अखत्र ।
त्रिविध त्रिविध करी वोसिरूं, करूं जन्म पवित्र।ते० ३४।
राग वेराडी जे सुणे, ए त्रीजी ढाल ।
समयसुन्दर कहे पापथी, छूटे तत्काल ॥ ते० ॥ ३५ ॥

॥ श्रीपार्श्वजिनस्तवनं ॥

॥ तुँ मेरे मनमें तुँ मेरे दिलमें, ध्यानधरुं पलमें ॥ पास जिणेसर अन्तरजामी, सेव करुं छिन छि में ॥ तुँ० ॥ १ ॥ काहूको मन तरुणीसुँ राच्यो, काहू को चित्त धनमें । मेरो मन प्रभु तुमहीसुं राच्यो, ज्युं चातक चित्त घनमें ॥तुँ०॥२॥ जोगीसर तेरी गति । अलख निरंजन छिनमें ॥ कनककीर्त्ति सुखसागर तुमही, साहिब तीन भुवनमें ॥तुं० ॥३॥ इति॥

॥ महावीर निर्वाणकल्याणक स्तवन ॥

मारगदेशक मोक्षनो रे, केवलज्ञान निधान ॥
भाव दयासागर प्रभु रे, पर उपगारी प्रधानो रे ॥१॥
वीर प्रभु सिद्ध थया, संघ सकल आधारो रे ।
हिव इण भरतमां, कुण करशे उपगारो रे ॥वीर० ॥२॥
नाथ विहुणूं सैन्य ज्युं रे, वीर विहूणो रे संग ॥
साधे कुण आधारथी रे, परमानंद अभंगो रे ॥वीर०॥३॥
मात विहुणां वाल ज्युं रे, आरहांपरहां अथडाय ॥
वीर विहुणा जीवडारे, आकुल व्याकुल थायो रे॥वीर०४॥

संशय छेदक वीरनो रे, विरह ते केम खमाय ? ॥
जे दीठे सुख उपजे रे, ते विण किम रहिवायोरे॥वीर०५।
निर्यामक भवसमुद्रनो रे, भव अटवी सत्थवाह ॥
तेपरमेसर विण मिल्यां रे, किम वाधे उत्साहो रे॥वीर६॥
वीर थकां पण श्रुततणो रे, हुंतो परम आधार ॥
हमणां श्रुत आधार छेरे, ए जिन आगम सारोरे ।वीर०७।
इण काले सवि जीवने रे, आगमथी आनन्द ॥
ध्यावो सेवो भविजना रे, जिनपडिमा सुखकंदोरे।वी०८।
गणधर आचारिज मुनि रे, सहुने इण परसिद्ध ॥
भव भव आगम संगथी रे, देवचंद पद लीधोरे ।वीर०९।

॥ इति निर्वाणकल्याणक स्तवन ॥

॥ श्रावक की करणी ॥

(चौपाई)

श्रावक तूं उठे परभात । चार घडी ले पिछली रात ॥
मनमां समरे श्री नवकार । जिम पामे भवसायर पार॥१॥
कवण देव कवण गुरु धर्म । कवण अमारुं छे कुलकर्म ॥
कवण अमारो छे व्यवसाय । एवुं चिन्तवजे मन मांय॥२॥

सामायिक लेजे मन शुद्ध । धर्मनी हियडे धरजे बुद्ध ॥
पडिक्कमणुं करे रयणीतणुं । पातक आलोए आपणा ॥३॥
कायाशक्ति करे पच्चक्खाण । सूधी पाले जिनवर आण ॥
भणजे गुणजे स्तवन सज्झाय । जिण हुँति निस्तारोथाय॥४॥
चितारे नित चउदे नेम । पाले दया जीवता सीम ॥
देहरे जाइ जुहारे देव । द्रव्यभावथी करजे सेव ॥ ५ ॥
पोशाले गुरु वन्दन जाय । सुणो वखाण सदा चित्त लाय॥
निर्दूषण सूजतो आहार । साधुने देजे सुविचार ॥६॥
सामिवत्सल करजे घणां । सगपण महोटा साहसीतणां ॥
दुःखिया हीना दीना देख । करजे तास दया सुविशेष॥७॥
घर अनुसारे देजे दान । महोटासुं म करे अभिमान ॥
गुरुने मुखे लेजे आखडी । धर्म न मूकीश एके घडी ॥८॥
वारू शुद्ध करे व्यापार । ओछा अधिकानो परिहार ॥
म भरीश केनी कूड़ी साख । कूड़ा जनसुं कथन म भाख६॥
अनन्तकाय कहीये बत्रीस । अभक्ष्य बावीसे विसवावीश ॥
ते भक्षण नवि कीजे किमे । काचां कंवला फल मतजिमे१०
रात्रिभोजनना वहु दोष । जाणीने करजे संतोष ॥
साजी साबू लोह ने गुली । मधु धावडी मतवेचो वली११॥

वली म करावे रंगण पास । दूषण घणां कह्या छे तास ॥
पाणी गलजे बे बे वार । अणगल पीतां दोष अपार १२॥
जीवाणीना करजे यत्न । पातक छंडी करजे पुण्य ॥
छाणा इंधण चूलो जोय । वावरजे जिम पाप न होय १३॥
घृतनी परे वावरजे नीर । अणगल नीर म धोईश चीर ॥
ब्रह्मव्रत सुधुं पालजे । अतिचार सघला टालजे ॥१४॥
कह्यां पन्नरे कर्मादान । पापतणी परिहरजे खाण ॥
किशुँ म लेजे अनरथदंड । मिथ्या मेल म भरजे पिंड ॥१५॥
समकित शुद्ध हियडे राखजे । बोल विचारीने भाखजे ॥
पाँच तिथि म करोआरंभ । पालो शीयल तजोमनदम्भ १६॥
तेल तक्र घृत दूध ने दही । ऊघाडा मत मेलो सही ॥
उत्तर ठामे खरचो वित्त । परउपगार करो शुभचित्त १७॥
दिवश चरिम करजे चौविहार । चारे आहारतणो परिहार॥
दिवसतणां आलोए पाप ! जिम भाँजे सघला संताप॥१८॥
संध्याये आवश्यक साचवे । जिनवर चरण शरण भव भवे ।
चारे शरण करोदृढ़हीय । सागारी अणसण ले सोय ॥१९॥
करे मनोरथ मन एहवा । तीरथ शत्रुञ्जे जायवा ॥
समेतशिखर आबू गिरनार । भेटीस हुँ धनधन अवतार॥२०।

श्रावकनीकरणी छे एह। एहथी थाये भवनो छेह ॥
आठे कर्म पड़े पातला। पापतर्णा छूटे आमला। २१ ॥
वारु लहिये अमर विमान। अनुक्रमे पामे शिवपुर धाम॥
कहे जिनहर्ष घणे ससनेहकरणी। दुःखहरणी छे एह ॥२२॥

जैन तिथि मन्तव्य।

पूज्यपाद श्रीमद्हरिभद्रसूरीश्वरजी महाराज कृत तत्वतरंगिणी ग्रन्थका तथा श्रीउमास्वातिजी महाराज कृत आचारवल्लभादि ग्रन्थो का यह फरमान है :—

तिहि पड़णे पुव्वा तिहि। कायव्वा जुत्त धम्म कज्जेव।
चाउद्दसी विलोवे। पुण्णमिअं पक्खिपडिक्कमणं ॥ १ ॥

अर्थः—तिथिका क्षय हो तो पूर्व तिथिमें धर्मकार्य करना युक्त है, चौदसका क्षय हो तो पूर्णिमाको पक्खी प्रतिक्रमण करना चाहिये।

व्याख्या—तिथि मात्रमेंसे कोई तिथिका क्षय हो तो उस तिथि सम्बन्धी धर्मकृत्य उसकी पूर्वतिथिमे करना योग्य है; परन्तु यदि चतुर्दशीका क्षय हो तो पूर्णिमा या अमावस्यामें पाक्षिक प्रतिकमण करना चाहिये, कारण कि समीपमें रही हुई पर्वतिथिमें (पूर्णिमा—अमावस्या) को छोड़कर अपर्वतिथिमें पर्वतिथिका आराधना करना युक्त नहीं है।

कदाचित यहांपर कोई महानुभाव यह प्रश्न करे कि यदि पर्वतिथिका आराधन अपर्वतिथिमे नही करना तो अष्टमी आदिके क्षय होनेपर तत्सम्वन्धी धर्मकृत्य सप्तमी आदिको करना कैसे उचित हो सकेगा ?

उतरः—प्रिय सज्जनवरो ! हमको पर्वतिथिका कृत्य पर्वतिथिमे ही इष्ट है, परन्तु अनन्तर पर्वतिथिका योग न होनेसे पूर्वमे रही हुई सप्तमी आदिमे ही करना योग्य है, मगर नौमी आदिमे करना उचित नही।

पर्वतिथिका क्षय हो तो समीपमे रही हुई पर्वतिथि मे तत्सम्बंधी धर्मकृत्य करना इस ही नियम के अनुसार होता है। सांवत्सरिक पर्व की चौथका क्षय हो तो पञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करना, मगर तीजको नही, यह कथन क्षयतिथि सवन्धी हुआ।

तिहि वुड्ढिए पुव्वा गहिया। पडिपुन्नभोगसजुत्ता॥
इयरा वि माणणिज्जा। परं थोवात्ति न तत्तुला॥ १ ॥

तिथिकी वृद्धि हो तो पूर्वतिथिमे धर्मकृत्य करना उचित है, दूसरी तिथि भी पर्व्वरूप मानी जाती है, परन्तु अल्परूपमें नतु पूर्व सदृश।

व्याख्या—पन्द्रह तिथियोमे कोई तिथि बढे तो उस सम्बन्धी धर्मकृत्य पूर्व तिथिमे करना; कारण कि समीपकी पर्वतिथिको छोड़कर दूरवर्तिनी पर्वतिथिको ग्रहण करना यह तत्व दृष्टिमे अमान्य है।

कोई महोदय यहांपर ऐसा बोले कि सूर्योदय तिथि अपने को मान्य है, फिर दूसरी माननेमे क्या बाधा है?

उत्तरः—जिज्ञासु महाशयो! आप स्वयं विचार कर सकते है, कि सूर्योदय व अस्त दोनो टाइममें रही हुई पूर्ण तिथिको छोड़कर अल्प समयवर्तिनी द्वितीय तिथि को मानना कहाँतक ठीक हो सकता है? पण्डित जन विचारे।

(विशेष विचार)

मास प्रतिबद्ध जितने पर्व है वे सब मासकी वृद्धि में कृष्णपक्ष संबन्धी प्रथम मासमे व शुक्लपक्ष संबन्धी द्वितीय मासमे आराधन करना चाहिये; यह शास्त्रसम्मत व वृद्ध परंपरानुसार मान्य है।

पर्युषणपर्व दिनप्रतिबद्ध होनेसे आषाढ चौमासीसे —ासवे दिन करना ही शास्त्रसम्मत व युक्तियुक्त है।

सूतकविचार।

पुत्र जन्म होनेसे दिन १० दस सूतक। पुत्रीजन्म होनेसे दिवस ११ ग्यारह सूतक। जिस स्त्रीके पुत्रपुत्री हो उसके एक महीने तक सूतक। गाय, भैंस, घोडी, साँढ आदि अपने घरमे व्यावे तो दिन एक सूतक। अपने निश्रामे रहे हुवे दास दासीके पुत्र पौत्रादिका जन्म व मरण हो तो दिन ३ तीन सूतक। जितने महीनेका गर्भ गिरे उतने दिनका सूतक।

मृत्यु होनेसे दिन १२ वारह सूतक। पुत्र होते ही मृत्यु पावे तो दिन १ सूतक। परदेशमे मृत्यु हो तो दिन १ सूतक। गाय, भैंस, घोडा-उट विगेरहका मृतक कलेवर जहाँ तक वाहर नही ले जाय तहा तक सूतक।

जिसके घर जन्म मरण का सूतक हो वह वारह दिन देवपूजा न करे। मृतकके घरका जो मूल खांधिया हो वह १० दिन और अन्य घर का ३ दिन देवपूजा न करे। जो मृतक को छुआ हो सो चौवीस प्रहर प्रतिक्रमण न करे। यदि सदा का अखड नियम हो तो समता भावसे सवरमे रहे परन्तु मुखसे नवकार मन्त्रका भी उच्चारण नही करे। स्थापनाचार्यजीको हाथ न लगावे। जो मृतकको नही छुआ हो सो मात्र आठ

प्रहर पडिक्कमणा न करे-अगर किसीको न छुआ हो तो स्नान से शुद्ध होकर सब करे।

भेंसके बच्चा हो तब १५ पन्द्रह दिन पीछे दूध पीना कल्पे। गायके बच्चा हो तब १७ सतरा दिन पीछे दूध पीना कल्पे। बकरीके जब बच्चा हो तब ८ आठ दिन पीछे दूध पीना कल्पे।

ऋतुवती स्त्री चार दिन भांडादिको नही छुवे, चार दिन प्रतिक्रमण न करे, पांच दिन देवपूजा न करे।

रोगादिके कारण कोई स्त्रीको तीन दिन पीछेरक्त बहता दिखे तो असज्झाय नही, विवेकपूर्वक पवित्र होकर ४ पांच दिन पीछे स्थापना पुस्तक छुवे, जिन दर्शनकरे, अग्रपूजा करे परन्तु अंगपूजा न करे, साधुको पडिलाभे।

ऋतुवती तपस्या करे सो सफल होती है परन्तु जिनपूजा, प्रतिक्रमणादि क्रिया सफल नही होती, ऐसा 'चर्चरी' ग्रन्थमे कहा है।

जिसके घरमें जन्म मरणका सूतक हो वहां, १२ दिन साधु आहार पाणी न बहरे—सूतकवालेके घरके जलसे १२ बारह दिन तक देवपूजा न करे-निशीथ सूत्र के सोलमे उद्देशमे सूतकवालेका घर दुर्गमनीय कहा है।

गायके मूत्रोंमे २४ प्रहर पीछे, भेसके मूत्रमे १७ प्रहर पीछे, गाडर, गधेड़ी, घोड़ोके, मूत्रमें ८ प्रहर और

नरनारीके मूत्रमे अन्तरमुहूर्त्त पीछे संमुर्छिम जीव उत्पन्न होते है—विशेष ग्रन्थान्तरसे जानना ।

असज्झाय विचार ।

१ धूंआरी पडे तहांतक असज्झाथ ।

२ सर्व दिशाओमे लाल छाया तथा रजअरण्य सम्बधी रज उडे, निरन्तर पडे तो तीन दिन उपरान्त असज्झाय ।

३ मेह-वर्षते बुदबुदाकार हो तो तीन दिन उपरान्त असज्झाय ।

४ छोटे छांटे निरन्तर सात दिन उपरान्त वर्षते न रहे तो असज्झाय ।

५ मासवृष्टि, शिलावृष्टि धूलिवृष्टि जहाँ तक हो वहातक असज्झाय और जो रुधिरवृष्टि हो तो अहोरात्र असज्झाय ।

६ बुदबुदा रहित निरन्तर वर्षे तो पांच दिन उपरान्त असज्झाय ।

७ चैत्र सुदी ५ से पडिवा तक असज्झाय-तेरस चौदस पूनम तीन दिन सध्याकाले, अचित्त रज उड़ावणत्थं, चार लोगस्सका काउस्सग्ग करे, इसी प्रकार असोज मासमे जानना ।

८ दश दिग् दाहमे प्रहर एक असज्झाय।

९ अकाले गाजे तो प्रहर २ दो असज्झाय।

१० अकाले बीज, उल्कापात हो तो प्रहर एक असज्झाय।

११ शुक्लपक्षमे सध्याकाल, पडिवा, बीज और तीज को असज्झाय परन्तु दशवैकालिक गिन सकते है।

१२ अकाले मेघ वर्षे तो प्रहर एक असज्झाय।

१३ भूकम्प हो तो प्रहर ८ आठ असज्झाय।

१४ चन्द्रग्रहणको जघन्यसे ८ प्रहर और उत्कृष्ट १२ प्रहर असज्झाय।

१५ सूर्यग्रहणकी जघन्यसे १२ प्रहर उत्कृष्टसे १६ सोलह प्र० असज्झाय।

१६ आषाढ चौमासे पडिक्कमण ठानेसे लेकर प्रहर १२ बारह असज्झाय।

१७ कार्तिक चौमासे प्रतिक्रमण पीछे पड़िवातक प्रहर १२ बारा असज्झाय।

१८ जहांतक परस्पर मल्लादि युद्ध हो वहातक असज्झाय।

१९ कलह युद्ध जहांतक हो वहांतक असज्झाय।

२० उपाश्रय के पास स्त्री पुरुषका जहातक कलह हो वहांतक असज्झाय।

२१ फाल्गुन चौमासे रज पडिवाके दिन जहातक धूल उडे वहातक असज्झाय।

२२ अपराधी को दण्डादि से जहातक मार पडे तहातक असज्झाय।

२३ परचक्रादिका भय हो और जहातक न उपशमे तहातक असज्झाय।

२४ नगर मे प्रधान पुरुष विहडे तो अहोरात्र असज्झाय

२५ उपाश्रय से सात घरतक कोई पुरुष विहडे (विनाश हो) तो असज्झाय।

२६ उपाश्रयसे सौ हाथ पर्यन्त कोइ अनाथादि पुरुष मरा हुवा पडा हो तो जहातक मृतक कलेवर न उठावे तहातक असज्झाय।

२७-२८ सौ हाथ दूर तक मनुष्य का रुधिर पडनेमे अहोरात्र असज्झाय इसही प्रकार तिर्यचका समझना।

२९ मनुष्यकी अस्थि, दाँत, दाढादि पडाहुआ हो तो सौहाथ दूरतक सूत्र पढना कल्पे नही।

३० स्त्रीको ऋतुधर्म आवे तो दिन ३ तीन असज्झाय।

३१ आर्द्रा नक्षत्रसे स्वाति नक्षत्र पर्यन्त गाज, बीज, मेघ वर्षे तो असज्झाय नही।

३२ पुत्र प्रसवे दिन ७ सात और पुत्री प्रसवे दिन ८ आठ असज्झाय।

३३ कालग्रहण बिना किये पढ़ना गुणना नही, प्रहर १२ बारा असज्झाय ।

३४ वैशाख बदि १ श्रावण बदि १ कार्तिक बदि १ मागसर बदि १ ये चार महापड़वाकी असज्झाय सूत्र को असज्झाय तो प्रहर बारा—विशेष ग्रन्थन्तरसे जानना ।

॥ वस्तु-काल-विचार ॥

चावल प्रहर ८, राब प्रहर १२, घेस प्रहर २०,

छाश प्रहर २४, दही प्रहर १६ दूध प्रहर ४, कांजीवडा प्रहर २४, घोलवड़ा प्रहर ४, तल्यावडा प्रहर ४, पुड़ी प्रहर ८, रोटी प्रहर ४ तथा ६, बाजरा उष्ण प्रहर १२, जवार उष्ण प्रहर १२, बाजरीकी खोचडी प्रहर ८, जवारकी खीचडो प्रहर ८, चावलकी खोचडी प्रहर ४

सियाले आटा दिन १०, उन्हाले दिन ८, वरषाले दिन ५-सियाले पक्वान दिन ३० उन्हाले दिन १५, वरषाले दिन ७-उन्हाले फासुलूण दिन ८, सियाले दिन ५, वरषाले दिन ३ तीन=उन्हाले फासु घी दिन ५, सियाले दिन ८, वरसाले दिन—३उन्हाले उष्ण जल प्रहर ५, सियाले प्रहर ४, वरषाले प्रहर ३ तीन ।

सर्व अनाजकी घूघरी पानीमें भिजोई हुई प्रहर ८,

पानी का उसेही घूघरी १८ प्रहर, घी तेलकी तली हुइ घूघरी २०—२४ प्रहर, वडी प्रहर ८ कढो प्रहर ४, सर्व दाल प्रहर ४—६, रायता प्रहर ८, घीकी तली (वस्तु) १६ प्रहर।

इस प्रकार कालसे उपरान्त वस्तु चलित रसवाली हो जाती है, अथवा देश काल के अनुसार पहले भी लीलन फूलन वाली हो जाय तो वह भो अभक्ष्य हो जातो है।

अथ श्रावकके चौदह नियम।

"सचित्त दव्व विगइ, वाणह तंबोल वत्थ कुसुमेसु।
वाहण सयण विलेवण, बंभ दिसिण्हाण भत्तेसु॥"

१ सचित्त—जिसमे जीव-सत्ता हो ऐसे हरा शाक, फल, फूल, कच्चापानी आदि।

२ द्रव्य—जितनी चोज मुंहमे आवे एसी दाल, चावल, रोटी मिठाई आदि वस्तुएँ।

३ विगय—सब विगय १० है, इनमे से मधु १, मास २, मक्खन ३, और मदिरा ४ इनका तो सर्वथा त्याग करना ही चाहिये और षड्रस घी, तेल, दूध दही, गुड और खाड़ (सक्कर) इनका तथा घोसे बनाई हुई मोठाई उगैरह का प्रमाण रखना।

४ उपानह—जूता, मोजा आदि जो चीजे पांव मे पहनी जाय।

५ तबोल—पान, सुपारी, इलायची आदि।

६ वस्त्र—जो पहिनने ओढने मे आवे ऐसे व९
आभूपण आदि ।

७ कुसुम—जो सुँघने मे आवे ऐसी फूल, इतर
वस्तुएँ ।

८ वाहन—हाथी, घोडा, बैल, गाडी, मोटर, ·
आदि किसी प्रकार की सवारी ।

९ शयन—शय्या, बिछौना, पलग, कुरसी आदि

१० विलेपन—केशर, चन्दन, सुगध, तेल अ।
चीजे शरीर पर लगाई जावे ।

११ ब्रह्मचर्य—परस्त्रीका सर्वथा त्याग और अ
स्त्रीसे भी सूई डोरे के न्याय से तथा बाह्य वि
का प्रमाण करना ।

१२ दिशा—दिशा और विदिशा मे लम्बा-चौडा, ऊं
नीचा जाने का माप रखना ।

१३ स्नान—नहाने और हाथ पैर धोने का प्रमाणरख

१४ भत्त—अन्न पानी आदि चारो अहारोमे से ८
लिये जितना चाहिये उसका तौल रखना ।

छह काय

१—पृथ्वीकाय—मिट्टी, नमक आदि जो खाने व उपभे
मे आवे उसका प्रमाण रखना ।

२—अप्काय—जो पानी नहाने धोने व पीने के क
मे आवे उसका वजन रखना ।

३—तेउकाय - चूल्हा, भट्टी, चिराग, अगीठी आदि का प्रमाण करना ।

४— वाउकाय—अपने हाथ से व हुकुम से जितने पखे चलाने मे आवे उनकी गिनती रखना ।

५—वनस्पतिकाय—हरा शाक फल आदिका वजन और इतनी जाति के खाने का प्रमाण करना ।

६—त्रसकाय—त्रस जीवो को मन, वचन काया से जानकर कभी नही मारना, अजाण का मिच्छामि दुक्कड देना ।

तीन कर्म

१—असि—तलवार, बंदूक, चाकू, कैंची आदि शस्त्र रखने की संख्या रखनी ।

२—मसि–कागज, कलम, दवात आदिका प्रमाणरखना

३—कृषि—खेतो, बगीचा आदिका प्रमाण करना ।

इन नियमो को पालन करने से जीव पापो के बोझ से हलका रहता है । यह विना किसी तकलीफके पापो से बचनेका एक सरल उपाय है । इन नियमो का प्रतिदिन स्मरण करने से आत्मा परम शांति पद प्राप्त करता है ।

चौदह नियम चितारने वाले श्रावक—श्राविकाएं प्रातःकालमे सूर्योदयके समय और सायंकालमे सूर्यास्तके समय, शुद्ध भूमि-पर बैठकर प्रथम तीन नवकार गिनके बाद मे चौदह नियमोको चिन्तवन करे ।

अथ सज्झाय संग्रह ।

॥ निंदावारक सज्झाय ॥

॥ निंदा म करजो कोईनी पारकी रे, निंदानां बोल्यां महा-पाप रे ॥ वयर विरोध वाधे घणो रे, निंदा करतॉ न गणे माय बाप रे ॥ निं० ॥१॥ दूर बलंती कां देखो तुम्हें रे, पगमा बलती देखो सहु कोय रे ॥ परना मैंलसां धोयॉ लूगडॉ रे, कहो केम ऊजलाँ होय रे ॥ निं० ॥ आप संभालो सहुको आपणोरे, निंदानी मूको परी टेव रे ॥ थोडे घणे अवगुण सहु भर्या रे, केहनॉ नलीयॉ चुए केहनॉ नेव रे ॥ निं० ॥ ३ ॥ निंदा करे ते थाये नारको रे, तप जप कीधुँ सहु जाय रे ॥ निंदाकरो तो करजो आपणी रे, जेम छूटकवारो थाय रे, ॥ निं० ॥ ४ ॥ गुण ग्रहजो सहुको तणो रे, जेहमॉ देखो एक विचार रे ॥ कृष्णपरे सुख पामशो रे, समयसुन्दर सुख-कार रे ॥ निं० ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ श्री सीताकी सज्झाय ॥

॥ झलजलती मिलती घणी रे, झाली झाल अपार रे ॥ सुजाण सीता ॥ जाणे केसू फूलियाँ रे लाल, राता

खैर अंगार रे ॥ सु० ॥ ॥ १ ॥ धीज करे सीता सतीरे लाल ॥ शीलतणे परिमाण रे ॥ सु० ॥ लक्ष्मण राम खुशी थया रे लाल, निरखे राणो राण रे ॥सु० ॥ २ ॥ स्नान करी निरमल जले रे लाल, पावक पासे आयरे ॥ सु० ॥ ऊभी जाणे सुरांगना रे लाल, अनुपम रूप दिखाय रे ॥ सु० ॥ ३ ॥ नर नारी मिलियाँ घणां रे लाल, ऊभा करे हाय हाय रे सु० भस्म हुसी इण आग में रे लाल, राम करे अन्याय रे ॥ सु० ॥ ४ ॥ राघव विन वाँछ्यो हुवे रे लाल, सुपनेही मंहि कोय रे ॥सु०॥ तो मुझ अगन प्रजालजो रे, लाल, नहिं तो पाणी होय रे ॥ सु० ॥५॥ इम कही पेठी आगमें रे लाल, तुरत अगन थयो नीर रे ॥ सु० ॥ जाणे द्रह जलशुं भर्यो रे लाल, झीले धरम सुधीर रे ॥ सु० ॥६॥ देव कुसुम-वरसा करे रे लाल, एह सती सिरदार रे ॥ सु० ॥ सीता धीजे उतरी रे लाल, साख भरे संसार रे ॥ सु० ॥ ७ ॥ रलियात सहुको थयां रे लाल, सघले थया उछरंग रे ॥ सु० ॥ लक्ष्मण राम खुशी थया रे लाल, सीता शील सुरंग रे ॥ सु० ॥ ८ ॥ जगमांहे जस जेहनो रे लाल,

अविचल शील कहाय रे ॥ सु० ॥ कहे जिनहर्ष सती तणा रे लाल, नित प्रणमीजे पाय रे ॥ सु० ॥ ६ ॥

॥ अनाथी ऋषिकी सज्झाय ॥

॥ श्रेणिक रयवाडी चढ्यो, पेखियो मुनि एकंत ॥ वर रूप-कान्ते मोहियो, राय पूछे रे कहो विरतंत ॥१॥ श्रेणिकराय हुं रे अनाथी निग्रंथ ॥ तिणमें लिधो रे साधुजीनो पंथ ॥ श्रे० ॥ ए आंकणी ॥ इण कोसंबी नगरी वसे, मुझ पिता परिगल धन्न ॥ परवार पूरें परवर्यो हुं छुं, तेहनो रे पुत्र रतन्न ॥ श्रे० ॥ २ ॥ एक दिवस मुझ वेदना, उपनी ते न खमाय ॥ मात पिता सहु झुरी रह्या, तोही पण रे समाधि न थाय ॥श्रे० ॥३॥ गोरडी गुण मणि ओरडी, छोरडी अबला नार ॥ कोरडी पीडा में सही, नहीं कीधी रे मोरडी सार ॥श्रे०॥४॥ बहुराजवैद्य बुलाईया, कीधला कोडी उपाय ॥ बावन चंदन चरचीया, पण तोही रे दाह नवि जाय ॥ श्रे०॥५ ॥ वेदना जो मुझ उपशमे, तो लेउं संजमभार ॥ इम चिंतवतां वेदना गई, व्रत लीधो रे हरष अपार ॥ श्रे० ॥ ६ ॥ जगमांहे को केहनो नहिं, ते भणी हुँ रे अनाथ ॥ वीतरागनो

धरम वाहरो, कोई नहीं रे मुगतिनो साथ ॥ श्रे० ॥७॥ कर जोडी राजा गुण स्तवे, धन धन तुं अणगार ॥ श्रेणिक समकित तिहां लहे, वाँदी पहुंचे रे नगर मझार ॥ श्रे० ॥८॥ मुनिवर अनाथी गुण गावताँ, कर्मनीतूटे कोडि ॥ गणि समयसुन्दर तेहना, पाय वाँदे रे वे कर जोडि ॥ श्रे० ॥९॥ इति ॥

॥ श्री जंबुद्वीप वा पूनम की सज्झाय ॥

जंबद्वीप सोहामणोरे लाल, लाख जोजन परिमाणरे सुगुण नर। पूनम शसि सम जाणियेरे लाल॥ आकार एह पहिचाणरे ॥ सु० ॥१॥ वारि जाउं वाणी जिनतणीरे लाल, हुं जाउं वार हजाररे ॥ सु० ॥ वीर जिणंदे दाखवीरे ॥ ला० ॥ जंबूपन्नती मझाररे ॥ सुगुण० ॥ २ ॥ नवखेत्रे करी सोभतोरे ला० ॥ भरतादिक मनुहाररे ॥ सु० ॥ कुलगिरि परवत अंतरेरे ॥ ला० ॥ रह्या मर्यादा धाररे ॥ सु० ॥ वा० ३ ॥ महाविदेहे विच राजतोरे, ला० मेरु सुदर्शन जाणरे ॥ सु० ॥ लाख जोजन ऊंचो कह्योरे ॥ लाल ॥ गजदंता चार पहिचाण रे ॥सु० ॥ वा० ॥४॥ पन्नरह गिरिवर सहु भला रे दोय सें गुणसत्तरएहरे ॥सु०॥ निवेनदी मोटी कहीरे ॥ ला० ॥ नीजा परिवारनी

तेहरे ॥ सु० ॥ वा० ॥५॥ कर्म-भूमिमें मुनिवरारे, क्रोड सहस्स नवजाण रे ॥ सु० ॥ नव कोडी केवली नमुँरे ॥ ला० ॥ उत्कृष्टो परिमाण रे ॥ सु० ॥ वा० ॥६॥ धर्म ध्याननो जाणिये रे लाल, चोथो भेद अभिरामरे ॥ सु० ॥ कृपाचन्द्र ध्यातां थकांरें ॥ ला० ॥ पामे अविचल धामरे ॥ सुगु० वारि ७ ॥ इति ॥

॥ श्री समकित की सज्झाय ॥

समकित नवि लह्युँ रे, एतो रुल्यो चतुर्गतिमांहे ॥ त्रसथावरकी करुणा कीनी, जीव न एक विराध्यो ॥ तीनकाल सामायिक करतां सुध उपयोग न साध्यो ॥ समकित० ॥१॥ झूठ बोलवाको व्रत लीनो, चोरीकोपण त्यागी ॥ व्यावहारादिक महानिपुण भयो पण, अंतरदृष्टि न जागी ॥ समकित० ॥२॥ उरधभुजा करी उंधो लटके, भसमी लगाय धूम गटके ॥ जटा जूट सिर मूँडे जूठो, बिन श्रद्धा भव भटके ॥ समकित० ॥३॥ निज-परनारी त्यागज करके, ब्रह्मचर्य व्रत लीधो ॥ स्वर्गादिक याको फल पामी, निज कारज नवि सिधो ॥ समकित० ॥४॥ बाह्य क्रिया सब त्याग परिग्रह, द्रव्य-

लिंग धर लीनो ॥ देवचन्द्र कहे या विध तो हम वहुत चार कर लीनो ॥ समकित० ॥५॥ श्री समकितनी-सज्झाय सम्पूर्ण ।

॥ प्रतिक्रमण की सज्झाय ॥

कर पडिक्कमणो भावशुं, दोयघडी शुभ ध्यान ॥ लाल रे ॥ परभव जातां जीवने, संबल साचुं जाण ॥ लाल रे ॥१॥ कर पडिक्कमणुं ॥ ए आंकणी ॥ श्रीमुख वीर समुच्चरे, श्रेणिक-राय प्रतिबोध ॥ ला० ॥ लाख खंडी सोना तणी, दोये दिनप्रति दान ॥ ला० ॥२॥ कर० ॥ लाख वरस लग ते वली, एम दीये द्रव्य अपार ॥ ला० ॥ इक सामायिकनी तुला, नावे तेह लगार ॥ ला० ॥३॥ कर० ॥ सामायिक चउविसत्थो, भलु वंदन दोय दोय वार ॥ लाल रे ॥ व्रत संभागे आपणां, ते भव कर्म निवार ॥ लाल रे ॥४॥ कर० ॥ कर काउ-स्सग्ग शुभ ध्यानथी, पच्चक्खाण सूधुं विचार ॥ लालरे ॥ दोय संध्यायें ते वली, टालो टालो अतिचार ॥ लालरे ॥ ५॥ कर० ॥ सामायिक परसादथी, लहियें अमर विमान ॥ ला० ॥ धरमसिंह मुनिवर कहे : मुगति तणु ए निधान ॥ ला० ॥६॥ कर० ॥ इति प्रतिक्रमण निज्झाय ॥

॥ श्री ढंढण ऋषिजी की सज्झाय ॥

ढंढण ऋषिजीने वंदणा हुं वारी ॥ उत्कृष्टो अण गाररे ॥ हुं वारी लाल ॥ अभिग्रह लीधो एहवो ॥हुँ० लेश्युँ सुद्ध आहाररे ॥ हुँ० ॥१॥ ढं० ॥ नितप्रति गोचरी ॥ हुं० ॥ न मिलै शुद्ध आहाररे ॥ हुं० मूल न ले अणसूझतो ॥ हुं० ॥ पंजर कीधो गातरे हुं० ॥२॥ ढं० ॥ हरि पूछे श्रीनेमिने ॥ हुं० ॥ सहस अठार रे ॥हुं०॥ उत्कृष्टो कुण एहमें ॥ हुं० ॥ कहो विचाररे ॥हुँ०॥ ढंढ० ॥३॥ ढंढण अधिको ॥ ॥ हुँ० ॥ श्रीमुख नेमि जिणंदरे ॥ हुँ० ॥ कृष्ण वांदवा ॥ हुँ० ॥ धन यादव कुलचन्दरे ॥ हुं० ॥ ४ ॥ ढं० ॥ गलियारें मुनिवर मिल्या ॥ हुं० ॥ कृष्णनरेसरे ॥ हुँ० ॥ किणही मिथ्यात्वी देखने ॥ हुं० आण्यो भावविसेसरे ॥हुं० ॥५॥ मुझ घर आवो ॥ हुं० ॥ ल्यो मोदक छै सुद्धरे ॥ हुं० ॥ मुनिवर पांगुस्या ॥ हुं० ॥ आया प्रभुजी ने पासरे ॥ हुं० ६ ढं० ॥ मुझ लब्धै मोदक मिल्या ॥ हुं० ॥ कहोने किरपालरे ॥ हुं० ॥ लब्धि नही वत्स ताहरी ॥ हुं०

श्रीपति लब्धि निहालरे ॥ हुं० ॥७॥ ढं० ॥ ए लेवा जुगतो नहीं ॥ हुं० ॥ चाल्या परठश काजरे ॥ हुं० ॥ ईंट नीवाहैं जायनें ॥ हुं० ॥ चूरं करम समाजरे ॥ हुं० ॥ ८॥ आणी सूधीभावना ॥ हुं० ॥ पाम्यो केवल नाणरे ॥ हुं० ॥ ढंढणरिषि मुगतें गया ॥ हुं० ॥ कहे जिनहर्ष सुजाणरे ॥ हुं० ।९॥ ढं० ॥

॥ अरणकमुनिकी सज्झाय ॥

अरणक मुनिवर चाल्या गोचरी । तडकै दाझै सीसोजी । पाय उभाणारे वेलू परजलै । तन सुकुमाल मुनीसो जी ॥ अ० ॥१॥ मुख कमलाणांरे मालती फूलज्युं । उभो गोखने हेठोजी । खरै दुपहुंरे दीठो एकलो, मोही माननी मीठोजी ॥ अ० ॥२॥ वयण रंगीली रे नयणे विंधीयो । रिषि थंभ्यो तिण ठारोजी । दासीनें कहै जाय उतावली । रिषि तेडी घर आणो जी ॥ अ० ॥३॥ पावन कीजै रिषि घर आंगणो । वहिरो मोदक सारो जी । नव जोवन रस काया कांइ दहो । सफल करो अवतारो जी ॥४॥ अ० ॥ चन्द्रावदनीरे चारित्र चूकव्यो । सुख विलसै दिन रातो जी । इकदिन

गोखे रमतो सोगटै। तव दीठी निज मातो जी ॥५॥ अ० । अरणक अरणक करती माय फिरै । गलियै • ियै मझारो जी । कहिं किण दीठोरे माहरो अरणलो । पूछै लोक हजारो जी ॥६॥ अ० ॥ उतरी तिहांथीरे जननी पाय नम्यो । मनमें लाज्यो तिवारोजी । धिग् ि• पापी रे माहरा जीवने । एहमें अकारज कीधो जी ॥७॥ अ० ॥ अगन धुखंती रे सीला उपरै । अरणक अ • • कीधो जी । समयसुन्दर कहै धन ते मुनिवरू । मनवंछित फल सीधोजी ॥८॥ अरणक मुनि सज्झाय संपूर्णम् ।

॥ श्री भरतचक्रवर्त्तिकी सज्झाय ॥

भरतजी मनहीमें वैरागी । भरतजी म० ॥ टेक ॥ सहस बत्तीस मुगटबद्ध राजा । सेवा करै बडभागी । चोसट्ठ सहस अंतेउर जाके । तोही न हुवा अनुरागी । भरतजी मनहीमें वैरागी ॥१॥ लाख चोरासी तुरंगम जाके छन्नु कोड है पागी । लाख चोरासी गजरथ सोहिये । सुरता धरम सु ं लागी ॥ भर० ॥२॥ च्यारकोड मण अन्नज रान्धे । लॅंण दश लाख मण लागे । तीनकोड

गोकुल नित दूझे। एक कोडि हलसागे। भर०।३॥ सहस बत्तीस देस वडभागी। भए सरभके त्यागी छन्नु कोड गांमके अधिपति। तोहि न हुआ अनुरागी।भर०। ४। नव निधि रतन चउगडा वाजे। मन चिंता सरव भागी। कनककीरत मुनिवर वंदत हे। दीजो सुमति में मांगी।५। भर०। इति भरतजी की स्वाध्याय।

॥ अथ सिद्धगिरि स्तवन ॥

श्री विमलाचल शिर तिलो। आदीसर अरिहंत। जुगला धरम निवारणो। भयभंजण भगवंत।१। श्री०। मुझ मन उलट अतिघणो (रे), सो दिन सफल गिणेस। स्वामी श्रीरिसहेसरू। जव नयणे निरखेस।२। श्री०। जंगम तीरथ विहरता। साधुतणे परिवार। आदिजिणंद समोसर्या। पूरव निनाणु वार।३। श्री०। अन्तिग विजया नंदनो। जगवंधव जग तात। इण गिरि चउमासे रह्या। थिवर कहे ए वात।४। श्री०। पामे शिरसुख सासता। गणधर श्री पुंडरीक। पुंडरगिरि तिण कारणें भगति करो निरभीक।५। श्री०। नमि ने निनमि सहोदरु। विद्याधर बलवंत। सेत्रुंजे सिखर

समोसर्या, जे गिरुवा गुणवंत ।६। श्री० । थावच्चा मुनिवर सुक । सहस २ परिवार । पंथग वयणे जागियो। सो सेलग अणगार ।७। श्री० । पांडव पांच महाबली । सुणीजादव निरवाण । ते सीधा सिद्धाचलै । सुर नर करै वखांण ।८। श्री० । इम सीधा इण डुँगरे । मुनिवर कोडाकोडि । पाज चढंता सांभरे । ते वंदुं वे कर जोडि ।९। श्री० । जे वाघण प्रतिबूझवी । ते दरवाजे जोय । गोमुख यक्ष कवड मिली । सानिधकारी होय ।१०। श्री० । जे विधिशुं यात्रा करै। सुर नर सेवक तास । राजसमुद्र गुण गावतां । अविचल लीलविलास ।११। श्री० ॥

॥ अथ श्री रिषभ जिनेसर स्तवन ॥

ऋषभ जिनेसर दिनकर साहिब । विनतडी अवधारो रे ॥ जगना तारू मुझ तारो जी कृपानिधिस्वामी ॥ जग जसवाद प्रगट छै ताहरो । अविचल सुख दातारो रे ॥ ज० ॥१॥ मु० ॥ निज गुण भोक्ता पर गुण लोभा । आतम सगति जगाया रे ॥ ज० ॥ अविनासी अविचल अविकारी । शिववासी जिनराया रे ॥

ज० ॥ २ ॥ मु० ॥ इत्यादिक गुण श्रवणे निसुणी, हुं तुज चरणे आयो रे ॥ ज० ॥ तुम रीझावण हेतं ततखिण । नाटक खेल मचाया रे॥ज० ॥३॥ मु०॥ काल अनंत रह्यो एकेंद्री । तरु साधारण पामी रे ॥ज०॥ वरस संख्याता वलि विकलेंद्री । वेष धर्यो दुःख धामी रे ॥ज०॥४॥मु०॥ सुर नर तिरि वलि नरक तणी गति । पंचेंद्रिपणो धायो रे । ज०॥ चावीसे दंडकमांहि भमतो । अब तो हुं पिण हार्यो रे ॥ ज० ॥५॥मु०॥ भवनाटक नितप्रति करतो नव नव, हुं तुझ आगलि नाच्यो रे ॥ ज० ॥ समरथ साहिब सुरतरु सरिखो । निरखी तुझने जाच्यो रे ॥ ज० ॥६॥ मु० ॥ जो मुझ नाटक देखी रीझ्या । तो मुझ वंछित दीजे रे ॥ ज० ॥जो नवि रीझ्या तो मुझ भाखो । वलि नाटक नवि कीजे रे ॥ ज० ॥ ७ ॥ मु० ॥ लालच धरी हुं सेवा सारुं । तुं दुःखडा नवि कापे रे ।ज०॥ दाता सेती सूम भलेरो । वहिलो उत्तर आपे रे ॥ ज० ॥ ८ ॥ मु०॥ तुझ सरिखा साहिब पिण माहरे । जो नवि कारज सारो रे ॥ज०॥ तो मुझ करम तणी गति अवलो । दोस न कोई तुमारो रे ॥ ज० ९ ॥ मु०॥ दीनदयाल पाद

करी दीजै । सुध समकित सहिनाणी रे ॥ ज० ॥ सुगुण सेवकना वंछित पूरो । तेहीज गुण मणिखाणी रे॥ज०॥ १० ॥ मु० ॥ वर्ष अढारै गुणतालीसै । ज्येष्ठ सुदी सोम वारो रे ॥ ज० ॥ लालचंद प्रतिपदा दिन भेट्या । बीका-नेर मझारो रे ॥ ज० ॥ ११ ॥ मु० ॥

॥ पर्युषण स्तवन ॥

॥ पर्व पजुसण पुन्ये पामीयारे । आराधो सुभ भावे सुजाण रे ॥ जिन शासनमां पर्व वखाणीए रे । लोको-त्तर गुणखाण रे ॥ पर्व० ॥१॥ अट्ठाइ महोच्छव करे नंदीसरे रे । सहु इंद्रादिक मनुहार रे ॥ तिम भविभाव भलेथी इहां करो रे । जिनपूजन सुखकाररे ॥ पर्व० ॥२॥ पहिले दिन उपवास भलीपरेरे । ज्ञान भक्ति करो पवित्र रे ॥ पर्व० ॥३॥ दुजे दिन सहु संघ मिले भलो रे । वाजित्र हय गय रथ परिवाररे ॥ पुस्तक उच्छव करीगुरु पासमां रे ॥ आणी आपो सुखकाररे ॥ पर्व० ॥ ४ ॥ त्रीजे दिन सहु पुस्तक पूजीने रे । सांभलो कल्पसूत्र जिन वाणरे ॥ आश्रव पांच निवारो भविजनारे । पालो जिनवरकेरी आणरे ॥ पर्व० ॥ ५ ॥ चोथे दिन चतुर

चित्तमां धरो रे। जिन भक्ति विविध प्रकाररे ॥ पूजा प्रभावना करी शासन तणी रे। शोभा वधारो सुविचार रे ॥ पर्व० ॥ ६ ॥ पांचमे दिवस महोच्छव जन्मनो रे। वरते धवल मंगल सुप्रसिधरे। पालणो वीर प्रभुनो गायने रे। जिनवर भक्ति करी जस लीधरे ॥ पर्व० ॥ ७ ॥ वीर चरित्र सुणो छट्ठे दिनेरे। मध्याने पारस नेमी वखाणरे ॥ आंतराकाल सांभली भावनु रे। पच्छानुपूर्वि करी सुजाणरे ॥ पर्व० ॥ ८ ॥ दिन सातमे आदि चरित्र वखाणतारे। निसुणो थविरतणो चरित्ररे ॥ आठमे दिन समाचारी साधुतणी रे। सांभलो भवि कल्पसूत्ररे ॥पर्व०॥ ॥ ९ ॥ चैत्यप्रवाडी संघ मिली करो रे। छुटो सुहृत-करो मेहरे ॥ संवत्सरी पडिकमणा में खमावीएरे। छठ अठम करो गुण गेहरे ॥ पर्व० ॥ १० ॥ असारो पल्लावी-जीव यत्ना भणी रे। शासन-उन्नति करो सुविनीतरे ॥ इणपरे पर्व आराधो भविजनारे। कृपाचन्द शासननी ए रीतरे ॥ पर्व० ॥ ११ ॥ इति पर्युषण स्तवनं ॥

करी दीजै । सुध समकित सहिनाणी रे ॥ ज० ॥ सुगुण सेवकना वंछित पूरो । तेहीज गुण मणिखाणी रे॥ज०॥ १० ॥ मु० ॥ वर्ष अढारै गुणतालीसै । ज्येष्ठ सुदी सोम वारो रे ॥ ज० ॥ लालचंद प्रतिपदा दिन भेट्या । बीकानेर मझारो रे ॥ ज० ॥ ११ ॥ मु० ॥

॥ पर्युषण स्तवन ॥

॥ पर्व पजुसण पुन्ये पामीयारे । आराधो सुभ भावे सुजाण रे ॥ जिन शासनमां पर्व वखाणीए रे । लोकोत्तर गुणखाण रे ॥ पर्व० ॥१॥ अट्ठाइ महोच्छव करे नंदीसरे रे । सहु इंद्रादिक मनुहार रे ॥ तिम भविभाव भलेथी इहां करो रे । जिनपूजन सुखकाररे ॥ पर्व० ॥२॥ पहिले दिन उपवास भलीपरेरे । ज्ञान भक्ति करो पवित्र रे ॥ पर्व० ॥३॥ दुजे दिन सहु संघ मिले भलो रे । वाजित्र हय गय रथ परिवाररे ॥ पुस्तक उच्छव करीगुरु पासमां रे ॥ आणी आपो सुखकाररे ॥ पर्व० ॥ ४ ॥ त्रीजे दिन सहु पुस्तक पूजीने रे । सांभलो कल्पसूत्र जिन वाणरे ॥ आश्रव पांच निवारो भविजनारे । पालो जिनवरकेरी आणरे ॥ पर्व० ॥ ५ ॥ चोथे दिन चतुर

चित्तमां धरो रे । जिन भक्ति विविध प्रकाररे ॥ पूजा प्रभावना करी शासन तणी रे । शोभा वधारो सुविचार रे ॥ पर्व० ॥ ६ ॥ पांचमे दिवस महोच्छव जन्मनो रे । वरते धवल मंगल सुप्रसिधरे । पालणो वीर प्रभुनो गायने रे । जिनवर भक्ति करी जस लीधरे ॥ पर्व० ॥ ७ ॥ वीर चरित्र सुणो छठे दिनेरे । मध्याने पारस नेमी वखाणरे ॥ आंतराकाल सांभली भावसुंरे । पच्छानुपूर्वि करी सुजाणरे ॥ पर्व० ॥ ८ ॥ दिन सातमे आदि चरित्र वखाणतारे । निसुणो थविरतणो चरित्ररे ॥ आठमे दिन समाचारी साधुतणी रे । सांभलो भवि कल्पसूत्ररे ॥पर्व०॥ ॥ ९ ॥ चैत्यप्रवाडी संघ मिली करो रे । वुठो सुकृत-केरो मेहरे ॥ संवत्सरी पडिक्कमणा में खमावीएरे । छठ अठम करो गुण गेहरे ॥ पर्व० ॥ १० ॥ अमारी पलावी-जीव यत्ना भणी रे । शासन--उन्नति करो सुविनीतरे ॥ इणपरे पर्व आराधो भविजनारे । कृपाचन्द शासननी ए रीतरे ॥ पर्व० ॥ ११ ॥ इति पर्युषण स्तवनं ॥

॥ अष्टापदगिरि स्तवनम् ॥

॥ मनडो अष्टापद मोह्यो माहरो जी, नाम जपूं निशि दीस जो ॥ चत्तारी अट्ठ दस दोय वंदीयै जी, चिहुं दिशि जिन चोवीश जी ॥म० ॥१॥ जोजन जोजन अंतरे जी, पावडशाला आठ जी । आठ जोजन ऊंचुं देहरुं जी, दुःख दोहग जाये नाठ जी ॥ म० ॥२॥ भरते भराया भला देहरा जी, सो भायांरा थुंभ जी ॥ आप मूरत सेवा करे जी, जाण जोईने ऊभ जी ॥ म० ॥३॥ गोतमस्वामी तिहां चढ्या जी, वली भगीरथ गंग जी ॥ गोत्र तीर्थंकर बांधीयां जी, रावण नाटक रंग जी ॥म० ॥४॥ देवे न दीधी मुजने पांखडी जी, आवुं केम हजूर जी । समयसुंदर कहे वंदना जी, प्रह उगमते सूर जी ॥ म० ॥ ५ ॥

॥ शंखेश्वर पार्श्व स्तवनम्

॥ अंतरजामी सुण अलवेसर, महिमा त्रिजग तुमारो। सांभलीने आव्यो तुम तीरे, जनम मरण भय वारो ॥१॥ सेवक अरज करे छे राज, अमने शिवसुख आलो ॥ ए आंकणी ॥ सहुकोनां मनवांछित पूरो, चिंता सहुनीचूरो ॥ एह बिरुद छे राज तुमारुं, किम राखो छो दूरो ॥

सेवक० ॥ २ ॥ सेवकने वलवलतो देखी, मनमां महेर न धरशो ॥ करुणासागर केम कहेवाशो, जो उपगार न करशो ॥ सेवक० ॥ ३ ॥ लटपटनुं हवे काम नहीं छे, परतक्ष दरिसण दीजें ॥ धुॅवाडे धीजुं नहीं साहिब, पेट पड्याँ पतीजे ॥ सेवक० ॥ ४ ॥ श्री संखेसरमंडण साहिब विनतडी अवधारो ॥ कहे जिनहर्ष मया करी मुझने, भवसायरथी तारो ॥ सेवक० ॥ ५ ॥

॥ श्री पार्श्वजिन स्तवन ॥

प्राण पियारा जी हो पासजी, किम मेलुं किरतार ॥ जिनेसर ॥ साहिब वसीया जीहो शिवपुरी, हुॅ इण भरत मझार ॥ जि० ॥ प्राण० ॥ १ ॥ आडो अन्तर जीहो अति घणो, सेंगु न मिले साथ ॥ जि० ॥ लिख संदेशा जीहो लाडला, कागल द्युं किण हाथ ॥ जि० ॥प्राण०॥ २ ॥ रमता थे म्हे जीहो एकठा, दिनमें दश दश वार ॥ जि० ॥ केइक दिन लग जीहो एकठा, मिलता घणी मनुहार ॥ जि० ॥ प्राण० ॥ ३ ॥ अवतो मिलणो जीहो अवसरें, मिलशे सुकृत संयोग ॥ जि० ॥ तो पण क्षण क्षण जीहो सांभरे, वाला तणो रे वियोग ॥ जि०॥प्राण०

॥ ४ ॥ मिलस्यां जिन दिन जीहो मन रली, फलशे ते दिन आश ॥ जि० ॥ चंद मुनिंद कहे जीहो चित्तमें, वसजो प्रभु सुखवास ॥ जि० ॥ प्रा० ५ ॥ इति ॥

॥ श्री जिनप्रतिमा स्तवन ॥

॥ श्री जिनप्रतिमा हो जिन सारखी कही, ए दीठां आनंद; समकित विगडे हो शंका कीजतां, जिम अमृत विष बिंद ॥ १ ॥ आज नहीं छे हो कोई तीर्थंकर इहां, न कोइ अतिसयवंत; श्री जिन-प्रतिमानो हो एक आधार छे, आपे मुगति एकंत ॥ श्री० ॥२॥ सूत्र सिद्धांत हो तर्क व्याकरण भण्या, पंडित पण कहे लोक; श्री जिनप्रतिमाने हो जे माने नहि, तेहनो सघलो फोक ॥श्री० ॥३॥ जिन प्रतिमा हो आगे नमोत्थुणं कहे, पूजा सत्तर प्रकार , फल पिण बोल्या हो, हित सुख मोक्षना, द्रोपदीने अधिकार ॥ श्री० ॥ ४ ॥ रायपसेणी हो ज्ञाता भगवती जिवाभिगमनइं मांझ; ए सूत्र माने हो प्रतिमा माने नहीं, माहरी मांने वलि बांझ ॥ श्री० ॥ ५ ॥ साधुने बोल्या हो भावस्तवन भला, श्रावकोने द्रव्य भाव ; ए बिहुं करणी हो करतां निस्तरै, जिनप्रतिमा सुप्रभाव ॥ श्री०॥

॥६॥ पारसनाथ हो तुझ प्रसादथी, सद्दहणा मुज एह ; भव भव होजो हो समयसुंदर कहे, श्रीजिनप्रतिमासुँ नेह ॥ श्री० ॥ ७ ॥

॥ नवपद स्तवन ॥

श्री नवपद आराधो, मनवाँछित कारज साधो रे ; भवियाँ श्रीनवपद आराधो ॥ए टेर॥ पद पहिले अरिहंत ध्यावो, जिम अरिहंत पदवी पावो रे ॥ भ० श्री० ॥ पद दुजे सिद्ध मनावो, जिम सिद्ध सरूपी होई जावो रे ॥ भ० श्री० ॥ सूरि त्रीजे गुणवंता, जगनायक जग जयवंता रे ॥ भ० श्री० ॥ चोथे पद उवझाया, जिन मारग आण बताया रे ॥ भ० श्री० ॥ साधु सकल गुणधारी, पदपंचमे जग हितकारी रे ॥भ० श्री०॥ दरशण पद छट्ठे चन्दो, जेम कीरती होय चिर नन्दो रे ॥ भ० श्री० ॥ ज्ञान पद सातमे दाख्यो, चारित्र पद आठमे भाख्यो रे ॥ भ० श्री० ॥ श्रीपाल ने मयणा लीधो, नवमें भव कारज सिधो रे ॥ भ० श्री० नवपद महिमा जाणी, जिन चन्द्र हिये मन आणीरे ॥ भ० श्री० ॥ इति ॥

॥ यदंघ्रिनाम्नक थुई ॥

यदंघ्रि नमना देव, देहिनः संति सुस्थिताः। तस्मै नमोस्तु वीराय, सर्वविघ्नविघातिने ॥ १ ॥ सुरपति नत चरण युगान्। नाभेयजिनादि जिनपतीन्नौमि। यद्वचन पालनपरा, ज्जलांजलिं ददतु दुःखेभ्यः ॥ २ ॥ वदंति वृंदारुगणाग्रत जिनाः, सदर्थतो यद्रचयंति सूत्रतः। गणाधिपास्तीर्थ समर्थन क्षणे, तदंगिना मस्तु मतं नु मुक्तये ॥ ३ ॥ शक्रः सुरा सुरवरैस्सहदेवताभिः, सर्वज्ञ शासन सुखाय समुद्यताभिः। श्रीवर्द्धमान जिनदत्त मतप्रवृत्तान् भव्यान् जनान्नयतु नित्यममङ्गलेभ्यः ॥ ४ ॥

॥ इति ॥

॥ श्री वीर प्रभु स्तुति ॥

श्री देवार्य। विश्वेर्य। पूर्णानन्दं। भक्त्यावन्दे ॥१॥
तीर्थाधीशाः। शुद्धादेशाः। सर्वेभीष्टं। शंकुर्वन्तु ॥२॥
अर्हद्वाचो। वाचोयुक्त्या। क्षप्ताःसद्भिः पापं घ्नन्तु ॥३॥
शांता कान्ता। सिद्धादेवी। शान्त्यै दान्त्यै।
शश्वद्भूयात् ॥४॥

॥ श्री चिन्तामणि-पार्श्वनाथ स्तोत्रम् ॥

(शार्दूल-विक्रीड़ित छंद)

किं कर्प्पूरमयं सुधारसमयं किं चन्द्ररोचिर्मयं ।
किं लावण्यमयं महामणिमयं कारुण्य केलिर्मयम् ॥
विश्वानन्दमयं महोदयमयं शोभामयं चिन्मयं ।
शुक्लध्यानमयं वपुर्जिनपते भूयाद्‌भवालम्बनम् ॥१॥

पातालं कलयन् धरा धवलयन्नाकाशमापूरयन् ।
दिक्चक्रं क्रमयन् सुरासुरनरश्रेणिं च विस्मापयन् ॥
ब्रह्माण्डं सुशयन् जलं जलनिधेः फेन च्छलाल्लोलयन् ।
श्री चिंतामणिपार्श्व संभवयशोहंसश्चिरं राजते ॥२॥

पुण्यानां विपणिस्तमोदिनमणिः कामेभ कुम्भेश्रृणि-
र्मोक्षे निस्सरणिः सुरेन्द्र करिणी ज्योतिः प्रकाशारणिः ॥
दाने देवमणिर्नतोत्तम जन श्रेणिः कृपासारिणी ।
नेत्रानन्द सुधा घृणि र्भवभिदे श्री पार्श्व चिन्तामणिः ॥३॥

श्री चिंतामणि पार्श्व विश्व जनता संजीवनस्त्वं मया ।
दृष्टस्तावदतः श्रियः समभवन्नाथक्रमाच्चक्रिणम् ॥
मुक्तिः क्रीडति हस्तहयोर्बहुविधं सिद्धं मनोवांछितं ।
दुर्दैवं दुरितं च दुर्दिनहरं कष्टं प्रणष्टं मम ॥४॥

यस्य प्रौढ़तमप्रतापतपनः प्रोद्दामधामा जगत्।
जंघालः कलिकालकेलिदलनो मोहान्धविध्वंसकः ॥
नित्योद्योत मणि समस्त कमलाकेलिगृह राजते।
स श्रीपार्श्वजिनो जनेहितकृतौचिन्तामणिः पातुमाम् ॥५॥

विश्वव्यापितमो हिनस्ति तरणि र्बालोपिया कल्यांकुरो।
दारिद्राणि गजावलीं हरिशिशुः काष्ठानि वह्नेः कणः॥
पीयूषस्य लवोपि रोग निवहं यद्वत्तथा ते विभो।
मूर्त्तिः स्फूर्त्तिमती सतो त्रिजगती कष्टानि हर्त्तुं क्षमः ॥६॥

श्री चिन्तामणि मन्त्र मोंकृतियुतं ह्रींकार साराश्रिते।
श्री मर्हंनमिऊण पासकलित त्रैलोक्यवश्यावहम्॥
द्वेधाभूतविषापहं विषहरः श्रेयः प्रभासंश्रय।
संह्लासं वसुहाकितं जिनफुल्लिगमंत्रंनं देहिनाम् ॥७॥

ह्रींश्रींकारवरं नमोक्षर परं ध्यायन्ति ये योगिनो
हृत्पद्मेविनिवेश्य पार्श्वमधिपं चिन्तामणि संज्ञकम्।
भालेवाम भुजे च नामिकरयोर्भूयो भुजे दक्षिणे।
पश्चादष्ट दलेषुने शिवपदं द्वित्रैर्भवै यान्त्यऽहो ॥८॥

(स्रग्धरा छन्दः)

नोरोगा नैव शोका नज जलविपदो नारिमारि प्रचारी।
नैव्याधिर्नासमाधिर्न च दर दुरिते दुष्ट दारिद्रता नो॥
नो शाकिन्यो ग्रहा नो न हरि करिगणा व्यालवैताल जालाः।
जायन्ते पार्श्व चिन्तामणि मनु विशतिः प्राणिनां भक्तिभाजाम् ॥९॥

(शार्दूल-विक्रीड़ित छन्द)

गीर्वाणद्रुम धेनु कुम्भमणयस्तस्यागणे रङ्गिणो—
देवा दानव मानवाः सविनयं तस्मै हितध्यायिनः ॥
लक्ष्मीस्तस्य वशा वशेव गुणीनां ब्रह्माण्ड संस्थायिनी ।
श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ मनिशं सस्तौतियोध्यायते ॥१०॥

(मालिनी छन्द)

इति जिनपति पार्श्वः पार्श्व पार्श्वाख्य यक्षः
प्रदलित दुरितौघः प्रीणितप्राणिसार्थः
त्रिभुवन जन वाच्छा दान चिन्तामणीकः ।
शिवपद तरु बीजं बोधि बीजं ददातु ॥११॥

—:o:—

छपते-छपते चन्दा दाताओं का नाम

१०१) श्री मागीमल जी विजयमल जी लोढा
१०१) श्रीमती कमलावती अमानी